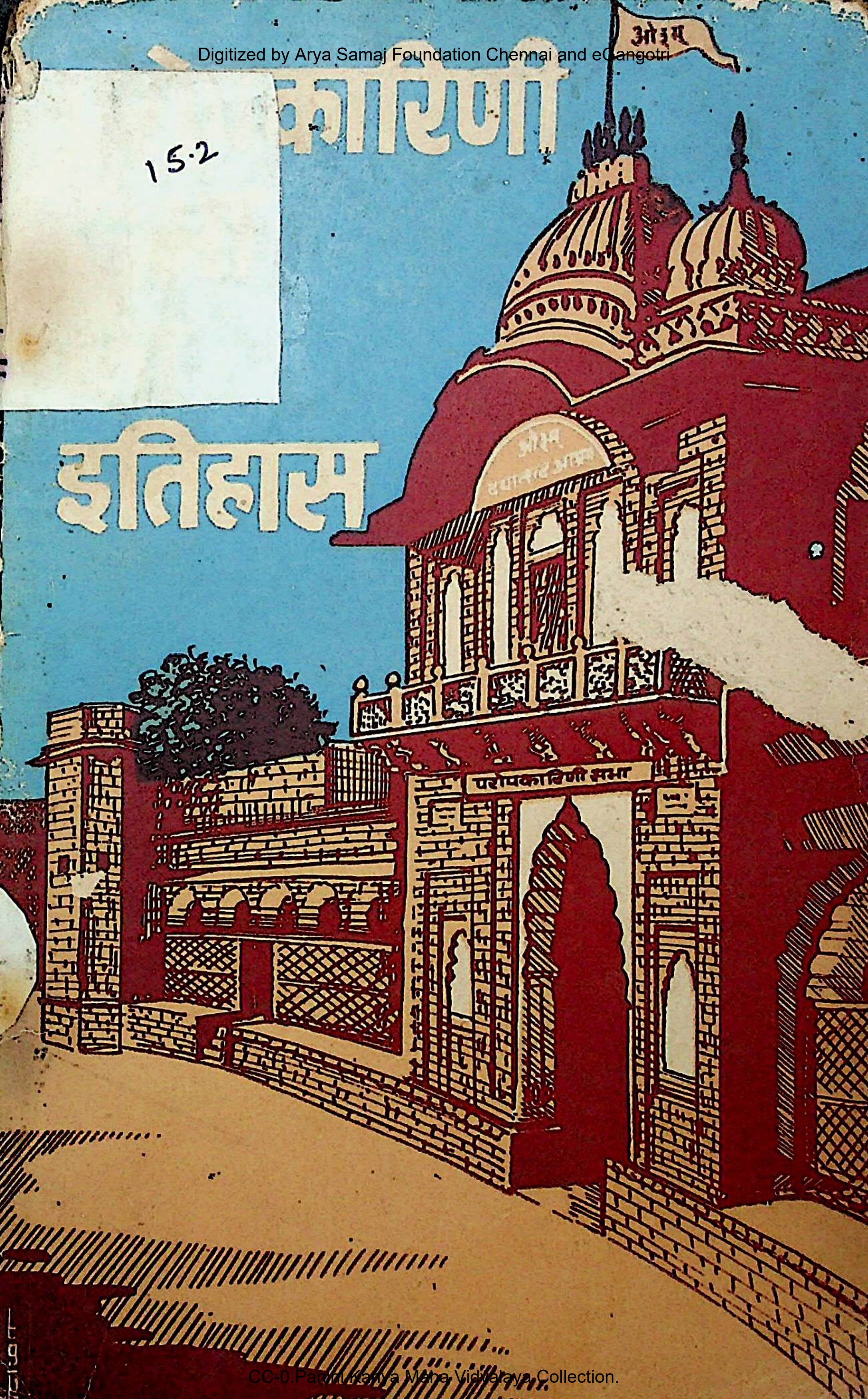

...कारिणी
इतिहास
15.2
ओ३म्
परोपकारिणी सभा

॥ ओ३म् ॥

महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा स्थापित

परोपकारिणी सभा का इतिहास

आर्यसमाज स्थापना शताब्दी के अवसर पर

'परोपकारी' मासिक का सचित्र विशेषांक

लेखक

भवानीलाल भारतीय

एम. ए. पी-एच. डी.

संयुक्त मन्त्री, परोपकारिणी सभा



परोपकारी : वर्ष १७, अंक–६

अप्रेल १९७५, चैत्र सम्वत् २०३२

प्रकाशक

मंत्री, परोपकारिणी सभा

दयानन्द आश्रम, आर्य समाज मार्ग,

केसरगंज–अजमेर–305001

परोपकारिणी सभा का इतिहास

आर्यसमाज स्थापना शताब्दी के अवसर पर
परोपकारी मासिक का सचित्र विशेषांक

परोपकारी मासिक
वर्ष १७, अंक ६
अप्रेल १९७५, चैत्र २०३२
इस अंक का मूल्य : चार रुपया

मुद्रक :
सतीशचन्द्र शुक्ल
प्रबन्धकर्त्ता, वैदिक यन्त्रालय
आर्यसमाज मार्ग, अजमेर

प्रकाशकीय वक्तव्य

भारतीय पुनर्जागरण के अद्वितीय सूत्रधार महर्षि दयानन्द ने परोपकारिणी सभा की स्थापना इस अभिप्राय से की थी कि उनके परलोक गमन के पश्चात् भी वेदादि सत्यशास्त्रों का प्रकाशन, वैदिक धर्म का प्रचार एवं अनाथ, अबला रक्षण व शिक्षण आदि का लोकोपकारी कार्य सतत चलता रहे। स्वामीजी के निधन के पश्चात् उक्त सभा ने अपनी बहुविध गतिविधियों के द्वारा उपर्युक्त उद्देश्यों की पूर्ति का भरसक प्रयास किया है।

यह वर्ष आर्यसमाज की स्थापना का है। परोपकारिणी सभा ने यह निश्चय किया कि महर्षि की स्थानापन्न सभा का विगत ९१ वर्षीय इतिहास इस अवसर पर प्रकाशित किया जाय। तदर्थं विगत रिपोर्टों तथा अन्य उपलब्ध सामग्री के आधार पर सभा के संयुक्त-मन्त्री डा. भवानीलाल भारतीय ने परिश्रम पूर्वक इस ग्रन्थ को तैयार किया है। यह चेष्टा रही है कि सभा की प्रमुख प्रवृत्तियों का सांगोपाग सिंहावलोकन इस इतिहास में रहे तथा स्थापना-काल से लेकर आज तक के सभासदों का विवरण भी पाठक को उपलब्ध कराया जाय। पाठक अनुभव करेंगे कि आर्यसमाज के इतिहास विषयक प्रचुर सामग्री सभा के इस इतिहास में अनायास ही आ गई है।

आर्यसमाज स्थापना शताब्दी के पावन पर्व पर इस ग्रन्थ को आर्य जनता को समर्पित करते हुए मैं आशा करता हूँ कि परोपकारिणी सभा के कार्यों और प्रवृत्तियों के महत्त्व को सभी लोग अनुभव करेंगे तथा उनके समक्ष हमारी विगत उपलब्धियाँ भी उजागर होंगी। ग्रन्थ को सुन्दर एवं आकर्षक रूप प्रदान करने में वैदिक यन्त्रालय के कर्मचारियों का जो योगदान रहा, तदर्थं वे साधुवाद के पात्र हैं।

चैत्र शुक्ल प्रतिपदा २०३२ वि. सं.
दयानन्द आश्रम,
अजमेर

मन्त्री

ओ३म्

लेखक का निवेदन

आर्यसमाज स्थापना शताब्दी के उपलक्ष्य में परोपकारिणी सभा अपना ९३ वर्षीय इतिहास प्रकाशित कर रही है। स्वामी दयानन्द ने इसी सभा को अपने सम्पूर्ण स्वत्व प्रदान किये थे तथा सभासदों से यह अपेक्षा की थी कि उनके दिवंगत होने के पश्चात् भी आर्ष ग्रन्थों का प्रकाशन आदि का कार्य उनके द्वारा सुचारु रूप से संचालित होता रहेगा। तदनुसार ही सभा अपने सीमित साधनों से महर्षि के ग्रन्थों के मुद्रण एवं प्रकाशन के कार्य को सम्पन्न कर रही है।

यद्यपि वैदिक धर्म के देश देशान्तरों में प्रचार का गुरुतर कार्य भी महर्षि ने इसी सभा को सौंपा था, परन्तु जब १९०८ में सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधि सभा की स्थापना हो गई तो यह कार्य उक्त सभा के तत्त्वावधान में होने लगा। सभा के कार्यों एवं प्रवृत्तियों से आर्य जनता को परिचित कराना ही इस ग्रन्थ का मुख्य उद्देश्य है। पाठक देखेंगे कि स्वामीजी के समकालीन महापुरुषों से लेकर वर्तमान पीढ़ी तक के प्रमुख आर्य नेताओं तथा विद्वानों का सहयोग सभा को प्राप्त होता रहा है। आशा है परोपकारिणी सभा का यह इतिहास आर्यसमाज के इतिहास लेखन में एक महत्त्वपूर्ण कड़ी का कार्य करेगा।

चैत्र शुक्ला प्रतिपदा २०३२ वि०
दयानन्द आश्रम,
अजमेर।

विदुषां वंशवद
भवानीलाल भारतीय

परोपकारिणी सभा के संस्थापक

युग प्रवर्त्तक महर्षि दयानन्द सरस्वती

न्म : टंकारा १८२४ मृत्यु : अजमेर १८८३



परोपकारिणी सभा का इतिहास

स्थापना की पृष्ठभूमि—

भारतीय धर्म, समाज और संस्कृति के क्षेत्र में पुनर्जागरण की महती प्रक्रिया उस समय प्रारम्भ हुई जब विगत शताब्दी में महान् धर्म संशोधक, समाज संस्कारक तथा नवोदय के ज्योतिर्धर स्वामी दयानन्द सरस्वती ने आर्यसमाज की स्थापना के द्वारा देश और समाज में वैचारिक क्रान्ति लाने का सफल प्रयास किया। मथुरा निवासी एक प्रज्ञा चक्षु दण्डी संन्यासी विरजानन्द से शास्त्राध्ययन करने के पश्चात् स्वामी दयानन्द ने भारतीय जीवन में व्याप्त आडम्बर, पाखण्ड, रूढ़िवाद, कदाचार तथा मूढ़ विश्वासों को समाप्त करने हेतु महान् अनुष्ठान आरम्भ किया। अपने प्रयोजन की सिद्धि में जनसाधारण का सहयोग लेने हेतु उन्होंने महानगरी बम्बई में चैत्र शुक्ला पञ्चमी सं० १९३२ ० (तदनुसार १० अप्रैल १८७५ ई०) को आर्यसमाज की स्थापना की। इस संस्था की स्थापना में उनका प्रमुख लक्ष्य विलुप्त वैदिक विचारधारा का पुनः प्रचार तथा आर्य संस्कृति का सार्वत्रिक प्रसार ही था। ज्यों-ज्यों स्वामीजी धर्म प्रचार तथा समाज संशोधन के गुरुतर भार को अपने सबल कंधों पर लेते गये त्यों-त्यों उनका देशाटन, शास्त्रार्थ विचार, समाज संगठन, ग्रन्थ लेखन आदि का कार्य वृद्धिगत होता गया। वैदिक धर्म के आदर्शों की प्रतिष्ठा तब तक सम्भव नहीं थी, जब तक उसके आधारभूत वेद तथा अन्य पुरातन वाङ्मय का वास्तविक स्वरूप जन समाज के सम्मुख प्रस्तुत न किया जाता। फलतः स्वामीजी ने वेदों के तात्पर्य का उद्घाटन करने के लिये वेद भाष्य लेखन प्रारम्भ किया तथा धर्म के तत्त्वार्थ का निरूपण अपने अन्य मौलिक ग्रन्थों में किया।

सोलह सत्रह वर्षों तक निरन्तर देश, समाज एवं धर्म की सेवा में संलग्न रहने के पश्चात् योग विद्या निष्णात दयानन्द ने अपनी क्रान्तदर्शिता से यह अनुभव किया कि उनकी जीवन संध्या अधिक दूर नहीं है। अतः परलोक गमन के पश्चात् भी उनके द्वारा प्रारम्भ कार्य सतत होता रहे, उनके द्वारा रचित ग्रन्थों का मुद्रण एवं प्रकाशन निर्बाध गति से चले तथा देश-देशान्तर एवं द्वीप-द्वीपान्तर में धर्म-प्रचार, अनाथ रक्षण, अबला उद्धार आदि के लोकोपकारी कार्य पूरे होते रहें, इस प्रयोजन की सिद्धि के लिये उन्होंने अपनी स्थानापन्न एक सभा की स्थापना की आवश्यकता अनुभव की। फलतः परोपकारिणी सभा का जन्म हुआ।

परोपकारिणी सभा की स्थापना—

स्वामी दयानन्द ने परोपकारिणी सभा की प्रथम स्थापना मेरठ में की। तदर्थ १६ अगस्त १८८० ई० को एक स्वीकार पत्र लिखा तथा उसी दिन मेरठ के सब-रजिस्ट्रार कार्यालय में उसे पञ्जीकृत कराया गया। इस स्वीकार पत्र में लाहौर निवासी लाला मूलराज को प्रधान तथा आर्यसमाज मेरठ के उपप्रधान लाला रामशरणदास को मन्त्री नियुक्त किया गया था। सभासदों की संख्या १८ थी और स्वामीजी ने इस सभा को अपने वस्त्र, धन, पुस्तक एवं यन्त्रालय आदि के स्वत्व प्रदान किये थे। अन्य प्रतिष्ठित आर्य पुरुषों के अतिरिक्त थियोसोफिकल-सोसाइटी के संस्थापक-द्वय कर्नल एच० एस० आल्काट तथा मैडम एच० पी० ब्लैवेट्स्की भी इस सभा के सदस्य नियत किये गये।

कालान्तर में जब स्वामीजी १८८३ ई० के आरम्भ में उदयपुर पधारे तो उन्होंने एक अन्य स्वीकार पत्र लिख कर परोपकारिणी सभा का न केवल पुनर्गठन ही किया अपितु उसे उदयपुर राज्य की सर्वोच्च प्रशासिका महद्राज सभा के द्वारा फाल्गुन कृष्णा पञ्चमी १९३९ वि० (२७ फरवरी १८८३ ई०) को पञ्जीकृत भी करवाया।

द्वितीय बार सभा की स्थापना करने की आवश्यकता क्यों पड़ी?

ऐसा प्रतीत होता है कि प्रथम स्वीकार पत्र के अनुसार कर्नल आल्काट, मैडम ब्लैवेट्स्की तथा मुरादाबाद निवासी जिन मुन्शी इन्द्रमणि को इस सभा का सभासद बनाया गया था, उनके साथ सैद्धान्तिक मतभेद हो जाने के कारण अब स्वाजीजी ने उन्हें अपनी उत्तराधिकारिणी संस्था में रखना वांछनीय नहीं समझा। द्वितीय कारण यह भी हो सकता है कि उदयपुर के महाराणा

सज्जनसिंह की वैदिक धर्म में अटूट श्रद्धा तथा उनके माण्डलिक सामन्तों का धर्म प्रेम देख कर स्वामीजी की यह सहज इच्छा हुई कि आर्य जाति के मूर्धाभिषिक्त नरेश को अपनी स्थानापन्न सभा का अध्यक्ष बनाकर एवम् मेवाड़ तथा अन्य राजस्थानी राज्यों के क्षत्रिय सामन्तों को भी इस सभा में सम्मिलित कर उसे अधिक प्रभावशाली तथा व्यापक बनाया जाय। इस बार जो स्वीकार पत्र लिखा गया उसमें सभासदों की संख्या २३ थी। मैंडम ब्लैवेट्स्की के अनुसार स्वामीजी को अपनी मृत्यु का पूर्वाभास हो गया था क्योंकि किसी प्रसंग में उन्होंने मैंडम से कहा था कि वे १८८३ वर्ष का अन्त नहीं देखेंगे।[1] जो हो, इस स्वीकार पत्र के लेखन के आठ मास पश्चात् ही कार्तिक अमावस्या १९४० वि० (३० अक्टूबर १८८३) को महाराज का निधन हो गया।

अजमेर में जिस समय स्वामीजी का परलोक गमन हुआ, उस समय परोपकारिणी सभा के उपमन्त्री पं० मोहनलाल विष्णुलाल पण्ड्या वहीं उपस्थित थे। यद्यपि परोपकारिणी सभा के प्रधान महाराणा सज्जनसिंह ने स्वामीजी के परलोकवासी होने के कुछ दिन पूर्व ही यह सम्मति भेजी थी कि यदि दैवदुर्विपाक से महाराज का शरीर छूटे तो चार-पांच दिनों तक उनकी अन्त्येष्टि को रोक रक्खा जाय ताकि वे अजमेर आकर श्री महाराज के अन्तिम दर्शन कर सकें परन्तु स्वीकार पत्र की भावना को ध्यान में रखते हुये तथा व्यावहारिक कठिनाइयों के कारण ऐसा नहीं किया गया और दूसरे दिन ३१ अक्टूबर को अजमेर के मलूसर श्मशान में स्वामीजी की अन्त्येष्टि कर दी गई।[2] १ नवम्बर को पण्ड्याजी ने स्वामीजी के द्रव्य, पुस्तक तथा अन्य वस्तुओं की सूची बना कर उस पर प्रतिष्ठित पुरुषों के हस्ताक्षर कराये तथा सभा मन्त्री के रूप में उन्हें अपने अधिकार में ले लिया।

परोपकारिणी सभा का वास्तविक कार्य तो स्वामीजी के देहावसान के पश्चात् ही प्रारम्भ हुआ। स्वीकार पत्र में स्वामीजी ने परोपकारिणी सभा के सम्मुख निम्न लक्ष्य पूर्ति हेतु रक्खे थे—

१. वेद और वेदांगादि शास्त्रों के प्रचार अर्थात् उनकी व्याख्या करने कराने, पढ़ने पढ़ाने, सुनने सुनाने, छापने छपवाने का कार्य।

---

१. महर्षि दयानन्द सरस्वती का जीवन चरित भाग २ पं घासीरामजी प्रणीत पृ० ३१३।

२. अन्त्येष्टि में ५६७ रुपये पौने दो आने व्यय हुये। स्व० ब्रह्मदत्तजी सोढ़ा के नोट्स। ५ ५

२. वेदोक्त धर्म के उपदेश और शिक्षा अर्थात् उपदेशक मण्डली नियत करके देश-देशान्तर और द्वीप-द्वीपान्तर में भेज कर सत्य के ग्रहण और असत्य को त्याग कराना।

३. आर्यावर्तीय और दीन मनुष्यों के संरक्षण, पोषण और सुशिक्षा का कार्य।

स्वामीजी के व्यापक उद्देश्यों की पूर्ति हेतु आर्यसमाज का देशव्यापी संगठन १८७५ ई० से ही निरन्तर कार्य संलग्न था अतः परोपकारिणी सभा ने धर्म प्रचार, अनाथ संरक्षण तथा अन्य लोक हितकारी प्रवृत्तियों का संचालन आर्यसमाज के कार्यक्षेत्र का समझ कर अपने आपको श्री महाराज के ग्रन्थों के मुद्रण, प्रकाशन, प्रचार, प्रसार तथा तत् सम्बद्ध वैदिक अनुसन्धान एवं तत्त्वानुशीलन तक ही सीमित रक्खा। तथापि उसकी विभिन्न प्रवृत्तियों ने दयानन्द सरस्वती की विचारधारा के सार्वत्रिक प्रचार में जो योगदान किया है उसका मूल्यांकन आवश्यक है।

परोपकारिणी सभा और आर्यसमाज का सम्बन्ध—

सभा के प्रथम अधिवेशन में ही यह विचार उपस्थित हुआ कि परोपकारिणी सभा तथा एतद्देशीय आर्यसमाजों का पारस्परिक सम्बन्ध क्या होना चाहिये। उस समय तक प्रान्तीय प्रतिनिधि सभाओं की स्थापना नहीं हुई थी। रा० ब० महादेव गोविन्द रानड़े ने यह प्रस्ताव उपस्थित किया कि भविष्य में सभा के सभासदों के जो पद रिक्त हों वे आर्यसमाजों की प्रतिनिधि सभाओं के द्वारा भरे जायें। आगे भी इस प्रकार का विचार विमर्श चलता रहा जिससे प्रान्तीय प्रतिनिधि सभायें स्वामी दयानन्द की स्थानापन्न परोपकारिणी सभा से अपना निकट सम्बन्ध बनाये रक्खें। १८८७ ई० के अधिवेशन में यह निश्चय हुआ कि जिस प्रकार प्रतिनिधि सभायें जिन नियमों के अनुसार अपने प्रान्तों की आर्यसमाजों के साथ सम्बन्ध रखती हैं उसी प्रकार इस सभा से भी रक्खें।

सभा के प्रारम्भिक अधिवेशनों में न केवल मनोनीत सदस्य ही भाग लेते थे अपितु भिन्न-भिन्न आर्यसमाजों के द्वारा भेजे जाने वाले प्रतिष्ठित प्रतिनिधि भी आमंत्रित किये जाते थे। उन्हें अपने विचार व्यक्त करने का पूर्ण अवसर दिया जाता था तथा वे विभिन्न सुझाव भी प्रस्तुत करते थे। सभा के कार्यालय द्वारा देश की सभी समाजों को सभा के वार्षिक अधिवेशन के समय और स्थान

की सूचना दी जाती थी। यह अवश्य है कि उस समय आर्यसमाजों की कुल संख्या उतनी अधिक नहीं थीं, जितनी आज है। उदाहरणार्थ—सभा के द्वितीय अधिवेशन में २० आर्यसमाजों के ३३ प्रतिनिधि उपस्थित थे जिनमें अजमेर के बाबू पद्मचन्द व मथुराप्रसाद, जयपुर के ठा० नन्दकिशोरसिंह, बम्बई के श्री सेवकलाल कृष्णदास, लाहौर के लाला जीवनदास व बाबू मदनसिंह, प्रयाग से मुन्शी समर्थदान, पूना से पं० कृष्णराम इच्छाराम तथा रामगढ़ (शेखावाटी) से पं० (महात्मा) कालूराम आदि के नाम उल्लेखनीय हैं। तृतीय अधिवेशन में ४५ आर्यसमाजों के ७९ प्रतिनिधि उपस्थित हुये। इनमें लाला हंसराज, पं० लेखराम, लाला लाजपतराय जैसे विख्यात आर्यपुरुष भी सम्मिलित थे। चतुर्थ अधिवेशन में आर्यसमाजों के प्रतिनिधियों की संख्या कम हो गई परन्तु उल्लेखनीय व्यक्तियों में लाला हंसराज, पं० लेखराम के अतिरिक्त ब्रह्मचारी नित्यानन्द एवं स्वामी विश्वेश्वरानन्द का नाम प्रमुख है। १८९० ई० में सभा का पञ्चम अधिवेशन हुआ। इसमें दूरवर्ती आर्यसमाजों के अतिरिक्त राजस्थान की निकटवर्ती आर्यसमाजों—यथा शाहपुरा, जोधपुर, सराधना, सोजत, पुष्कर, जयपुर, नसीराबाद, ब्यावर, बांदीकुई आदि के ३५ प्रतिनिधि सम्मिलित हुये। समाजों के प्रतिनिधि १९०६ तक सम्मिलित होते रहे। १९०६ ई० के दशम अधिवेशन में २३ आर्यसमाजों के प्रतिनिधि आये। उल्लेखनीय आर्य पुरुषों में लाहौर के डा० चिरञ्जीव भारद्वाज, अमृतसर के मास्टर आत्माराम आदि के नाम गणनीय हैं। सभा के अधिवेशनों के प्रति दूरवर्ती आर्यसमाजों का उत्साह भी प्रशंसनीय था क्योंकि होती मर्दान, मुलतान एवं मुजफ्फरगढ़ जैसे सुदूर स्थानों की आर्यसमाजें भी अपने प्रतिनिधि भेजती थीं। इसके पश्चात् पर्याप्त समय तक आर्यसमाजों के प्रतिनिधियों का सभा के अधिवेशनों में उपस्थित होना बन्द हो गया। जब सन् १९३२ में सभा का अधिवेशन आर्यसमाज चावड़ी बाजार दिल्ली में हुआ उस समय पुनः विभिन्न आर्यसमाजों के २५ प्रतिनिधि अधिवेशन में उपस्थित हुये। इस महत्त्वपूर्ण अधिवेशन में स्वामी वेदानन्द तीर्थ, लाला ज्ञानचन्द ठेकेदार, लाला नारायणदत्त ठेकेदार, पं० ठाकुरदत्त शर्मा, पं० बुद्धदेव विद्यालंकार, महाशय कृष्ण आदि गण्य मान्य आर्य विद्वान् एवं नेता आये थे। इस अधिवेशन में मुख्यतया महर्षि की निर्वाण अर्द्ध शताब्दी विषयक निर्णय किये गये।

आर्यसमाज एवं सभा के पारस्परिक सम्बन्ध सूत्रों को किस प्रकार स्थापित किया जाय इस जटिल प्रश्न पर विचार करने के लिये २७ दिसम्बर १९०६ को सभा के अधिवेशन के अवसर पर एक वृहद् सम्मेलन आयोजित किया

गया जिसमें सभा के उपस्थित ११ सदस्यों के अतिरिक्त विभिन्न स्थानों से आये हुये लगभग २५० व्यक्ति उपस्थित थे। इस सम्मेलन की अध्यक्षता सभा के तत्कालीन मन्त्री शाहपुराधीश नाहरसिंहजी ने की। डा० चिरञ्जीव भारद्वाज, पं० रामभजदत्त चौधरी, मुन्शी नारायणप्रसाद तथा लाला हंसराज जैसे प्रतिष्ठित आर्य नेताओं ने इस सम्मेलन में अपने विचार व्यक्त किये। अन्ततः सात व्यक्तियों की एक उपसमिति को इस प्रश्न पर विचार करने का अधिकार सौंपा कि सभा के विधान में किस प्रकार उचित परिवर्तन किया जाय ताकि आर्यसमाजों तथा प्रान्तीय सभाओं के साथ उसका गूढ़ सम्बन्ध स्थापित हो सके। इस उपसमिति ने जो सुझाव दिये उनका आशय यह था कि परोपकारिणी सभा में प्रान्तीय सभाओं के प्रतिनिधियों तथा प्रतिष्ठित (मनोनीत) सभासदों का अनुपात २ : १ का रहना चाहिये। मनोनीत सभासदों का कार्यकाल भी तीन वर्ष से अधिक का न रहे।

यही विषय १९२५ में भी प्रो० रामदेवजी के द्वारा उपस्थित किया गया। उनका सुझाव था कि परोपकारिणी सभा में सदस्यों के जो स्थान रिक्त हों उन्हें प्रतिनिधि सभाओं की संस्तुति से पूरा किया जाय तथा सब सभायें Rotation से सदस्यों की नियुक्ति की संस्तुति करें। इस प्रकार चुने गये सभासदों का कार्यकाल ३ वर्ष का होगा। सभा ने अपने २६ वें अधिवेशन में इस प्रश्न पर विचारार्थ प्रो० रामदेवजी, स्वामी श्रद्धानन्दजी, लाला हंसराजजी, पं० घासीरामजी तथा पं० भगवद्दत्तजी की एक उपसमिति बनाई जिसके संयोजक प्रो० रामदेवजी थे।

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा की स्थापना १९०८ में ही हो गई थी। इस सभा ने अपनी नियमावली में परोपकारिणी सभा को अपने आधीन रखते हुये उसे एक माण्डलिक सभा का दर्जा प्रदान किया था। १९२५ ई० के अधिवेशन में इस प्रश्न पर भी विचार कर यह निश्चय किया गया कि परोपकारिणी सभा, यतः स्वामी दयानन्द द्वारा साक्षात् स्थापित तथा स्वामीजी के सम्पूर्ण उत्तराधिकार सम्पन्न एक स्वायत्त संस्था है अतः उसके प्रतिनिधि अन्य किसी भी संस्था में नहीं भेजे जा सकते।

वस्तुतः उस समय सभा के अधिकारियों ने परोपकारिणी सभा को प्रान्तीय सभाओं और सार्वदेशिक सभा से पृथक् रखना ही उचित समझा क्योंकि पंजाब के आर्य सामाजिक क्षेत्र में गुरुकुल और कालेज विभागों के पृथक्-पृथक् संगठन बन गये थे तथा दल बंदी का विष धीरे-धीरे सर्वत्र व्याप्त हो रहा था। परोपकारिणी सभा में यतः स्वामी श्रद्धानन्द तथा महात्मा

हंसराज दोनों पक्षों के नेता सभासद रूप में विद्यमान थे, अतः सभा तत्कालीन गुटबंदी से अपने आपको मुक्त रख सकी। यही श्रेयस्कर भी था।

अधिवेशनों में सदस्यों की उपस्थिति—सभा के प्रारम्भिक अधिवेशनों के विवरण पढ़ने से ज्ञात होता है कि उन दिनों यदि कोई सदस्य अधिवेशन में साक्षात् उपस्थित न भी होता तो वह अन्य उपस्थित सभासद को अपना प्रतिनिधि बना कर अपनी परोक्ष उपस्थिति अंकित करवा सकता था। यह नियम १८९० ई० तक तो चलता ही रहा। सभा के सदस्यों के अतिरिक्त पुरुषों को भी अनुपस्थित सभासद अपना प्रतिनिधि बना लेते थे। एक ही उपस्थित सभासद अनेक अनुपस्थित सभासदों का प्रतिनिधित्व कर सकता था। धीरे-धीरे सभासदों की उपस्थिति इतनी न्यून होने लगी कि उपसभापति राय मूलराज को यह आशंका व्यक्त करनी पड़ी कि यदि इसी प्रकार स्वयं उपस्थित न होकर प्रतिनिधियों को भेजने का सिलसिला जारी रहा तो आगे के अधिवेशन में सम्भवतः १–२ सभासद ही आया करेंगे। पाठकों को यह तो विदित ही है कि स्वामीजी द्वारा मनोनीत सभा के प्रारम्भिक २३ सभासदों में मेवाड़ के सामन्तों एवं राजपुरुषों की संख्या पर्याप्त थी। सभा के द्वितीय अधिवेशन में पं० मोहनलाल वि० पण्ड्याजी ने स्पष्ट किया कि मेवाड़ के सब सभासदों का एक साथ अधिवेशन में उपस्थित होना सम्भव नहीं है, परन्तु वे प्रति वर्ष अपने में से एक को अनिवार्यतः भेजा करेंगे जो उनका समग्रतः प्रतिनिधित्व करेगा।

कालान्तर में जब सभा के विस्तृत उपनियम (विधान) बने तो उसमें यह नियम सन्निविष्ट किया गया कि जो सदस्य बिना कोई संतोषप्रद कारण बताये निरन्तर तीन अधिवेशनों में अनुपस्थित रहे, उसकी सदस्यता समाप्त समझी जाय। सभा को यह अधिकार होगा कि वह उस सभासद के स्थान पर अन्य व्यक्ति को सदस्य मनोनीत कर ले परन्तु उसी सभासद को उसी अथवा अन्य भावी अधिवेशनों में पुनः मनोनीत करने का प्रावधान भी रक्खा गया। भारत के देशी राजाओं को (जो सभा के सदस्य थे) इस नियम से मुक्त रक्खा गया।

सभा का संविधान तथा पञ्जीकरण—चतुर्थ अधिवेशन में सभा के विस्तृत विधान के निर्माण की आवश्यकता को अनुभव कर पं० महादेव गोविन्द रानडे, पं० श्यामजी कृष्ण वर्मा, लाला मूलराज, लाला लालचन्द तथा पं० सुन्दरलाल की एक विधान निर्मात्री समिति बनाई जिसे विधान का प्रारूप बना कर आगामी अधिवेशन में स्वीकारार्थ प्रस्तुत करने के लिये कहा गया। १८९० ई०

के पञ्चम अधिवेशन में सभा के ये उपनियम स्वीकार किये गये। कालान्तर में सभा के पञ्जीकरण का प्रश्न भी उपस्थित हुआ। १८९५ के अधिवेशन में १८६० के एक्ट सं० २१ के अन्तर्गत सभा का पञ्जीकरण कराने हेतु निश्चय किया गया। मैमोरेण्डम आफ एसोशियेशन बनाने तथा पञ्जीकरण कराने का कार्य १८९६ के अधिवेशन में राजा जयकृष्णदास, पं० महादेव गोविन्द रानडे, बैरिस्टर रोशनलाल, बैरिस्टर रामगोपाल तथा राय मूलराज के सुपुर्द किया गया। उपर्युक्त पांच सदस्यों की उपसमिति (संयोजक श्री रोशनलाल बैरिस्टर) ने जो मैमोरेण्डम बनाया वह १९०६ के अधिवेशन में स्वीकार हुआ। वास्तविक पञ्जीकरण अजमेर के रजिस्ट्रार की अदालत में ३१ अगस्त १९०८ को हुआ।

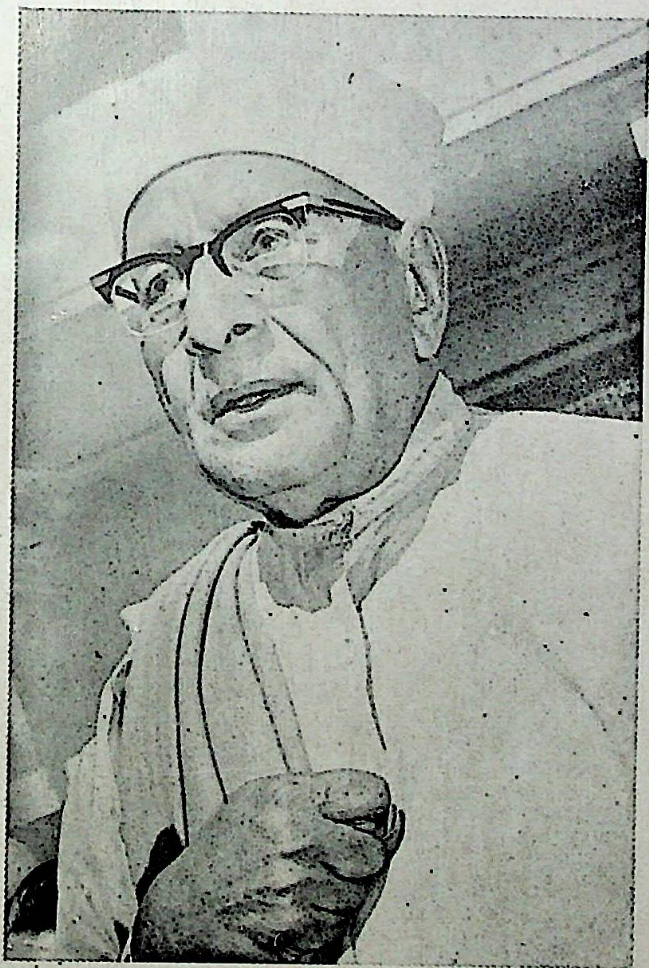
सभा का कार्यालय—सभा के प्रथम मन्त्री तथा उपमन्त्री उदयपुर निवासी थे अतः १८९३ तक उदयपुर में ही परोपकारिणी सभा का कार्यालय पं० मोहनलाल वि० पण्ड्या (मन्त्री) के पास रहा। १८९३ के अधिवेशन में मुन्शी हरविलास सारड़ा बी० ए० सभा के संयुक्त मन्त्री नियत किये गये और निश्चय हुआ कि कार्यालय अजमेर में लाया जाकर संयुक्त मन्त्री के आधीन रहे। तब से सभा का कार्यालय अजमेर में ही है।

सभा के वार्षिक अधिवेशन का व्यय—प्रथम अधिवेशन में ही महाराणा सज्जनसिंहजी ने कविराजा श्यामलदासजी के द्वारा सभा को सूचित किया था कि सभा के वार्षिक अधिवेशन का व्यय मेवाड़ राज्य की ओर से दिया जायगा। तब से १८९५ तक २०० रुपये वार्षिक अधिवेशन की व्यवस्था का व्यय मेवाड़ राज्य ही वहन करता रहा। सम्भवतः तत्कालीन महाराणा फतहसिंहजी ने १८९५ अथवा उसके बाद यह व्यय देना बन्द कर दिया था। १९०२ से १९०६ तक के चार वर्षों का सभा कार्यालय का दैनन्दिन व्यय २८०० रुपये हुआ। इसे शाहपुराधीश नाहरसिंहजी ने वहन किया।

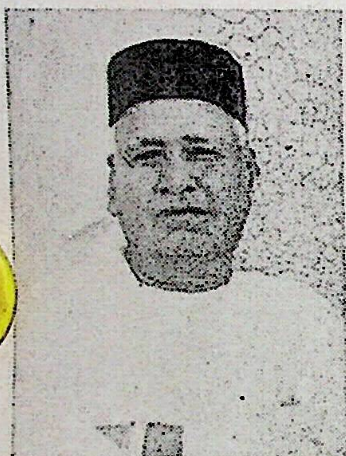
परोपकारिणी सभा के अधिकारी—

सभापति—सभा के संस्थापक स्वामी दयानन्द ने सभा का निर्माण करते समय ही यावदार्य कुल दिवाकर महाराणा सज्जनसिंहजी उदयपुराधीश को सभापति पद पर नियोजित किया था। इसे दुर्दैव की विडम्बना ही कहना चाहिये कि महाराणाजी अपनी अस्वस्थता के कारण सभा के प्रथम अधिवेशन (१८८३) में सम्मिलित नहीं हो सके। अगले वर्ष तो उनका निधन ही हो गया। अब सभा ने उनके उत्तराधिकारी महाराणा फतहसिंहजी को सभापति

परोपकारिणी सभा के प्रधान



महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज

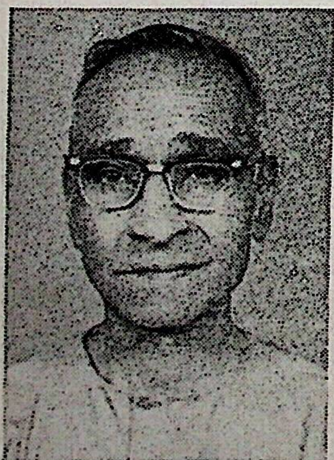


डॉ. मानकरणजी शारदा
उपप्रधान

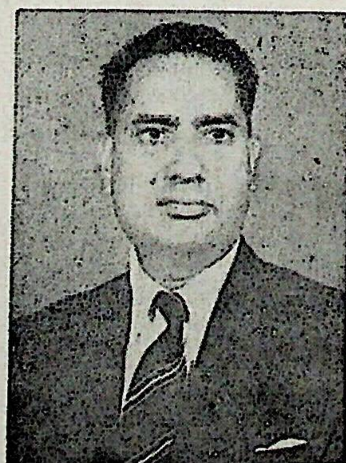


डॉ. भवानीलालजी भारतीय
संयुक्त मन्त्री

सभा के वर्तमान पदाधिकारी

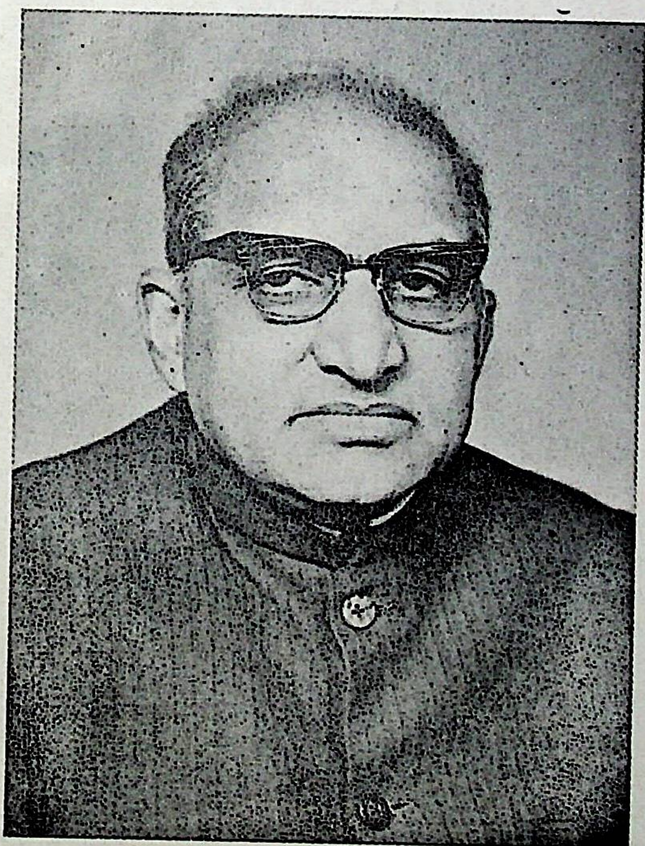


श्री विष्णुचन्द्रजी पालीवाल
कोषाध्यक्ष



श्री चितरंजनजी वर्मा
पुस्तकाध्यक्ष

परोपकारिणी सभा के मन्त्री



श्रीकरण जी शारदा

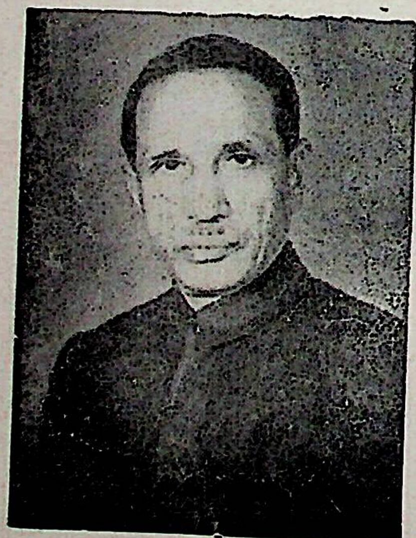
सभा के वर्तमान सदस्य



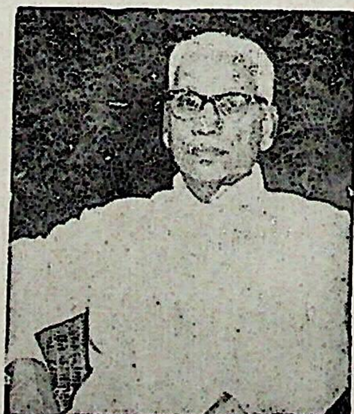
पं० आनन्दप्रिय जी



प्रो. मदनसिंह जी

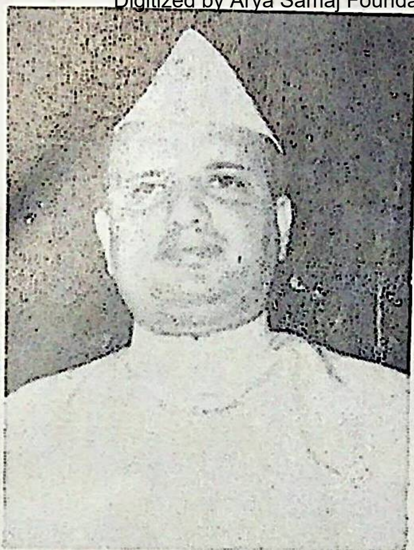


डॉ. मंगलदेवजी शास्त्री



लाला हंसराज जी गुप्त

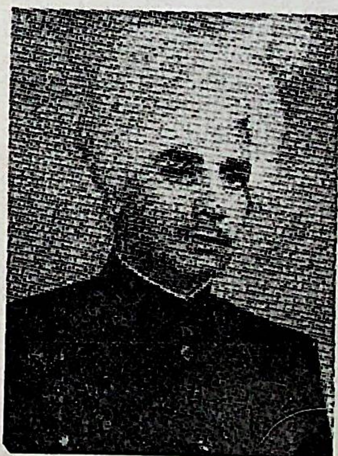
वर्तमान सदस्य



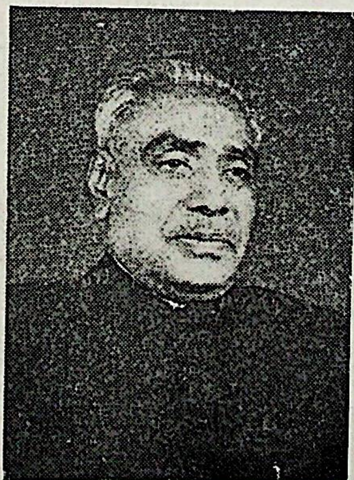
सेठ प्रतापसिंह शूरजी वल्लभदास



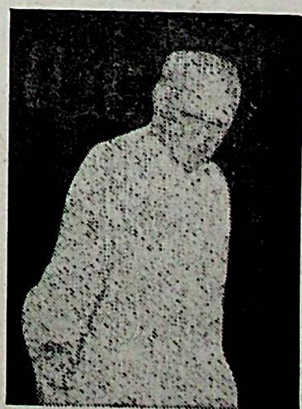
डॉ. मथुरालालजी शर्मा



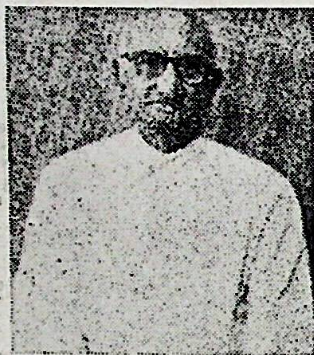
राजाधिराज सुदर्शनदेवजी



अमरचन्दजी ईनाणी



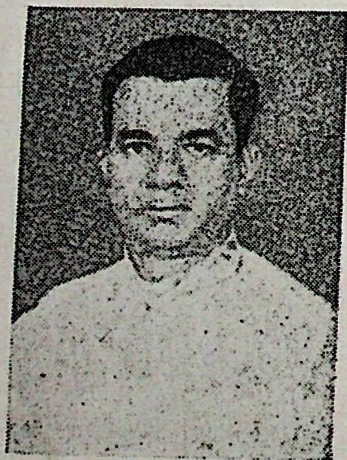
डॉ. परमात्माशरण जी



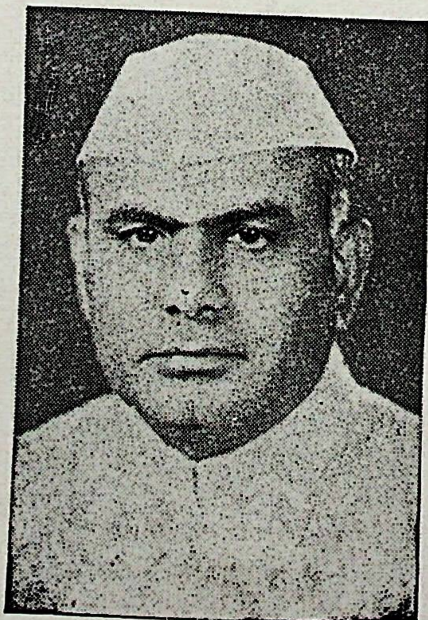
पं. उदयवीर जी शास्त्री



श्री के. नरेन्द्रजी



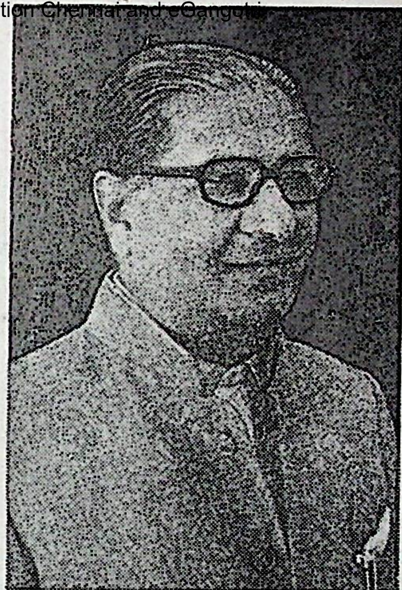
श्री हरिश्चन्द्रजी वर्मा



प्रो. शेरसिंह जी



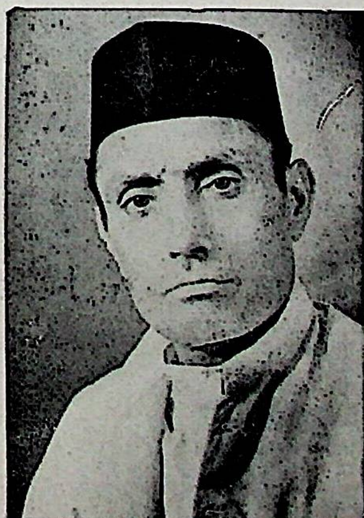
डॉ. सुधीर कुमारजी गुप्त



डॉ. सत्यदेवजी आर्य

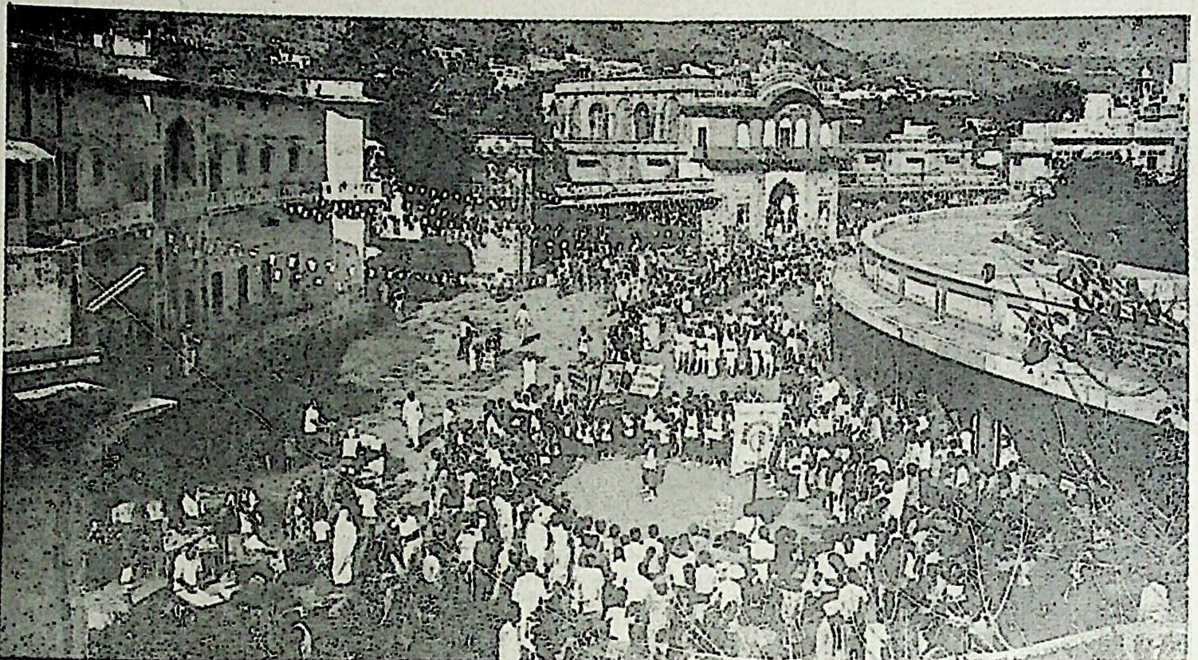


पं. प्रकाशवीरजी शास्त्री



लाला रामगोपाल जी शालवाले

दयानन्द मार्केट, दयानन्द आश्रम एवम् वैदिक यन्त्रालय का एक विहंगम दृश्य



पद स्वीकार करने का निवेदन किया। आसींद ठिकाने के रावत अर्जुनसिंह के माध्यम से महाराणाजी तक यह प्रार्थना पहुँचाई गई, परन्तु महाराणा फतहसिंह सभा के अध्यक्ष नहीं वने। उन्होंने सभा का संरक्षक वनना अवश्य स्वीकार कर लिया। यद्यपि सभा के नियमों में संरक्षक पद के लिये कोई प्रावधान नहीं था परन्तु मेवाड़ के स्वर्गीय महाराणा सज्जनसिंहजी का आर्यसमाज के प्रवर्तक के प्रति जो अगाध भक्ति और स्नेह का भाव था उसे लक्ष्य में रख कर उनके उत्तराधिकारी के साथ भी सभा अपना सम्बन्ध वनाये रखना चाहती थी। १८९३ के अधिवेशन में पं० श्यामजी कृष्ण वर्मा के प्रस्तावानुसार प्रतापगढ़ के महारावत श्री रघुनाथसिंहजी को उपसंरक्षक का पद प्रदान किया गया।

महाराणा सज्जनसिंह के निधन तथा महाराणा फतहसिंह के सभा की अध्यक्षता स्वीकार न करने के कारण सभा का सभापति पद १८९१ ई० तक रिक्त रहा। उपसभापति राय मूलराज कार्यकर्त्ता सभापति के रूप में कार्य करते रहे परन्तु सभा के वार्षिक विवरणों की पाद टिप्पणियों में यह अंकित किया जाता रहा कि 'सभापति के पद पर अभी कोई नियत नहीं हुआ है।' १८९१ के नैमित्तिक अधिवेशन में यह निश्चय हुआ कि कर्नल महाराजा सर प्रतापसिंह जोधपुर से सभापति पद को स्वीकार करने की प्रार्थना की जाय। ऐसा प्रतीत होता है कि कर्नल सर प्रतापसिंह ने इस प्रस्ताव को अविलम्ब स्वीकार नहीं किया अतः १८९३ ई० में शाहपुराधीश श्री नाहरसिंह वर्मा सभापति पद पर प्रतिष्ठित हुये। इनको अध्यक्ष बनाने का प्रस्ताव १८९३ के अधिवेशन में मुन्शी हरविलास सारडा ने रक्खा था। राजाधिराज ने सभा की अध्यक्षता स्वीकार करने की सूचना तड़ित समाचार (तार) द्वारा प्रेषित की।

१८९७ ई० से १९०५ ई० के बीच की अवधि में सभा का कोई अधिवेशन नहीं हुआ। इसी बीच महाराजा प्रतापसिंह ने सभा का अध्यक्ष बनना स्वीकार कर लिया क्योंकि १९०६ के अधिवेशन में श्री नाहरसिंहजी को सभा के मन्त्री पद पर अधिष्ठित अंकित किया गया है। विवरणों से ज्ञात होता है कि यद्यपि कर्नल सर प्रतापसिंह १९२३ (मृत्यु) पर्यन्त सभा के अध्यक्ष रहे परन्तु उन्होंने किसी भी अधिवेशन में भाग नहीं लिया। उनके देहान्त के उपरान्त सर सयाजीराव गायकवाड़ बड़ौदा नरेश ने १९२४ में सभा का सभापति पद ग्रहण किया। गायकवाड़ नरेश सन् १९३८ तक सभा के अध्यक्ष रहे। १९३८ में उनका निधन हो गया। तीन वर्ष पश्चात् सभा ने अपने १९४१ के अधिवेशन में शाहपुराधीश श्री उम्मेदसिंहजी को सर्वसम्मति से सभापति पद पर चुना।

आप इस पद पर १९५३ ई० तक रहे। यद्यपि सभा ने इस बीच अपना संशोधित विधान स्वीकार कर लिया जिसके अनुसार पदाधिकारियों तथा अन्तरंग सभा के सदस्यों का निर्वाचन तीन वर्ष के लिये होने का प्रावधान था, तथापि इस संशोधित संविधान के अनुसार भी १९५२ के अधिवेशन में श्री उम्मेदसिंहजी शाहपुराधीश ही प्रधान पद पर निर्वाचित हुये। आपने १ वर्ष पश्चात् प्रधान पद से त्याग पत्र दे दिया जिसे सभा ने अपने १९५३ के अधिवेशन में खेद पूर्वक स्वीकार कर लिया। अब महाशय कृष्ण सभा के प्रधान बनाये गये। आगामी वर्षों में प्रधान पद पर निम्न महानुभाव चुने गये—

१९५५ ई० महाशय कृष्ण

१९५८ ई० महाशय कृष्ण

१९६१ ई० महाशय कृष्ण। महाशयजी का निधन २४ फरवरी १९६३ को हो गया। फलतः उपप्रधान लाला हंसराज गुप्त ने सभा के प्रधान का पद ग्रहण किया।

१९६४ ई० लाला हंसराज गुप्त

१९६७ ई० लाला हंसराज गुप्त

१९७० ई० सेठ प्रतापसिंह शूरजी वल्लभदास। आपने एक वर्ष पश्चात् त्याग पत्र दे दिया। फलतः १९७१ के वार्षिक अधिवेशन में महात्मा आनन्द स्वामीजी को प्रधान निर्वाचित किया गया। १९७३ के चुनाव में भी महात्माजी ही सभा के प्रधान निर्वाचित हुये।

उप सभापति—स्वामी दयानन्द ने अपने स्वीकार पत्र में लाहौर के राय मूलराज को परोपकारिणी सभा का उपसभापति पद प्रदान किया था। राय मूलराज इस पद पर दीर्घ काल तक रहे। उन्होंने १८८३ से १८९३ तक स्थायी सभापति के न होने पर सभा की अध्यक्षता भी की। १९४०–४१ की वार्षिक रिपोर्ट में अन्तिम बार रा० ब० मूलराज को सभा का उपप्रधान लिखा गया है। सम्भवतः वृद्धावस्था के कारण इन वर्षों में रा० ब० मूलराज सभा के अधिवेशनों में सम्मिलित नहीं हो सके थे। १९४३ के अधिवेशन में निरन्तर ३ वर्षों तक अनुपस्थित रहने के कारण उनका स्थान रिक्त हो गया। इस प्रकार स्वामीजी के जीवनकाल में ही सभा के उपप्रधान एवं सभासद का पद ग्रहण करने वाले रा० ब० मूलराज ६० वर्ष पर्यन्त अपना महत्त्वपूर्ण योगदान देकर सभा के कार्य भार से मुक्त हुये।

१९५२ ई० के अधिवेशन में सभा का संशोधित विधान स्वीकार हुआ।

तदनुसार तीन वर्षों के लिये सभा के पदाधिकारियों का निर्वाचन किया गया। इस समय म० कृष्ण तथा प्रो० घीसूलालजी को उपप्रधान पद पर चुना: गया। आगामी वर्षों में उपप्रधान पद पर निम्न महानुभाव चुने गये। १९५५ में ठा० मदनसिंहजी तथा लाला हंसराज गुप्त, १९५८ ई० में लाला हंसराज कार्यकर्त्ता प्रधान तथा ठा० मदनसिंहजी उपप्रधान चुने गये। १९६१ में लाला हंसराज गुप्त तथा लाला चरणदास पुरी १९६४ में डा० मानकरण शारदा उप प्रधान वनाये गये। १९६७, १९७० तथा १९७३ में भी वे ही उपप्रधान वनाये गये।

मन्त्री—स्वीकार पत्र के अनुसार कविराजा श्यामलदास उदयपुर तथा लाला रामशरणदास मेरठ सभा के मन्त्री वनाये गये थे। लालाजी का स्वर्गवास सभा के प्रथम अधिवेशन के पूर्व ही हो गया था अतः प्रथम अधिवेशन (१८८३) में उनके स्थान पर पं० गोपालराव हरि देशमुख को मन्त्री (द्वितीय) पद पर नियत किया गया। १८८५ के द्वितीय अधिवेशन में कवि-राजाजी ने जव अस्वस्थ होने के कारण मन्त्री पद से त्याग पत्र दे दिया तो तत्कालीन उपमन्त्री पं० मोहनलाल विष्णुलाल पण्ड्या को मन्त्री वनाया गया। पण्ड्याजी मन्त्री पद पर गत शताब्दी के अन्त तक तो निश्चित रूप से रहे ही होंगे क्योंकि १८९६ ई० के नवें अधिवेशन में वे ही मन्त्री वताये गये हैं। परन्तु १९०६ ई० में जव १० वाँ अधिवेशन लगभग दस वर्ष पश्चात् सम्पन्न हुआ तो उसमें सर नाहरसिंहजी शाहपुराधीश को मन्त्री पद पर अभिषिक्त वताया गया है। शाहपुराधीश ने मन्त्री पद को सम्भवतः १९३२ तक तो निश्चित रूप से ही सुशोभित ही किया। १९३३ में उनका निधन हो गया। यद्यपि सर नाहरसिंहजी मन्त्री (प्रथम) पद पर रहे परन्तु वस्तुतः सभा का सम्पूर्ण कार्य संचालन इस बीच मन्त्री (द्वितीय) दी० व० हरविलासजी सारड़ा ही करते रहे। सारड़ाजी १८९३ में सह मन्त्री वने थे। वे इस पद पर १९३३ ई० तक लगभग ४० वर्ष पर्यन्त रहे। पुनः शाहपुराधीश नाहरसिंहजी के दिवंगत हो जाने पर वे वरिष्ठ मन्त्री बने। १९५३ में उन्होंने लगभग २० वर्ष तक मन्त्री पद पर कार्य करने के अनन्तर अपनी अत्यधिक वृद्धावस्था एवं जीर्ण स्वास्थ्य के कारण इस पद से त्याग पत्र दिया जिसे २८ फरवरी १९५३ के अधिवेशन में स्वीकार किया गया। समग्रतः सारड़ाजी ने ६० वर्ष तक मन्त्री पद पर कार्य किया। तत्पश्चात् इसी वर्ष में डा० मानकरण शारदा मन्त्री पद पर निर्वाचित हुये। आगामी वर्षों में मन्त्री पद पर निम्न प्रकार से चुनाव हुये—१९५५, १९५८ तथा १९६१ में डा० मानकरणजी शारदा मन्त्री निर्वाचित हुये। तदनन्तर १९६४, १९६७, १९७० तथा १९७३ में श्री श्रीकरणजी शारदा मन्त्री बने।

संयुक्त मन्त्री—सभा के स्वीकार पत्र में स्वामीजी ने कविराजा श्यामलदास तथा लाला रामशरणदास को मन्त्री पद पर नियत किया था। थोड़े समय पश्चात् जब पं० मोहनलाल विष्णुलाल पण्ड्या जो स्वीकार पत्र में उपमन्त्री के पद पर प्रतिष्ठित किये गये थे, मन्त्री पद पर प्रतिष्ठित हुये तो उपमन्त्री का पद रिक्त हो गया। १८९३ में श्री हरविलास सारड़ा को ज्वाइन्ट सेक्रेटरी (संयुक्त मन्त्री) नियत किया। कुछ समय पश्चात् उपमन्त्री का पद वैतनिक बना दिया गया क्योंकि १९०७ में जो सभा का बजट अंकित किया गया उसमें उपमन्त्री का वेतन ७२० रुपये वार्षिक दिखलाया गया है। पं० भक्तराम उस समय उपमन्त्री थे। उपमन्त्री का पद थोड़े समय पश्चात् समाप्त कर दिया गया। परन्तु १९५२ में जब सभा के नियमों में संशोधन किया गया तो संयुक्त मन्त्री का पृथक् पद रक्खा गया। १९५२ में प्रथम बार श्री विष्णुचन्द्रजी इस पद पर चुने गये। अब चुनाव त्रैवार्षिक होने लगे अतः आगामी वर्षों में निम्न सदस्य संयुक्त मन्त्री पद पर चुने गये। १९५५ ई० श्री चित्तरंजन वर्मा १९५८ ई० श्री श्रीकरणजी शारदा (संयुक्त मन्त्री के साथ पुस्तकाध्यक्ष पद भी इन्हें दिया गया)। १९६१ में भी श्री श्रीकरणजी शारदा पुस्तकाध्यक्ष एवं संयुक्त मन्त्री के पद पर चुने गये। १९६४ में श्री चित्तरंजनजी वर्मा, १९६७ में पुनः श्री वर्माजी संयुक्त मन्त्री बने। १९७० तथा १९७३ में डा० भवानीलाल भारतीय संयुक्त मन्त्री पद पर चुने गये।

कोषाध्यक्ष—सभा के संशोधित नियमों के अनुसार कोषाध्यक्ष पद पर सर्व प्रथम १९५२ में श्री धर्मचन्द गुप्त चुने गये। बाद के वर्षों में स पद पर निम्न प्रकार चुनाव हुये—१९५५, १९५८ तथा १९६१ में श्री गुप्तजी ही लगातार कोषाध्यक्ष चुने जाते रहे। तत्पश्चात् १९६४, १९६७, १९७० तथा १९७३ में श्री विष्णुचन्द्रजी कोषाध्यक्ष चुने गये।

पुस्तकाध्यक्ष—इस पद पर भी सर्व प्रथम १९५२ में ही निर्वाचन हुआ। श्री चितरंजन वर्मा पुस्तकाध्यक्ष बने। १९५५ में श्री शिवचरणलालजी चुने गये। आपने शीघ्र ही सभा की सदस्यता से भी त्यागपत्र दे दिया। अतः १९५६ में श्री श्रीकरणजी शारदा को पुस्तकाध्यक्ष बनाया गया। १९५८ तथा १९६१ में पुस्तकाध्येक्ष का पद संयुक्त मन्त्री के पास ही रहा। १९६४ में पुस्तकाध्यक्ष पद रिक्त ही रहा। १९६७ तथा १९७० में पं० भगवानस्वरूपजी न्यायभूषण इस पर पद रहे। १९७३ में श्री चित्तरंजन वर्मा पुस्तकाध्यक्ष चुने गये।

□□

अध्याय २

स्वामी दयानन्द के ग्रन्थ, द्रव्य, वस्त्र आदि

महर्षि के परलोक गमन के अनन्तर सभा के उपमन्त्री पं० मोहनलाल पण्ड्या ने स्वामीजी की सभी वस्तुओं को स्वाधिकार में ले लिया। सभा के प्रथम अधिवेशन में जब श्री महाराज के द्रव्य आदि का विवरण पढ़कर सुनाया गया तो ज्ञात हुआ कि "४३०० रुपये नकद और ११००० का शोध किया जावे लायक लहना ४००० रुपये की मूल्य का यन्त्रालय और विक्रयार्थ पुस्तकें ४८००० रुपये की हैं।" ततूपश्चात् सभा ने पण्ड्याजी को निर्देश दिया कि वे आगामी अधिवेशन में स्वामीजी की पुस्तकें, कागज, हिसाब आदि को संभाल लें और शोध करके एक यादि (सूची) प्रस्तुत करें कि स्वामीजी का क्या लेना देना है। तदनुसार पण्ड्याजी ने १८८५ ई० के द्वितीय अधिवेशन में जो वार्षिक आवेदन प्रस्तुत किया उसमें स्वामीजी के द्रव्य, पुस्तक तथा अन्य वस्तुओं का भी पूर्ण विवरण दिया गया था। सभा ने अपने इसी अधिवेशन में यह निश्चय किया कि "स्वामीजी के वस्त्र, बर्तन, काष्ठ की वस्तु और परचूण वस्तु जो उपमन्त्री के पास है, उन सबको उपमन्त्री मेरठ समाज में भेज देवें। उक्त आर्यसमाज इन सब वस्तुओं की फहरिस्त को छाप कर सब आर्यसमाजों को विदित कर देवे और जो आर्यसमाज इन सब वस्तुओं में से किसी वस्तु को दूसरे की अपेक्षा विशेष न्योछावर देकर खरीदना चाहे तो वह उसे दे देवें। न्योछावर के एकत्र हुये रुपयों को उपमन्त्री के पास भेज देवें और जो वस्तु इस प्रकार से बच रहे उनको स्वामीजी के शिष्य वर्ग को बिना मूल्य भी दे देवें। इस कार्य को उक्त आर्यसमाज तीन महीनों की अवधि में समाप्त करें।"

खेद है कि उस काल के अधिकारियों ने पुण्य श्लोक महर्षि के निजी उपयोग की वस्तुओं के ऐतिहासिक महत्त्व को नहीं समझा अन्यथा यदि उन वस्तुओं को पूर्णतया सुरक्षित रक्खा जाता तो वे न केवल दर्शनीय ही होतीं अपितु पुरातात्त्विक दृष्टि से भी उनका महत्त्व होता । तथापि महर्षि के दो दुशाले, कमण्डल, पादुका, मसिपात्र, रेत घड़ी, चाकू, डाक तोलने का तुला यंत्र आदि कुछ वस्तुयें परोपकारिणी सभा के पास रहीं जिन्हें सम्प्रति ऋषि उद्यान में प्रदर्शनार्थ एक कांच की मञ्जूषा में रखा गया है ।

पं० मोहनलाल विष्णुलाल पण्ड्या ने स्वामीजी की पुस्तकों तथा अन्य पदार्थों का जो विवरण प्रस्तुत किया था वह इस प्रकार है—

पुस्तक संग्रह—पुस्तकों तथा कागज पत्रों के २४ बस्ते थे जो अजमेर से उदयपुर ले जाये गये । पुनः वैदिक यन्त्रालय प्रयाग में इनमें से कुछ पुस्तकें ग्रन्थ संशोधन कर्ता पण्डितों के उपयोगार्थ भेजी गईं । जब यन्त्रालय १८९१ में अजमेर आ गया तो ये ग्रन्थ भी अजमेर आ गये । परन्तु यह कहना कठिन है कि स्वामीजी का समस्त ग्रन्थ संग्रह अजमेर आ गया और उदयपुर में पण्ड्याजी के पास कोई ग्रन्थ नहीं रहे । इन बस्तों का विवरण दिया जाना आवश्यक है ।

वेष्टन–१—ऋग्वेद संहिता मूल, पद पाठ तथा ऋग्वेद भाष्य २ जिल्द, ऋग्वेद के वेदार्थ यत्न नामक भाष्य की एक प्रति भी इसमें थी ।

वेष्टन–२—यजुर्वेद संहिता, मूल, पदपाठ, अनुक्रमणिका और भाष्य

वेष्टन–३—सामवेद संहिता मूल तथा पदपाठ

वेष्टन–४—अथर्ववेद संहिता मूल, पदपाठ (अष्टम काण्ड पर्यन्त) अनुक्रमणिका, पण्ड्याजी द्वारा भेंट अथर्ववेद की एक हस्तलिखित प्रति ।

वेष्टन–५—शतपथ, ऐतरेय, संहितोपनिषद्, वंश, षड्विंश, कौषीतकी तथा गोपथ ब्राह्मण ।

वेष्टन–६—वेदांग विषयक ग्रन्थ, अष्टाध्यायी, निरुक्त, शिक्षा, पिंगल सूत्र, महाभाष्य-कैयट विवरण सहित, चरण व्यूह, प्रातिशाख्य आदि ।

वेष्टन–७—षट् दर्शन विषयक ग्रन्थ, सर्वदर्शन संग्रह, वेदान्त तत्त्वसार आदि ।

वेष्टन–८—उपनिषद् एवं आरण्यक (कुछ हस्तलिखित ग्रन्थ) ।

वेष्टन–९—मनुस्मृति, शुक्रनीति, संन्यास पद्धति (हस्तलिखित), संस्कारविधि गुजराती टीका, विदुर प्रजागर के उपयोगी श्लोकों का संग्रह (हस्तलेख) ।

वेष्टन–१०—इसमें अमरकोष तथा नानार्थाभिधान कोष की २ प्रतियाँ थीं ।

वेष्टन–११—वैद्यक विषेयक पुस्तकों का संग्रह। इसमें स्वामीजी लिखित औषधियों के कुछ नुस्खे भी थे ।

वेष्टन–१२—अरबी भाषा में मूल कुरान तथा स्वामीजी के निर्देशन में तैयार कुरान का हिन्दी अनुवाद (हस्तलिखित) ।

वेष्टन–१३—बाइबिल ३ (जिल्द) ऋग्वेद का मैक्समूलर कृत अंग्रेजी अनुवाद ।

वेष्टन–१४—जैनमत के ग्रन्थ—इस वस्ते में "प्राकृत भाषा का संस्कृत शब्दों के साथ अनुवाद अस्त व्यस्त स्वामीजी का बनाया लिखित पुस्तक" भी था ।

वेष्टन–१५—इसमें रामसनेही, ब्रह्मसमाज, प्रार्थनासमाज आदि के ग्रन्थों के अतिरिक्त भारतेन्दु हरिश्चन्द्र रचित कुछ ग्रन्थ, चन्द्रालोक, भोज प्रबन्ध आदि संस्कृत ग्रन्थ तथा दयानन्द दिग्विजयार्क (स्वामीजी की प्रथम प्रकाशित जीवनी) ऋग्वेदादि भाष्यभूमिका का उर्दू अनुवाद आदि ग्रन्थ थे ।

वेष्टन–१६—स्वामीजी कृत चतुर्वेद विषय सूची, चारों वेदों की अकारादि क्रम से सूची, ऋग्वेद सूचीपत्र, अथर्ववेद के मन्त्रों की सूची, उपनिषद, ऐतरेय, शतपथ, निरुक्त, निघण्टु, धातु पाठ, उणादि, वार्तिक आदि की सूचियाँ, कुरान, बाइबिल और जैन ग्रन्थों की सूचियाँ । ये सभी हस्तलेख थे ।

वेष्टन–१७—स्वामीजी रचित एवं प्रकाशित ग्रन्थ ।

वेष्टन१८—स्वामीजी रचित ऋग्वेद और यजुर्वेद भाष्य का अशुद्ध (Rough) लेख अर्थात् संस्कृत शोधकर भाषा बनाने का ।

वेष्टन–१९—ऋग्वेद और यजुर्वेद भाष्य का शुद्ध लेख (Press Copy)

वेष्टन–२०—ऋग्वेद भाष्य भाषा सहित, शुद्ध प्रति, संस्कारविधि की रफ़ काफी ।

वेष्टन–२१—कुछ पुस्तकों के रद्दी फार्म ।

वेष्टन–२२—स्वामीजी कृत और मुद्रित पुस्तकों की सूची ।

वेष्टन–२३—हिसाब की वही ४ और नोट बुक २।

वेष्टन–२४—गोरक्षार्थ हस्ताक्षरी पत्र।

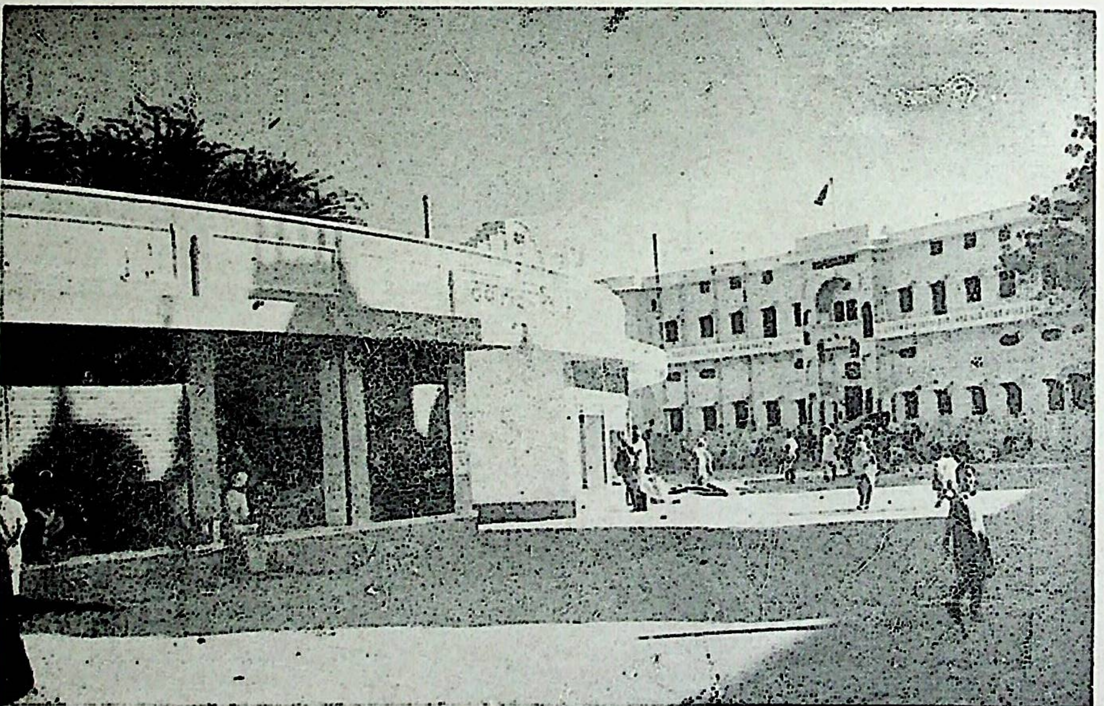
उपर्युक्त ग्रन्थों के अतिरिक्त ६३ पुस्तकें वैदिक यन्त्रालय प्रयाग में थीं। पण्ड्याजी ने जो अन्य सूचियाँ प्रस्तुत कीं वे इस प्रकार हैं—

१. कपड़ों की फेहरिस्त जो उदयपुर में हैं। (संख्या ७४)
२. " वैदिक यन्त्रालय प्रयाग में हैं। सं० ५
३. बर्तनों की फेहरिस्त जो उदयपुर में हैं। सं० २६
४. " जो वैदिक यन्त्रालय प्रयाग में हैं। सं० १८
५. काष्ठ की चीजों की फेहरिस्त जो उदयपुर में हैं। सं० ७
६. " वैदिक यन्त्रालय प्रयाग में हैं। स० २
७. फुतफर्रकात (प्रकीर्ण) चीजों की फेहरिस्त जो उदयपुर में हैं। संख्या २३
८. " वैदिक यन्त्रालय प्रयाग में हैं। सं० ३

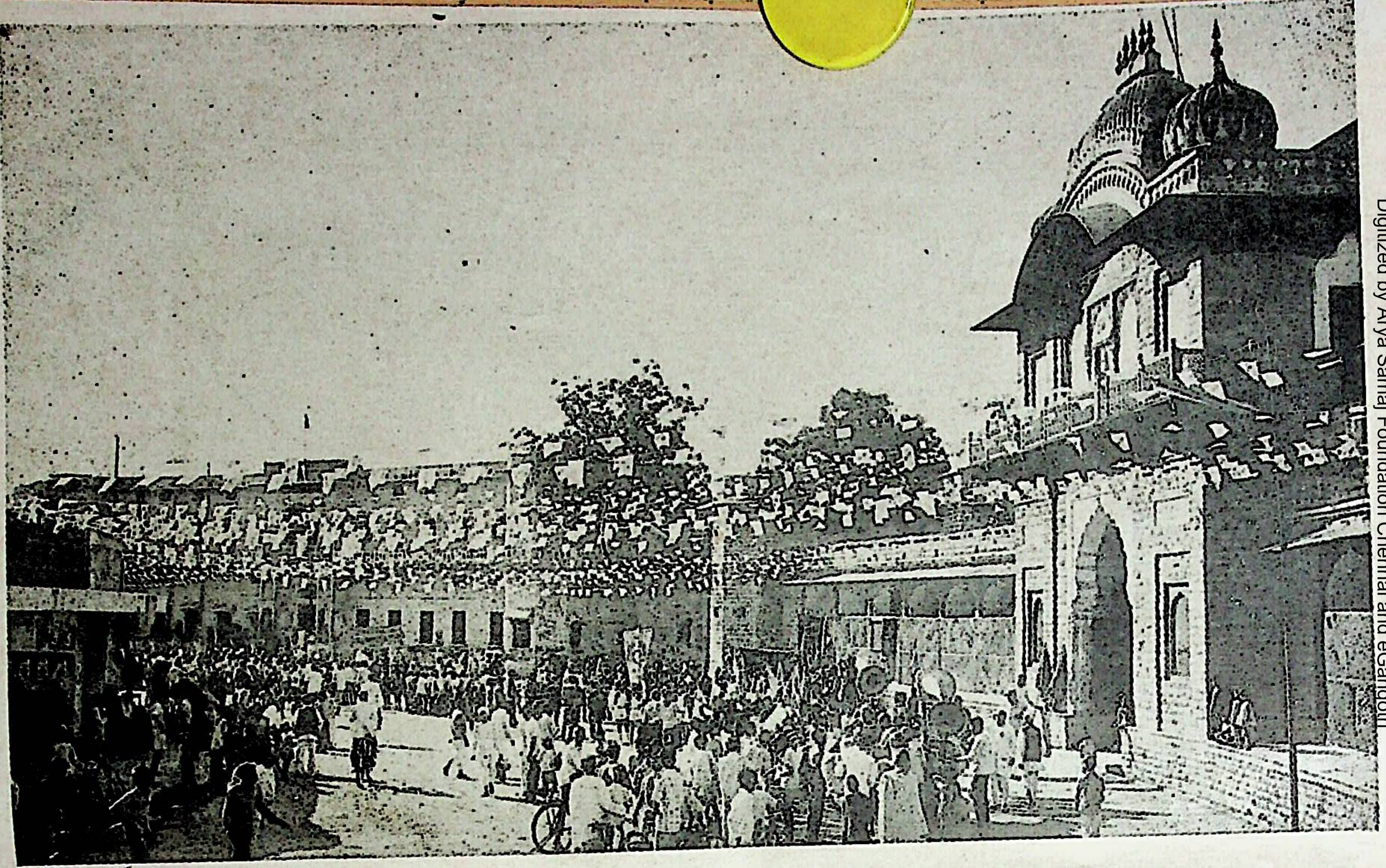
इस प्रकार हम देखते हैं कि स्वामीजी के निधन के पश्चात् उनकी निजी उपयोग की वस्तुओं तथा पुस्तकालय का सम्पूर्ण विवरण सभा ने आर्य जनता के समक्ष प्रस्तुत करना अपना कर्त्तव्य समझा। विशेष रूप से यदि उनके ग्रन्थों को यथावत् सुरक्षित रखा जा सकता तो वह विद्वानों एवं अन्वेषकों के लिये एक महत्त्वपूर्ण वस्तु होती क्योंकि उससे यह अनुमान किया जा सकता कि स्वामीजी ने किन-किन ग्रन्थों का संग्रह एवं उपयोग किया था।

□□

परोपकारिणी सभा द्वारा निर्मित



दयानन्द मार्केट के एक भाग का दृश्य



दयानन्द आश्रम केसरगंज अजमेर जहाँ परोपकारिणी सभा एवम् वैदिक पुस्तकालय के कार्यालय स्थित हैं ।

अध्याय ३

महर्षि का स्मारक : दयानन्द आश्रम

अपने संस्थापक की स्मृति को चिरस्थायी बनाने के लिये परोपकारिणी सभा के प्रथम अधिवेशन में रा० ब० पं० महादेव गोविन्द रानडे ने एक प्रस्ताव उपस्थित किया। इसमें कहा गया था कि स्वामी जी महाराज के नाम पर दयानन्दाश्रम बनाया जाय, जिसमें पुस्तकालय, अंग्रेजी वैदिक पाठशाला, विक्रयार्थ पुस्तकों का भण्डार, अनाथाश्रम, अद्भुत वस्तु संग्रहालय, यन्त्रालय और व्याख्यान गृह रहें। प्रथम अधिवेशन में उपस्थित सभासदों ने इस कार्य की पूर्ति हेतु २४ सहस्र रुपये की राशि देना स्वीकार किया तथा कार्य को पूर्ण करने के लिये व्यवस्थित योजना बनाने का निश्चय किया। सभा के द्वितीय अधिवेशन में जब दयानन्द आश्रम का विचार पुनः प्रस्तुत हुआ तो राजा जयकृष्णदास ने प्रस्ताव किया कि आगरा कालेज आगरा का प्रबन्ध ही सरकार से ले लिया जाय तथा उसे ही दयानन्द आश्रम का रूप प्रदान किया जाय। परन्तु इस प्रस्ताव के क्रियान्वयन में आने वाली बाधाओं को देखते हुये पृथक् रूप से ही आश्रम की योजना बनाई गई।

स्वामीजी के निधन के उपरान्त शाहपुरा नरेश ने आनासागर तट पर स्थित अपना उद्यान सभा को प्रदान किया था। प्रथम तो यह निश्चय हुआ कि उक्त उद्यान में ही आश्रमान्तर्गत समस्त प्रवृत्तियाँ संचालित हों, परन्तु यह देखकर कि बाग नगर से पर्याप्त दूर है यह विचार हुआ कि नगर में ही किसी उपयुक्त स्थान पर दयानन्द आश्रम की स्थापना की जाये। कालान्तर में

दयानन्द आश्रम की सुविशाल एवं भव्य इमारत केसरगंज में निर्मित हुई परन्तु आश्रम का उद्घाटन तथा शिलान्यास समारोह सभा के तृतीय अधिवेशन के अवसर पर २९ दिसम्बर १८८७ ई० के दिन आनासागर तट स्थित शाहपुरा के उद्यान में सभा मन्त्री पं० मोहनलाल वि० पण्ड्याजी के कर कमलों से सम्पन्न हुआ। राजाधिराज शाहपुरा ने उद्यान को सभा को अर्पित करते हुये एक ताम्र पत्र प्रदान किया जिसे सभा के कार्यालय में रखा गया। दयानन्द आश्रम की नींव में स्वामी दयानन्द की अस्थि एवं भस्म भूमिस्थ की गई। इस अवसर पर लाला लाजपतराय, पं० श्यामजी कृष्ण वर्मा, राव बहादुरसिंह मसूदा तथा कविराजा श्यामलदासजी ने व्याख्यान दिये।

मुख्य आश्रम भवन केसरगंज में ही बनाना निश्चित हुआ। अतः राव बहादुरसिंहजी की अध्यक्षता में एक भवन निर्माण समिति गठित की गई। इसमें राव साहब के अतिरिक्त आर्यसमाज अजमेर के प्रधान लाला पद्मचन्द जी आदि आर्यसमाज अजमेर के गण्यमान्य पुरुष थे। राव साहब ने केसरगंज चक्कर में भूमि के ५ टुकड़े (३९३० गज) आठ आना प्रति गज के हिसाब से १९६५ रुपये में क्रय किये तथा इस स्थान पर दयानन्द आश्रम के भवनों का निर्माण आरम्भ हुआ। दयानन्द आश्रम के निर्माण हेतु जो धन दान रूप में प्राप्त किया जाता था उसकी ३१ दिसम्बर १८८५ तक की राशि ४१५५३ रुपये थी। समाज के सभी वर्गों के लोगों ने इस लोकोपकारी कार्य हेतु मुक्त हस्त से दान देने का वादा किया था। आर्यसमाज अजमेर के सभासद श्री जेठमल लोढ़ा (जो स्वामी जी की रुग्णावस्था में जोधपुर जाकर उनको अजमेर लाने के लिये प्रयत्न वान् हुये) ने एक पत्र सभा के मंत्री को इस आशय का लिखा "मैं जोधपुर गया था। वहाँ मारवाड़ के श्री दरबार ने स्वामी जी महाराज का जीवन चरित्र सुन कर मुझे १०० रुपये प्रदान किये उनमें से मैं ७९ रुपये तो अजमेर समाज के मन्दिर बनाने में और २१ रुपये श्री मद्दयानन्द आश्रम के चन्दे में ज्यों के त्यों भेंट करता हूँ।" लोढ़ाजी का यह पत्र सभा के चतुर्थ अधिवेशन में पढ़ा गया तथा सभा ने निश्चय किया कि ज्येष्ठमल जैसे एक साधारण आर्य ने इस द्रव्य की कुछ भी लालसा न करके उसे अर्पण कर दिया है, अतएव उसकी सुख्याति की जावे।

दयानन्द आश्रम के भवन का निर्माण सम्पन्न हो जाने के पश्चात् उसके अन्तर्गत विभिन्न प्रवृत्तियाँ प्रचलित की गईं। प्राचीन और अर्वाचीन शिक्षा पद्धति के समन्वय से युक्त वैदिक पाठशाला की स्थापना भी परोपकारिणी सभा का लक्ष्य था। आर्यसमाज अजमेर ने इस प्रकार की एक पाठशाला की

स्थापया कर दी थी। अतः परोपकारिणी सभा ने इसी विद्यालय को अपना लिया तथा उसके प्रबन्ध का भार आर्यसमाज अजमेर पर ही छोड़ दिया। जैसा कि १८८८ ई० के अधिवेशन में निश्चय हुआ कि 'समाज ने अपने परम पुरुषार्थ से आश्रम की पाठशाला स्थापना कर दी है। निश्चय हुआ कि आश्रम की पाठशाला श्रीमती परोपकारिणी सभा की ओर से प्रबन्ध के लिये आर्यसमाज़ अजमेर के स्वाधीन रहे। इस पाठशाला के प्रथम अध्यापक श्री हर विलास शारदा थे, जो वर्षों तक सभा के मन्त्री पद को सुशोभित करते रहे। पाठशाला के संचालनार्थ सभा मासिक आर्थिक सहायता भी देती थी तथा इसका पाठ्यक्रम डी० ए० वी० कालेज लाहौर की प्रणाली पर आधारित था। यही पाठशाला कालान्तर में सभा के प्रबन्ध से पृथक् होकर डी० ए० वी० हाई स्कूल तथा दयानन्द कालेज का रूप धारण कर सकी, परन्तु इसका प्रारम्भिक नाम दयानन्द ऐंग्लो वैदिक स्कूल न होकर 'दयानन्द आश्रम ऐंग्लो वैदिक स्कूल (D. A. A. V. स्कूल) था। कालान्तर में पाठशाला की व्यवस्था और प्रबन्ध को लेकर सभा तथा आर्य समाज अजमेर में मतभेद भी उत्पन्न हुये। जब सभा ने विद्यालय का विवरण मांगा तो आर्यसमाज ने यह कह कर देने से इन्कार कर दिया कि विद्यालय पर आर्यसमाज का एकमेव स्वत्व है। इतना तो समाज के प्रतिनिधि भी मानते रहे कि विद्यालय का नाम D. A. A. V. स्कूल ही रहेगा।

सभा के मूल उद्देश्यों में अनाथ संरक्षण का भी एक महत्वपूर्ण दायित्व सन्निविष्ट था। फलतः अनाथालय की स्थापना का प्रश्न भी सभा के समक्ष आया। उस समय आर्यसमाज अजमेर और परोपकारिणी सभा की कार्य प्रवृत्तियों में सम्पूर्ण तालमेल तथा सामंजस्य था। अतः सभा ने उक्त समाज को ही अनाथालय की स्थापना का आदेश दिया। सभा उक्त अनाथालय की मासिक आर्थिक सहायता के लिये प्रतिश्रुत हुई और आर्य अनाथालय फीरोजपुर के आदर्श पर अनाथालय के संचालन का आदेश उक्त समाज को दिया। देश विभाजन के समय बंगाल के हिन्दुओं पर जो भयंकर विपत्ति आई तथा जिस प्रकार उन पर अकल्पित अत्याचार हुये, उन्हें देखते हुये सभा ने पं० भगवान स्वरूपजी न्यायंभूषण को स्थिति का अवलोकन करने के लिये बंगाल (नोआखाली) भेजा तथा आर्यसमाज रिलीफ सोसाइटी कलकत्ता को ५००० रुपये सहायतार्थ भेजे। इसी प्रकार आसाम के भूकम्प एवं बाढ़ पीड़ितों की सहायता के लिये पं० धुरेन्द्र शास्त्री के द्वारा २००० रुपये की सहायता प्रदान की गई।'

वैदिक धर्म प्रचार—यदा-कदा परोपकारिणी सभा के कार्यों और

प्रवृत्तियों की चर्चा और आलोचना के प्रसंग में यह सुनने में आता है कि सभा अपने मूल लक्ष्य से भटक गई है तथा उसने अपना कर्त्तव्य और दायित्व मात्र ऋषि के ग्रन्थों के मुद्रण और प्रकाशन तक ही सीमित कर रखा है। ऐसे आलोचकों को ध्यान रखना चाहिये कि सभा के उद्देश्यों को पूरा करने में सभा पूर्ण तत्परता प्रदर्शित करती रही है। जब आर्यसमाजों और प्रतिनिधि सभाओं ने धर्म प्रचार को अपना प्रमुख लक्ष्य बना लिया तथा जब उनकी एतद् विषयक प्रवृत्तियाँ अत्यन्त व्यापक हो गईं तो सभा के लिये इस सम्बन्ध में कुछ अधिक इति कर्त्तव्य शेष भी नहीं रहा। तथापि वह अपने सीमित साधनों से वेद प्रचार के कार्य में प्रारम्भ से ही दत्तचित्त रही। सभा ने अपने प्रथम अधिवेशन में ही स्वामीजी के शिष्य रामानन्द ब्रह्मचारी को अध्ययनार्थ ४ रुपये मासिक की छात्रवृत्ति प्रदान की तथा स्वामी गिरानन्द को शास्त्राध्ययन की प्रेरणा की। वैदिक धर्मोपदेशक मण्डल की स्थापना का विचार भी सभा के समक्ष आया तथा उसे क्रियान्वित करने के जिये १८९१ ई० के अधिवेशन में ८ सदस्यों की एक उप समिति बनाई गई। सभा ने अपने १९०७ के अधिवेशन में वैदिक धर्म प्रचार हेतु उपदेशकों की नियुक्ति तथा उनके व्यय को वहन करना स्वीकार किया। साथ ही विदेशों में वैदिक धर्म प्रचार हेतु उपदेशकों को तैयार करने तथा उनके मार्ग व्यय आदि के लिये सहस्रों रुपये व्यय करना स्वीकार किया। महर्षि दयानन्द जन्म शताब्दी तथा महर्षि निर्वाण अर्द्ध शताब्दी के विशाल आयोजनों में सभा का अभूतपूर्व योगदान रहा। विशेषतः निर्वाण अर्द्ध शताब्दी में तो सभा के अधिकारियों एवं सभासदों का पुरुषार्थ ही साकार हो उठा था क्योंकि यह विशाल एवं स्मरणीय आयोजन अजमेर में ही हुआ, जहाँ सभा का मुख्य कार्यालय है।

वैदिक धर्म प्रचार हेतु सभा ने अन्य जो उल्लेखनीय कार्य किये वे इस प्रकार हैं—

१. १९४० ई० के अधिवेशन के निश्चयानुसार १९४१ में होने वाली मनुष्य गणना में 'आर्य' नाम अंकित कराने विषयक प्रचार के लिये आर्य प्रतिनिधि सभा राजस्थान को ६०० रुपये वार्षिक व्यय पर एक उपदेशक नियुक्त करने का अधिकार प्रदान किया। यह उपदेशक राजस्थान सभा के तत्वावधान में जन गणना विषयक आर्यसमाज के मन्तव्य का प्रचार करेगा यह निश्चय हुआ।
२. १९४१ के वार्षिक वृत्तान्त से विदित होता है कि सभा ने अपने उपदेशक पं० महेन्द्र शर्मा को राजस्थान, उत्तर प्रदेश तथा मध्य प्रदेश में प्रचारार्थ भेजा।

३. १९४८ के अधिवेशन में वेद प्रचार विषयक वजट २५०० रु० से बढ़ाकर ५००० रुपये कर दिया।

४. देश विभाजन के पश्चात् अलवर, भरतपुर के मेवों में तथा मेरवाड़ा के मेर, मेरांत आदि लोगों में धर्म प्रचारार्थ दो उपदेशक नियुक्त किये। स्वामी वेदानन्द जी की देख-रेख में यह प्रचार कार्य सम्पन्न हुआ।

शिक्षा प्रचार के लिये सभा समय-समय पर अपना महत्वपूर्ण योगदान करती रही है। दयानन्द विद्यालय अजमेर के लिये सभा ने अपना भवन प्रदान किया तथा अजमेर के सन्निकट ग्राम्म पर्वतपुरा में संचालित वैदिक पाठशाला को सहस्रों रुपये अनुदान के रूप में दिये हैं। इस प्रकार दयानन्द आश्रम के अन्तर्गत संचालित सभी प्रवृत्तियाँ सभा के उस मूल प्रस्ताव के अनुकूल ही हैं, जो सभा ने अपने प्रथम अधिवेशन में स्वीकार किया था।

□□

अध्याय ४

वैदिक यन्त्रालय

जिस समय स्वामी दयानन्द ने वेद भाष्य तथा अन्य ग्रन्थों का लेखन एवं प्रकाशन प्रारम्भ किया तभी से पुस्तकों के मुद्रण की समस्या उनके समक्ष आई। प्रारम्भ में उनके ग्रन्थ निर्णयसागर प्रेस बम्बई तथा लाजरस प्रेस काशी में छपते रहे। ज्यों-ज्यों लेखन का कार्य द्रुतगति से बढ़ने लगा, स्वामीजी एक स्वकीय प्रकाशन संस्थान खोलने की आवश्यकता अनुभव करने लगे। अन्ततः उन्होंने वेदभाष्य मुद्रण तथा अन्य शास्त्र ग्रन्थों के प्रकाशन हेतु वैदिक यन्त्रालय की स्थापना का निश्चय किया। मेरठ तथा फर्रुखाबाद की आर्यसमाजों ने यन्त्रालय स्थापित करने हेतु आर्थिक सहायता प्रदान की। राजा जयकृष्णदास ने भी धन से सहायता दी।

अन्ततः माघ शुक्ला २, सं० १९३६ वि० गुरुवार अर्थात् १२ फरवरी १८८० ई० को काशी के लक्ष्मीकुण्ड स्थित महाराज विजयनगराधिपति के स्थान पर वैदिक यन्त्रालय की स्थापना हुई। प्रारम्भ में इसका नाम आर्य प्रकाश यन्त्रालय रक्खा गया गया था, बाद में वैदिक यन्त्रालय कर दिया गया। निवृत्ति मार्गी दयानन्द ने यन्त्रालय की स्थापना पर अपनी मनोवेदना को इस प्रकार व्यक्त किया—"आज हम पतित हो गये, आज हम गृहस्थ हो गये।" यन्त्रालय के प्रबन्धक पद पर मुन्शी बख्तावरसिंह शाहजहाँपुर निवासी की नियुक्ति ३० रुपये मासिक पर हुई। यन्त्रालय के मकान की छत पर स्वामीजी के नित्य सायंकाल व्याख्यान होते थे। यह क्रम पर्याप्त समय तक चला और इस बीच उनके १४ व्याख्यान हुये।

स्वामीजी के जीवनकाल में ही यन्त्रालय काशी से प्रयाग ले जाया गया। यन्त्रालय प्रयाग में चैत्र शु० १ सं० १९३८ वि० के दिन लाया गया। इसके

प्रबन्ध हेतु स्वामी ने मई १८८३ ई० में वैदिक यन्त्रालय प्रबन्ध कर्तृ सभा की स्थापना की। रा० ब० पं० सुन्दरलालजी इसके अध्यक्ष तथा पं० ज्वालादत्त मिश्र मन्त्री पद पर नियुक्त किये गये। इनके अतिरिक्त ६ अन्य सभासद भी समिति में रक्खे गये। मुन्शी बख्तावरसिंह ने यन्त्रालय को उन्नत करने के अनेक प्रयत्न किये परन्तु धन की गोल माल करने के कारण उन्हें प्रबन्धक पद से पृथक् कर दिया गया। तत्पश्चात् मुन्शी शादीराम[1] तथा पं० दयाराम[2] को क्रमशः इस पद पर नियुक्त किया गया। मुन्शी समर्थदान[3] स्वामी के निधन काल में प्रेस के व्यवस्थापक थे। वे विश्वास पात्र, परिश्रमी तथा सुपठित व्यक्ति थे। मार्च १८८६ में उन्होंने अपने पद का त्याग कर दिया और अजमेर से राजस्थान समाचार नामक पत्र का सम्पादन एवं प्रकाशन करने लगे। फरवरी १८८६ में परोपकारिणी सभा के मंत्री पं० मोहनलाल विष्णुलाल पण्ड्या ने प्रयाग स्थित यन्त्रालय का निरीक्षण किया। उस समय छापने की केवल एक ही मशीन थी। मुद्रण का कार्य बढ़ रहा था अतः दो प्रेस मशीनें क्रय करने की आवश्यकता प्रतीत हो रही थी।

मुन्शी समर्थदान के प्रवन्धक पद से मुक्त होने पर स्वामी जी के आद्य शिष्य पं० भीमसेन शर्मा[4] को प्रवन्धक बनाया गया। २९ दिसम्बर १८८७ को परोपकारिणी सभा के वार्षिक अधिवेशन में पं० लेखराम ने वैदिक यंत्रालय की अव्यवस्था की विस्तार से चर्चा की। इस पर प्रबन्धकर्तृ सभा के अध्यक्ष पं० सुन्दर लाल ने विस्तार से यन्त्रालय की स्थिति का उल्लेख किया तथा प्रबन्धकर्तृ सभा से अपना त्यागपत्र प्रस्तुत किया। यद्यपि उनसे आग्रह किया गया कि वे त्यागपत्र न दें परन्तु अपनी विवशता प्रकट करते हुये पं० सुन्दर लाल प्रबन्धकर्तृ सभा के अध्यक्ष पद से मुक्त हो गये। तत्पश्चात् सभा ने पश्चिमोत्तर प्रदेश (वर्तमान उत्तर प्रदेश) की आर्य प्रतिनिधि सभा को यन्त्रालय की व्यवस्था करने के लिये कहा। फलतः उक्त सभा ने प्रेस की व्यवस्था का

---

१. मुन्शी शादीराम देवनागरी नहीं जानते थे और स्वामीजी की हार्दिक इच्छा थी कि प्रेस का सारा कार्य देवनागरी में ही किया जाय अतः मुन्शी जी को पृथक् होना पड़ा।

२. पं० दयाराम ने १४ मास तक कार्य किया, पुनः पं० सुन्दर लाल के साथ रंगून चले गये।

३. मुन्शीजी की नियुक्ति २ जुलाई १८८२ को हुई।

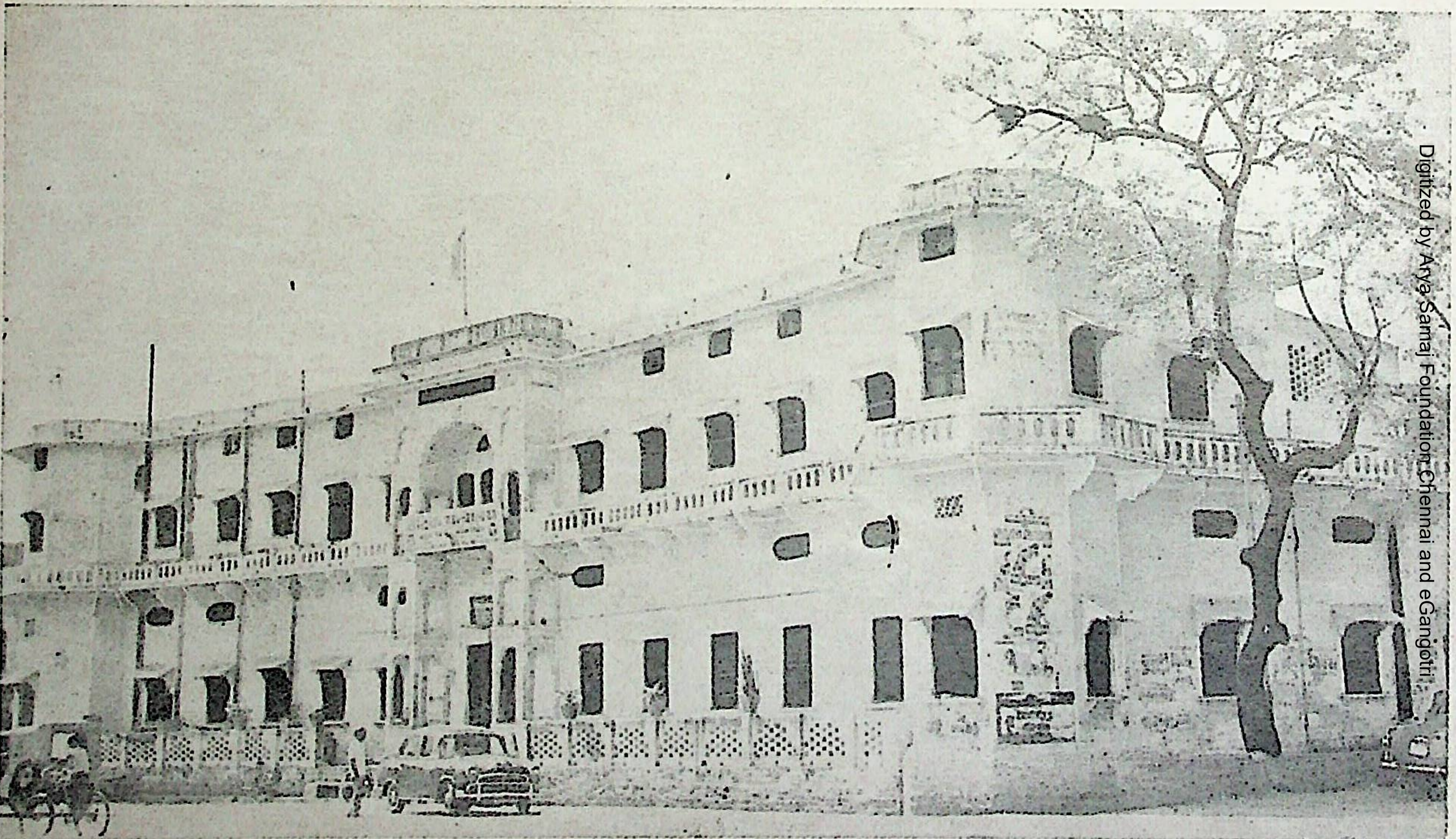
४. पं० भीमसेन शर्मा ने जुलाई १८८७ ई० तक कार्य किया।

भार अपने जिम्मे ले लिया। पं० भीमसेन शर्मा के अनन्तर मुन्शी शिवदयालसिंह[५] प्रबन्धक का कार्य करते रहे। इस समय तक यन्त्रालय की स्वामिनी परोपकारिणी सभा यह अनुभव करने लगी थी कि यन्त्रालय को अजमेर ले आना चाहिये। यों तो सभा ने अपने प्रथम अधिवेशन (दिसम्बर १८८३ ई०) में ही यह निश्चय कर लिया था कि यथा शीघ्र प्रेस को अजमेर लाया जाय तथा उसकी व्यवस्था एक समिति के जिम्मे रहे। व्यवस्थापक समिति में राव बहादुरसिंह मसूदा, रा० ब० पं० सुन्दरलाल, कविराजा श्यामलदास, पं० मोहनलाल विष्णुलाल पण्ड्या तथा प्रधान आर्य समाल अजमेर सभासद नियुक्त किये गये। परन्तु अजमेर लाने के प्रस्ताव को १८९१ ई० के पूर्व क्रियान्वित नहीं किया जा सका। इस बीच मुन्शी शिवदयालसिंह प्रबन्धक कार्य से मुक्त होकर सरकारी सेवा में चले गये, तब मुन्शी दरयावसिंह ने २ मास तक प्रबन्धक का कार्य किया। १६ अक्टूबर १८९० से पं० ज्वालादत्त शर्मा स्थानापन्न प्रबन्धकर्त्ता के रूप कार्य करते रहे। इस वर्ष में पं० ज्वालादत्त शर्मा ने यन्त्रालय का जो वार्षिक विवरण परोपकारिणी सभा को प्रस्तुत किया उसे देखने से विदित होता है कि यद्यपि यन्त्रालय में मुद्रण एवं प्रकाशन का कार्य नित्य प्रति बढ़ रहा था, परन्तु सुचारु व्यवस्था के अभाव तथा स्थायी प्रबन्धक के न रहने के कारण यन्त्रालय की स्थिति में कोई विशेष सुधार नहीं हो रहा था। यन्त्रालय की मशीनें, मुद्रित ग्रन्थ तथा पुस्तकालय आदि की सम्पूर्ण सम्पत्ति लगभग सवा लाख रुपये की १८९० ई० में दिखाई गई है।

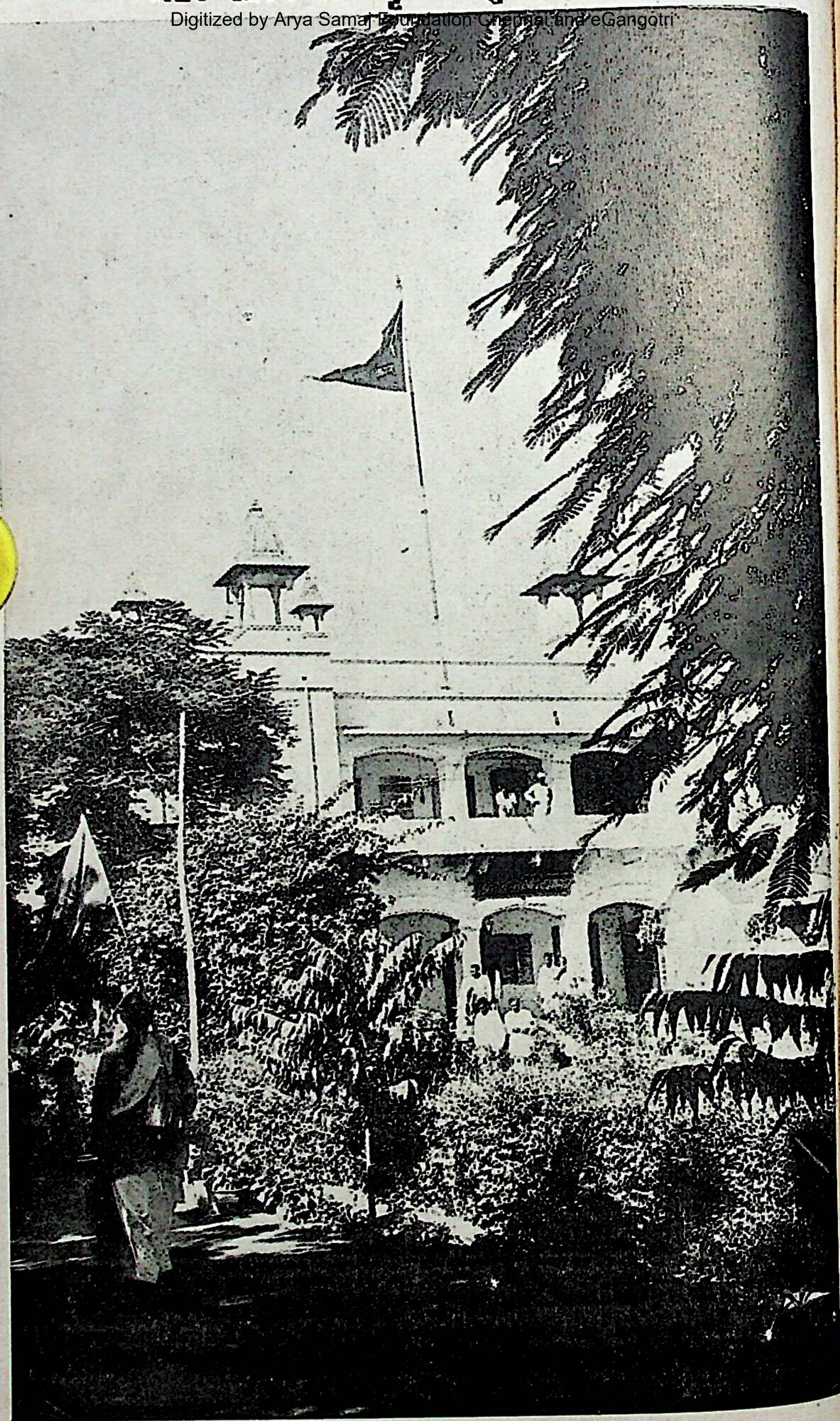
दिसम्बर १८९० की परोपकारिणी सभा की वार्षिक साधारण सभा ने प्रस्ताव स्वीकार कर यंत्रालय का अजमेर स्थानान्तरित करना सुनिश्चित कर दिया। पश्चिमोत्तर प्रदेश की प्रतिनिधि सभा ने भी यंत्रालय की और आगे व्यवस्था करने में अपनी असमर्थता तार द्वारा व्यक्त कर दी थी। फलतः १ अप्रैल १८९१ को यन्त्रालय अजमेर ले आया गया। डी० ए० वी० कालेज, लाहौर के अध्यापक भक्त रैमलदास को एक वर्ष के लिये ४० रुपये मासिक वेतन पर वैदिक यन्त्रालय का प्रबन्धक १ जनवरी १८९१ को नियुक्त किया गया। यन्त्रालय की व्यवस्था को सुचारु बनाने के लिये अधिष्ठाता का पद नियत किया गया तथा पं० श्यामजी कृष्ण वर्मा प्रथम अधिष्ठाता बने। ऐसा प्रतीत होता है कि अधिष्ठाता पं० श्यामजी तथा प्रबन्धक भक्त रैमल के पारस्परिक सम्बन्धों में पर्याप्त कटुता और तनाव किन्हीं कारणों से उत्पन्न हो गया। अतः सभा ने सितम्बर १८९१ में अपना नैमित्तिक अधिवेशन आमंत्रित कर इस

---

५. मुन्शीजी ने अगस्त १८९० तक कार्य किया।



जहाँ महर्षि की स्मृतियाँ सुरक्षित हैं



[सरस्वती भवन, साधु आश्रम

स्थिति पर विचार किया। प्रवन्धक और अधिष्ठाता दोनों ने ही अपने अपने पदों से त्यागपत्र दे दिये जिन्हें स्वीकार कर लिया गया। पं० राम दुलारे वाजपेयी अधिष्ठाता नियुक्त हुये तथा प्रवन्धक के लिये समाचार पत्रों में विज्ञापन प्रकाशित कराने का निश्चय हुआ। इस समय यन्त्रालय की पूंजी ५००० रुपये के लगभग थी। भक्त रैमलदास के पश्चात् पं० यज्ञदत्त शास्त्री प्रवन्धक नियुक्त हुये। आपके गवर्नमेंट स्कूल में अध्यापक नियुक्त हो जाने के कारण प्रवन्धकर्त्ता का पद पुनः रिक्त हो गया। अब इस पद पर पं० भीमसेन शर्मा, पं० ज्वालादत्त, पं० देवी शंकर नागर, पं० मोतीलाल दलाल, डा० केशवदेव शास्त्री तथा वावू ब्रह्मानन्दजी क्रमशः १९०७ तक रहे।

वैदिक यन्त्रालय को प्रारम्भ में दयानन्द आश्रम के भवन में ही रखा गया। कालान्तर में उसके लिये पृथक् भवन का निर्माण कराया गया। भवन निर्माण का दायित्व आर्य समाज अजमेर के वावू पद्मचन्द को सौंपा गया जिसे उन्होंने योग्यता पूर्वक वहन किया। समयान्तर में जब यंत्रालय के कार्य में वृद्धि हुई तो १९२३ ई० में भवन की दूसरी मंजिल का निर्माण सम्पन्न हुआ। प्रारम्भ में यंत्रालय तथा पुस्तक बिक्री विभाग का कार्य एक ही प्रवन्ध समिति के जिम्मे था। परन्तु १९०६ के अधिवेशन में यह निश्चय किया गया कि यन्त्रालय के लिये पृथक् उप सभा गठित की जाय। तदनुसार श्री पद्मचन्दजी, श्री रामविलासजी तथा श्री शिवप्रसादजी की प्रवन्ध उप समिति बनाई गई।

इस समय यन्त्रालय की पूंजी १०,००० रुपये की थी। पं० भक्तराम प्रवन्धक पद पर नियत किये गये। आपने १९०९ ई० के नवम्बर मास तक कार्य किया। तत् पश्चात् उनके त्यागपत्र दे देने पर पं० हरिश्चन्द्र त्रिवेदी प्रबन्धक नियुक्त किये गये। आपने १९१९ ई० तक कार्य किया। इस समय तक यन्त्रालय की पूंजी में वृद्धि होकर २०,००० रुपये तक हो गई। त्रिवेदी जी की मृत्यु के पश्चात् फहतपुर (उ० प्र०) निवासी श्री मथुराप्रसादजी शिवहरे प्रवन्धक वनाये गये। शिवहरे जी के कार्यकाल में प्रेस में आशातीत उन्नति हुई। नई नई मशीनें लगाई गईं तथा व्यवसाय में भी भरपूर प्रगति हुई। विभिन्न रेलवे कम्पनियों का मुद्रण कार्य यन्त्रालय में होने लगा। अजमेर के पुराने प्रेस, मिशन प्रेस का सामान सस्ते मूल्य पर खरीद लिया गया। वार्षिक लाभ की मात्रा बढ़ गई और स्वल्प काल में ही यन्त्रालय राजस्थान के सर्व-श्रेष्ठ मुद्रणालय के रूप में प्रतिष्ठित हो गया। इस उन्नति का श्रेय प्रवन्ध समिति के प्रधान श्री राम विलास जी शारदा तथा मन्त्री श्री चुन्नीलालजी

गुप्त को है। १९२१ ई० में इस समिति में श्री राम विलासजी प्रधान, श्री चुन्नीलाल जी मन्त्री तथा मास्टर कन्हैयालाल जी एवं बाबू राम जीवन जी सदस्य के पद पर थे।

श्री मथुरा प्रसाद शिवहरे ने जुलाई १९३१ तक प्रवन्धक पद पर कार्य किया। उनके कार्यकाल में सभा ने महर्षि जन्म शताब्दी के अवसर पर दयानन्द ग्रन्थमाला का प्रकाशन किया तथा अन्य ग्रन्थों को भी सस्ते मूल्यों पर प्रकाशित किया। शिवहरेजी ने जव आर्य साहित्य मण्डल का संचालन करना आरम्भ किया तो यन्त्रालय के प्रवन्धक पद से मुक्त हो गये। अब उनका स्थान श्री चांदमल चण्डक ने लिया। श्री चण्डकजी इस पद पर कई वर्षों तक कार्य करते रहे। तत्पश्चात् प० भगवान स्वरूपजी न्यायभूषण ने प्रवन्धकर्त्ता का कार्य स्वीकार किया। न्यायभूषण जी एक कुशल व्यवस्थापक तथा परिश्रमी व्यक्ति तो थे ही, वे आर्य समाज के लगनशील कार्यकर्त्ता तथा विद्वान् भी थे। यन्त्रालय के प्रबन्धक पद पर रहते हुये आपने आर्य प्रतिनिधि सभा राजस्थान की बहुमुखी गतिविधियों में भाग लिया तथा प्रान्तीय आर्य सामाजिक संगठन के वर्षों तक कर्णधार रहे। इनके कार्यकाल में यन्त्रालय ने भी आशातीत उन्नति की। टीटागढ़ पेपर मिल की एजेन्सी, गैंगेंज स्याही की एजेन्सी आदि से यन्त्रालय को पर्याप्त आर्थिक लाभ हुआ, यद्यपि विभिन्न व्यावसायिक कठिनाइयों के कारण अनेक उतार चढ़ाव भी आते रहे। १९६३ में पं० भगवानस्वरूपजी ने अवकाश ग्रहण किया तथा श्री यतीशचन्द्र मित्तल प्रवन्धक पद पर नियुक्त किये गये। जनवरी १९६६ में श्री मित्तल के चले जाने पर श्री जवाहरलाल सिंह ने एक वर्ष तक कार्यवाहक प्रवन्धकर्त्ता के पद पर कार्य किया। तत्पश्चात् १९६७ में श्री सुरेन्द्र प्रकाश जी शर्मा इस पद पर नियुक्त हुये। जून १९७३ से श्री सतीशचन्द्र शुक्ल वैदिक यन्त्रालय के प्रबन्धकर्त्ता पद कार्य कर रहे हैं।

प्रबन्ध व्यवस्था में परिवर्तन—

अब तक यन्त्रालय की व्यवस्था के लिये परोपकारिणी सभा एक प्रबन्ध कर्तृ समिति की नियुक्ति करती थी। यह पद्धति १९५५ तक चलती रही। परन्तु १९५५ के अधिवेशन में सभा ने यह निश्चय किया कि अब भविष्य में यन्त्रालय के लिये प्रबन्ध कर्तृ सभा के गठन की आवश्यकता नहीं है। इसे सभा की कार्यकारिणी अपनी देख-रेख में संचालित करेगी। इस प्रकार यन्त्रालय की व्यवस्था सभा के मन्त्री तथा उसके द्वारा कार्यकारिणी के अधिकार में आ गई।

यन्त्रालय के जीवन में प्रमुख रूप से संकट काल तव आया जबकि १९५३-५४ के वर्ष में विभिन्न कारणों से प्रेस को घाटा उठाना पड़ा। अन्य भी अनेक प्रकार की आपत्तियाँ आई जिनके कारण यन्त्रालय के संचालकों ने एक वार तो उसे ठेके पर उठाने अथवा वेंचने तक का विचार कर लिया था। शाहपुराधीश श्री उम्मेदसिंहजी ने इस समय अपने राज्य की ओर से प्रेस को ठेके पर चलाने का विचार व्यक्त किया था। १९५५ के मन्त्री के प्रतिवेदन से यन्त्रालय की इस स्थिति का भली भांति ज्ञान होता है। यन्त्रालय में छपाई का कार्य बिलकुल वन्द कर दिया गया था तथा महर्षि के अधूरे छपे ग्रन्थों को अन्य प्रेसों में छपाने की व्यवस्था की गई। परन्तु १९५६ ई० में सभा के अधिवेशन में यह निश्चय हुआ कि यन्त्रालय को मुख्यतया अपने प्रकाशन के लिये चलाया जाय तथा उसकी व्यवस्था में आवश्यक सुधार किया जाय। इस प्रकार लगभग पौने दो वर्ष वन्द रहने के पश्चात् १९५७ ई० में यन्त्रालय को पुनः चालू किया गया। पुराने यन्त्र वेच दिये गये, नई मशीनें तथा नवीन उपकरण मंगाये गये तथा यन्त्रालय का सर्वांगीण परिष्कार किया गया।

सन् १९५७ में वैदिक यन्त्रालय को पुनः कार्य आरम्भ होने के पश्चात् आधुनिक मशीनों से सज्जित किया गया। सन् १९५७ ही में यहाँ ऑटोमेटिक मशीनों को स्थापित किया गया। मुद्रण के क्षेत्र में वैदिक यन्त्रालय राजस्थान एवम् मध्य प्रदेश क्षेत्र में सर्वोत्तम मुद्रणालय के रूप में जाना जाता है।

सन् १९६७ में यन्त्रालय में ब्लॉक विभाग की पुनःस्थापना की गई। इस विभाग की कमी बहुत महसूस की जा रही थी। अब यन्त्रालय में छपाई सम्बन्धी पूरे विभाग कार्यरत हैं।

वैदिक यन्त्रालय अजमेर क्षेत्र के लिये टीटागढ़ पेपर मिल्स कलकत्ता एवम् गेंजेज प्रिंटिंग इंक्स फैक्ट्री कलकत्ता के लिये सन् १९३५ से वितरक नियुक्त है।

महर्षि के हस्तलिखित ग्रन्थों से मिलान करके वेद एवम् अन्य महर्षि कृत ग्रन्थों का मुद्रण वैदिक यन्त्रालय का लक्ष्य है किन्तु आर्य समाज के अन्य ग्रन्थों का मुद्रण भी सम्पन्न होता है। यहां एक छोटे से विजिटिंग कार्ड से लेकर ग्रन्थों का मुद्रण पूर्ण दक्षता के साथ सम्पन्न होता है। कम मूल्यों पर महर्षि के ग्रन्थों को सुलभ कराना पहला लक्ष्य है। शेष समय में अन्य व्यावसायिक कार्य किये जाते हैं।

□□

अध्याय ५

श्रीमद्दयानन्द वैदिक पुस्तकालय

दयानन्द आश्रम की योजना में एक वृहत् पुस्तकालय की स्थापना का प्रावधान रक्खा गया था। तदनुसार सभा ने अपने १८९० के अधिवेशन में निश्चय किया कि पुस्तकालय की स्थापना अविलम्ब कर दी जाये। स्वामी दयानन्द का निजी पुस्तक संग्रह बहुत विशाल था, जिसे उनके निधन के पश्चात् सभा के उपमन्त्री पण्ड्याजी उदयपुर ले गये थे। कुछ पुस्तकें जो वैदिक यन्त्रालय के उपयोग की थीं, प्रयाग भेज दी गईं। जब दयानन्द आश्रम के भवन बन गये तो पुस्तकें पुनः अजमेर ले आई गईं और २९ दिसम्बर १८९० को विधिवत् पुस्तकालय की स्थापना हुई। धीरे धीरे पुस्तकालय में पुस्तकों की संख्या बढ़ने लगी। मुन्शी समर्थदान, पं० मोहनलाल विष्णुलाल पण्ड्या आदि ने स्वरचित ग्रन्थ सभा को पुस्तकालय हेतु भेंट किये। प्रतिवर्ष पुस्तकालय में ग्रन्थों की वृद्धि होती रही। समय-समय पर पुस्तकों के समुचित रख रखाव, पुस्तकों को सुव्यवस्थित करने, उनकी सूची बनाने आदि के लिये विशेष प्रयत्न किये जाते रहे। सभा की सदा यह चेष्टा रही कि पुस्तकालय की निरन्तर वृद्धि होती रहे तथा उसे शोधार्थी विद्वानों के लिये नितान्त उपयोगी बनाया जा सके।

पं० युधिष्ठिरजी मीमांसक ने अपने दि० ५-१२-४८ के पत्र द्वारा सभा से निवेदन किया कि अजमेर में एक वृहत् पुस्तकालय की स्थापना की जाय, जिसमें हस्तलिखित ग्रन्थ तथा अन्य दुर्लभ पुस्तकों का संग्रह रहे। पं० भगवद्दत्त जी के संयोजन में सभा ने इस कार्य हेतु एक उपसमिति का निर्माण किया। इसी कार्य को सुचारु रूप से करने के लिये सभा ने अपने १९५० के अधिवेशन

में वैदिक पुस्तकालय में विद्यमान ग्रन्थों का सूची पत्र बनाने तथा उसे प्रकाशित करने का निश्चय किया।

सभा के इस पुस्तकालय में सम्प्रति लगभग १० हजार पुस्तकें विद्यमान हैं, जिनमें वेद, वेदांग, उपवेद, उपांग, इतिहास, पुराण, साहित्य आदि संस्कृत शास्त्र ग्रन्थों के अतिरिक्त जैन, बौद्ध तथा अन्य मतों से सम्बन्धित सैकड़ों ग्रन्थ हैं। साथ ही आर्य समाज के प्रवर्तक ऋषि दयानन्द के विभिन्न ग्रन्थों के विभिन्न संस्करण, विभिन्न भाषाओं में उनके अनुवाद तथा आर्यसमाज से सम्बन्धित ऐतिहासिक, सैद्धान्तिक तथा आलोचनात्मक एवं परिचयात्मक साहित्य भी है। इसी प्रकार हिन्दी काव्य, नाटक, उपन्यास, इतिहास आदि के सहस्रों दुर्लभ ग्रन्थ भी पुस्तकालय में है। अंग्रेजी के विभिन्न साहित्यांगों से सम्बन्धित ग्रन्थों के अतिरिक्त इतिहास, राजनीति, धर्म, दर्शन, कानून, जीवनी, संस्मरण आदि विषयों से सम्बन्धित ग्रन्थ भी प्रचुर संख्या में हैं। इनके अतिरिक्त आर्यसामाजिक तथा अन्य साहित्यिक प्राचीन पत्र पत्रिकाओं की दुर्लभ संचिकायें भी उपलब्ध हैं।

इस पुस्तकालय में समय-समय पर विभिन्न विशिष्ट व्यक्तियों के वैयक्तिक ग्रन्थ संग्रह भी सम्मिलित किये गये। उदाहरणार्थ, पं० चन्द्रधर शर्मा गुलेरी, देशभक्त कुं० चांदकरण शारदा, प्रो० घीसूलाल, पं० भगवान स्वरूप न्याय भूषण आदि ने अपनी निजी पुस्तकें इस पुस्तकालय को भेंट की। दी० ब० हरविलास शारदा जैसे मनीषी विद्वान् ने इस पुस्तकालय में उत्तमोत्तम पुस्तकें संग्रह की।

विगत अनेक वर्षों में विभिन्न अनुसंधान एवं शोध विद्वानों ने इस पुस्तकालय से लाभ उठाया है। इसका संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है। पं० युधिष्ठर मीमांसक ने स्वरचित ग्रन्थ 'ऋषि दयानन्द के ग्रन्थों का इतिहास' तथा डा० सुधीर कुमार गुप्त ने अपने शोध प्रबन्ध 'दयानन्द सरस्वती की वेदभाष्य शैली' के लेखन में उक्त पुस्तकालय की सहायता ली। इसी प्रकार पं० श्री जगदीश मित्र शर्मा (आर्य समाज के इतिहास लेखन में), प्रो० चन्द्रमणि सोनवणे वेदालंकार (आर्य समाज का हिन्दी गद्य साहित्य), प्रो० मदन मोहन जावलिया (आर्यसमाज की हिन्दी पत्रकारिता को देन), श्री राधेश्याम रूनवाल (राजस्थान का सामाजिक और राजनैतिक विकास तथा आर्य समाज), श्री पीयूष गुलेरी (चन्द्रधर शर्मा गुलेरी-व्यक्तित्व एवं कृतित्व) आदि शोधार्थी विद्वानों ने भी पुस्तकालय में उपलब्ध सामग्री से यथेच्छ सहायता ली। आस्ट्रेलिया के राष्ट्रीय विश्व विद्यालय में भारतीय संस्कृति के प्राध्यापक डा० जार्डन्स ने

'स्वामी दयानन्द और भारतीय पुनर्जागरण' विषयक अपनी शोध कृति का प्रणयन करने हेतु जब सामग्री संचयार्थ भारत में आये तो लगभग १ सप्ताह तक इस पुस्तकालय के ग्रन्थ संग्रह का अध्ययन करते रहे। सभा की यह योजना है कि इस पुस्तकालय का विकास शोधार्थी विद्वानों के लिये उपयोगी एक बृहत् संस्थान के रूप में किया जाय। जो शोध छात्र अध्ययन हेतु आयें उनके निवासादि की सुविधा भी रहे ताकि वे इस पुस्तकालय में विद्यमान अलभ्य ग्रन्थों का सम्यक् लाभ उठा सकें।

□□

अध्याय ६

वैदिक पुस्तकालय (ग्रन्थ विक्रय विभाग)

ऋषि दयानन्द ने वैदिक यन्त्रालय की स्थापना ही स्वरचित वेद भाष्यादि ग्रन्थों के मुद्रण, प्रकाशन तथा जनता में उनके प्रचार एवं प्रसार के लिये की थी। अतः मुद्रण के अनन्तर ग्रन्थों को वेचने के लिये भी यन्त्रालय के कर्मचारियों को यत्नशील रहना पड़ता था। प्रारम्भ में पुस्तक विक्रय विभाग भी यन्त्रालय के अन्तर्गत ही था, परन्तु १८९० के अधिवेशन में प्रस्ताव संख्या ८ के द्वारा वैदिक पुस्तकालय (विक्री विभाग) की पृथक स्थापना की गई। १९०७ के अधिवेशन में बुक डिपो के लिये पृथक् प्रवन्धकर्तृ सभा नियुक्त की गई जिसके सदस्य श्री पद्मचन्दजी, श्री ठाकुर कर्णसिंहजी, श्री हरविलास सारड़ा तथा अधिष्ठाता वैदिक यन्त्रालय (पदेन) बनाये गये। तब से पर्याप्त समय तक वैदिक पुस्तकालय (विक्री विभाग) की व्यवस्था इसी प्रकार गठित प्रबन्धकर्तृ समिति के द्वारा होती रही। १९०७ के अधिवेशन में वैदिक पुस्तकालय की व्यवस्था एवं संचालन के लिये विस्तृत नियम बनाये गये जिनके अनुसार इस विभाग की सफलतापूर्वक प्रगति होती रही।

प्रारम्भ में जब परोपकारिणी सभा को ही स्वामीजी के ग्रन्थों को मुद्रित करने तथा प्रकाशित करने का एकमेव स्वत्व प्राप्त था, तब पुस्तकालय को पर्याप्त लाभ होता रहा, परन्तु कापी राइट की अवधि के समाप्त हो जाने पर अन्यान्य प्रकाशकों (यथा आर्य साहित्य मण्डल अजमेर, गोविन्दराम हासानन्द कलकत्ता, दिल्ली, रामलाल कपूर ट्रस्ट अमृतसर, सार्वदेशिक सभा दिल्ली) ने भी स्वामीजी के ग्रन्थों को प्रकाशित करना आरम्भ कर दिया। इससे सभा के बिक्री विभाग को पर्याप्त क्षति उठानी पड़ी, परन्तु आर्यजगत् को आश्वस्त

करने में यह सभा सफल रही कि सभा के प्रकाशन महर्षि के हस्तलेखों से मिलान कर छपाये जाते हैं अतः वे सर्वथा शुद्ध एवं प्रामाणिक हैं।

सामान्यतया आर्य जगत् में यह धारणा प्रचलित है कि परोपकारिणी सभा को महर्षि के ग्रन्थों की विक्री से लाखों रुपयों की आय होती है। परन्तु यह विचार भ्रम पूर्ण है। एक समय था जब कि सभा को ऋषि के समस्त ग्रन्थों को छापने का एकाधिकार प्राप्त था, परन्तु अब, जबकि विभिन्न प्रकाशक विना इस बात पर ध्यान दिये कि उनके द्वारा प्रकाशित महर्षि के ग्रन्थों की शुद्धता एवं प्रामाणिकता किस कोटि की है, लगातार ऋषि के ग्रन्थ छापते चले जा रहे हैं तथा अत्यन्त साधारण कागज लगाकर उन्हें अत्यन्त असावधानी के साथ पाठक वर्ग के समक्ष प्रस्तुत कर रहे हैं, यह विचारणीय है कि वैदिक पुस्तकालय के द्वारा प्रकाशित स्वामीजी के साहित्य का प्रसार किस प्रकार आर्थिक रूप से लाभदायक हो सकता है। अतः इस भ्रम का निराकरण हो जाना चाहिये कि सभा स्वामीजी के ग्रन्थों को बेचकर पर्याप्त धन अर्जित कर रही है।

□□

अध्याय ७

परोपकारी—सभा का मुख पत्र

सभा का अपना मुख पत्र होना चाहिये जिसके माध्यम से सभा की प्रवृत्तियाँ तथा आर्यसमाज के देशोन्नति विषयक कार्यों को जन साधारण तक पहुँचाया जा सके, इस उद्देश्य को लक्ष्य में रख कर 'परोपकारी' पत्र के प्रकाशन का निश्चय हुआ। सभा के द्वितीय अधिवेशन में उपमन्त्री पं० मोहन लाल वि० पण्ड्या ने एतद् विषयक प्रस्ताव उपस्थित किया जिस पर निश्चय हुआ कि 'परोपकारी' नामक एक षाण्मासिक पुस्तक हिन्दी भाषा में सम्पादन होकर प्रकाश हुआ करे और उसमें ६ महीनों के व्यवहारों के समाचार मुद्रित हुआ करे। यह कार्य पं० मोहनलाल पण्ड्या के आधीन हो।"

इसी निश्चय के अनुसार परोपकारी का प्रथम अंक कार्तिक शुक्ला १ सं० १९४६ वि० (१८८९ ई०) में प्रकाशित हुआ। इसका वार्षिक मूल्य १।) रुपये निर्धारित किया गया। प्रारम्भ में संस्कृत के ८ श्लोक प्रकाशित हुये जो इस प्रकार हैं—

श्रीमद्वैदिक मार्ग मूल भवनं यज्जैन बौद्धादिना
मन्येषांयवनादिदुर्ग्रह दशापन्नं विपन्नं भुवि।
मग्नंजीर्णमभून्निरङ्कमभितः काल प्रवाहेण तद्
प्रोद्धर्तुं यतमान एष पुरुषः स्वामी दयानन्द जित् ॥१॥

येन स्वीयसमस्त सौख्यनिचयं संत्यज्य सांसारिक
स्वार्थं व्यर्थमिति प्रपद्य मनसा संयापितं जीवितम्।
पुण्यासूपकृतिस्वथश्रुतिमया वेशैर्विशेषणे यो
गर्हां चापि गृहं विसृज्य सततं देशोपकारे स्थितः ॥२॥

न निर्दोषो जगत्यां वा पुरोभागि पुरः पुमान् ।
तथापि धन्यो यतिराड् दयानन्द सरस्वती ।।३।।

यद्यपि तदीयकार्यमार्यवरेण प्रभूत मासाद्य ।
परलोके प्रस्थितमपि परोपकारि प्रवन्धमावध्य ।।४।।

स्मृत्वा परमात्मानमात्मानं जानता नरेणेमे ।
द्रष्टव्या उद्देशाः कर्त्तव्या सत्कृतिः परोपकृतिः ।।५।।

प्रचारो वेदानां तदवयवजानां बहुविधा
विधेया व्याख्यान्यैरपि पठनमध्यापनमनु ।
तदुक्तीनामेव श्रवणमनिशं श्रावणमथो
विधातव्यं तन्मुद्रणमथ च मुद्रापणमिति ।।६।।

श्रुतिप्रोक्तो धर्मः सततमुपदेश्यः समुचितः
श्रुतीनां शिक्षायाः करणमथ तत्कारणमपि ।
तदस्तद्वक्तॄणां सपदि विनियम्याभिविषयम् ।
ग्रहीतव्यं सत्यं त्वरितमनृतत्याग इतिच ।।७।।

अनाथ दीन भारतीय रक्षणं सुशिक्षणम् ।
विधाय पोषणं च तद्विधाप्यतां परैरथ ।।८।।

अन्तिम तीन श्लोकों में परोपकारिणी सभा के उद्देश्यों को (जो स्वीकार पत्र में वर्णित हैं) पद्य बद्ध किया गया है ।

इस अंक में वैदिक यन्त्रालय का विवरण (दयानन्दी संवत् ५), परोपकारिणी सभा का विवरण संख्या ४ (सन् १८८८ ई०) तथा आर्य सामाजिक पुरातत्त्व के अन्तर्गत स्वामी दयानन्द लिखित कुछ पत्रों का संग्रह किया गया है । ये पत्र थियोसोफिकल सोसाइटी के संस्थापकों तथा महाराष्ट्रीय विदुषी रमा बाई को लिखे गये थे ।[१] इस षट्मासिक पत्र का द्वितीय अंक भी प्रकाशित हुआ । इसके पश्चात् यह प्रकाशित नहीं हुआ ।

---

१. इस अंक में निम्न पत्र संग्रहीत हैं—
   १. स्वामीजी का कर्नल आल्काट तथा मैडम ब्लैवट्स्की के नाम पत्र वैशाख कृष्णा ५ सं० १९३५
   २. उपर्युक्त दोनों व्यक्तियों के नाम द्वितीय पत्र श्रावण कृष्णा सं १९३५ वि०
   ३. „ तृतीय पत्र १४ जुलाई १८८० ई०

१९०६ ई० के अधिवेशन में परोपकारी पत्र को मासिक के रूप में पुनः प्रकाशित करने का निश्चय किया गया। लाला मुन्शीरामजी ने एतद् विषयक योजना प्रस्तुत करते हुये कहा कि 'सरस्वती के आकार पर टाइटल पेज सहित ३६ पृष्ठों का एक मासिक पत्र निकाला जावे' पत्र का वार्षिक बजट १७०० रुपये स्वीकार हुआ। वार्षिक मूल्य २ रुपये रखा गया। प्रथम वर्ष में इसके सम्पादन का कार्य श्री भक्तराम उपमन्त्री सभा ने किया। द्वितीय वर्ष के प्रथम अंक से परोपकारी का सम्पादन कार्य हिन्दी के लब्ध प्रतिष्ठ साहित्यकार एवं पत्रकार पं० पद्मसिंह शर्मा ने स्वीकार किया। शर्माजी के सम्पादन काल में पत्र की अभूतपूर्व उन्नति हुई। उसमें विभिन्न सैद्धान्तिक लेखों के अतिरिक्त काव्य, जीवन चरित, पुस्तक समालोचना आदि के स्तम्भ रहते थे। आर्यसमाज तथा हिन्दी के सभी लेखकों का सहयोग परोपकारी को प्राप्त होता था। शर्माजी के सम्पादन में इस पत्र के ८ अंक ही निकल सके। सम्पादन कार्य पुनः वैदिक यन्त्रालय के प्रबन्धकर्त्ता श्री भक्तराम के पास आया। तीसरे वर्ष के छठे अंक के साथ ही परोपकारी की यह द्वितीय जीवन यात्रा भी समाप्त हो गई। सभा ने नवम्बर १९०९ के अधिवेशन में पत्र को वन्द करने का निश्चय किया।

---

४. मैडम ब्लैवेट्स्की के नाम स्वामीजी का पत्र मार्ग शीर्ष कृ० ६ सं० १९३७ वि०

५. मैडम ब्लैवेट्स्की का बाबू छेदीलाल के नाम पत्र ८ अक्टूबर १८८० शिमला से

६. मैडम ब्लैवेट्स्की का पत्र स्वामीजी के नाम १७ जनवरी १८८१ बम्बई से

७. स्वामीजी का पत्र कर्नल व मैडम के नाम १९ मार्च १८८१ ई०

८. स्वामीजी का पत्र रमा बाई के नाम आषाढ़ कृष्णा ६ सं० १९३६ वि०

९. रमा बाई का पत्र स्वामीजी के नाम आषाढ़ शुक्ला १ सं० १९३६ वि०

१०. स्वामीजी का रमाबाई के नाम पत्र आषाढ़ पूर्णिमा १९३७ वि०

११. रमाबाई का स्वामीजी के नाम पत्र १ अगस्त १८८० को कलकत्ता से लिखित

१२. ,, (तिथि का उल्लेख नहीं)

परोपकारी का पुनर्जन्म—

लगभग अर्द्ध शताब्दी पश्चात् सभा ने अपने मासिक पत्र को पुनरुज्जीवित करने का निश्चय किया। तदनुसार नवम्बर १९५९ (कार्तिक २०१६ वि०) से परोपकारी तृतीय बार प्रकाशित हुआ। इस बार इसके सम्पादन का भार सभा के तत्कालीन मंत्री और वर्तमान उपप्रधान डा० मानकरणजी शारदा तथा तत्कालीन संयुक्त मन्त्री एवं वर्तमान मन्त्री श्री श्रीकरण शारदा ने ग्रहण किया। वैदिक यन्त्रालय के प्रबन्धकर्त्ता पं० भगवानस्वरूप न्यायभूषण ने प्रबन्ध सम्पादक के रूप में पत्र की व्यवस्था अंगीकार की। तब से यह पत्र निर्विघ्न रूप से गत १५ वर्षों से प्रकाशित हो रहा है। इस अवधि में परोपकारी ने स्वामी नित्यानन्द जन्म शताब्दी अंक[1], स्वामी सर्वदानन्द स्मृति अंक[2], आर्य समाज के शास्त्रार्थ महारथी विशेषांक[3], 'दयानन्द उवाच' कुम्भ मेला विशेषांक[4] आदि विभिन्न महत्त्वपूर्ण विशेषांक प्रकाशित किये। दिसम्बर १९७३ में पं० भगवान स्वरूपजी न्यायभूषण के निधन के पश्चात् प्रबन्ध सम्पादन का भार सभा के वर्तमान संयुक्त मन्त्री, इन पंक्तियों के लेखक के ऊपर आया।

---

१. सितम्बर १९६० ई०
२. नवम्बर १९६१ ई०
३. अप्रेल मई १९७० ई०
४. अप्रैल १९७४ ई०



अध्याय ८

ग्रन्थ प्रकाशन

परोपकारिणी सभा की स्थापना के पीछे स्वामी दयानन्द की मूल भावना यह थी कि उनके परलोक गमन के पश्चात् भी उनके द्वारा रचित वेद भाष्य, सत्यार्थ प्रकाश आदि विभिन्न ग्रन्थों के मुद्रण एवं प्रकाशन की सुव्यवस्था उनकी स्थानापन्न यह सभा करे। तदनुकूल ही स्वामीजी के दिवंगत होने के उपरान्त उनके विभिन्न ग्रन्थों के सुव्यवस्थित सम्पादन, मुद्रण एवं प्रकाशन तथा प्रचार प्रसार की महत्त्वपूर्ण योजनायें सभा ने क्रियान्वित करने का निश्चय किया। विभिन्न ग्रन्थों के प्रकाशन के सम्बन्ध में सभा ने अब तक जो व्यवस्थायें की हैं उनका विवरण इस प्रकार है—

वेद भाष्य—स्वामीजी अपने जीवनकाल में यजुर्वेद का सम्पूर्ण तथा ऋग्वेद का अपूर्ण (सातवें मण्डल के ६२ वें सूक्त के द्वितीय मंत्र तक) भाष्य कर गये थे। संस्कृत भाष्य स्वामीजी का स्वरचित था, जबकि उसका भाषानुवाद करने का कार्य पं० भीमसेन शर्मा तथा पं० ज्वालादत्त के जिम्मे था। सभा के प्रथम अधिवेशन में ही यह निश्चय हुआ कि पं० भीमसेन एवं पं० ज्वालादत्त को भाष्यों के प्रूफ देखने तथा संस्कृत भाष्य का हिन्दी में अनुवाद करने के कार्य पर नियत किया जाय तथा उन्हें प्रति व्यक्ति २५ रुपये मासिक वेतन मिले। तदनुसार दोनों पण्डितों ने भाष्य का हिन्दी अनुवाद तथा मुद्रित सामग्री के प्रूफ शोधन का कार्य प्रारम्भ किया। सभा के समक्ष यह प्रश्न भी आया कि ऋग्वेद के स्वामीजी के अपूर्ण भाष्य को पूरा कराने की चेष्टा की जाये। १९२१ ई० के अधिवेशन में मुन्शी नारायण प्रसादजी का एक पत्र प्रस्तुत हुआ जिसमें यह विचार प्रस्तुत किया गया था कि ऋग्वेद के शेष भाष्य को पूरा

कराना चाहिये। उस समय तो पं० भगवदत्तजी, पं रामगोपालजी शास्त्री की सम्मति इस सम्बन्ध में मांगी गई, परन्तु लगभग ५०-५२ वर्ष पश्चात् जब यही समस्या सभा के वर्तमान अधिकारियों के समक्ष आई तो उन्होंने निश्चय किया कि स्वामी ब्रह्ममुनि परिव्राजक से ऋग्वेद के शेष भाग का भाष्य ऋषि शैली में ही करवा कर प्रकाशित किया जाय। तदनुसार ही प्रथम सप्तम मण्डल के कुछ अंश का भाष्य मुद्रित करवाकर विद्वानों के विचारार्थ प्रस्तुत किया गया।[1] साथ ही यह भी अनुभव हुआ कि नवम मण्डल पर्यन्त भाष्य म० म० आर्यमुनि का उपलब्ध है, किन्तु किसी भी आर्य विद्वान् ने ऋषि प्रणाली पर दशम मण्डल का संस्कृत हिन्दी भाष्य नहीं किया है। अतः सर्वप्रथम ऋग्वेद के दशम मण्डल के भाष्य के प्रकाशन की योजना क्रियान्वित की जा रही है।

जैसा कि ऊपर प्रसंग आ चुका है महर्षि कृत संस्कृत भाष्य का हिन्दी अनुवाद करने के लिये स्वामीजी के जीवनकाल में तथा उनके दिवंगत होने के बाद में भी पं० भीमसेन एवं पं० ज्वालादत्त नियुक्त थे। अतः भाष्य की हिन्दी का दायित्व पण्डितों पर ही था। प्रथम अधिवेशन में स्वीकृत हुये उपर्युक्त प्रस्ताव से यह भी स्पष्ट है कि हिन्दी अनुवाद का कार्य महर्षि के निधन के पर्याप्त बाद तक चलता रहा था। अतः सभा ने अपने १८९१ ई० के अधिवेशन में पं० श्यामजी कृष्ण वर्मा के प्रस्तावानुसार यह निश्चय किया कि वेद भाष्य के टाइटिल पेज पर सभा के प्रस्ताव सं० ५ तारीख २८ दिसम्बर १८८३ ई० के प्रमाण शोधन करा दिया जाये। तदनुसार ही वेद भाष्य के ग्रन्थों के मुख-पृष्ठ पर यह वाक्य अंकित किया जाने लगा "इसकी भाषा पण्डितों ने बनाई है और संस्कृत को भी उन्होंने शोधा है।"

वेद भाष्य के मुद्रण एवं प्रकाशन के सम्बन्ध में यदा-कदा अनेक कठिनाइयाँ उपस्थित होती थीं, जिनका समाधान करना सभा का कर्त्तव्य था। सभा ने अपने १९३२ के अधिवेशन में यजुर्वेद भाषा भाष्य की ही भांति ऋग्वेद भाषा भाष्य को भी पृथक् रूपेण प्रकाशित कराने का निश्चय किया। ऋग्वेद भाष्य को स्वामीजी के मूल हस्तलेख से मिलाकर प्रेस कापी तैयार कराने का कार्य भी १९३८ के अधिवेशन में सभा ने पं० ब्रह्मदत्त जिज्ञासु को सौंपा। इस कार्य में दो सहायक पण्डित नियुक्त करने का भी उन्हें अधिकार दिया गया। समय-समय पर वेद भाष्य के मुद्रण के समय संशोधन आदि की समस्यायें सभा के

---

१. ऋषि भाष्यतोऽग्रे ऋग्वेद सप्तम मण्डलान्तर्गतैकषष्टितम सूक्तमारभ्याष्टषष्टितम सूक्तानां भाष्यम्। जुलाई १९७२ में प्रकाशित।

समक्ष आती थीं। अतः १९५३ के अधिवेशन में वेद भाष्य के सम्बन्ध में एक उपसमिति बनाई गई, जिसके संयोजक स्वामी स्वतंत्रानन्दजी तथा सदस्य डा० मंगलदेव शास्त्री तथा पं० भगवद्दत्तजी थे। इस समिति को यह अधिकार प्रदान किया गया कि वह समय-समय पर वेद भाष्य के प्रकाशन में आने वाली बाधाओं को हल करती रहे। ऋग्वेद भाष्य ९ खण्डों में तथा यजुर्वेद भाष्य ४ खण्डों में प्रकाशित हुआ है।

ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका—सभा की ओर से ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका का संस्कृत भाग भी पृथकशः प्रकाशित हुआ।[1] १९५७ के वार्षिक अधिवेशन में पं० गंगाप्रसादजी ने यह प्रस्ताव उपस्थित किया था कि ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका के संस्कृत भाग का एक आलोचनात्मक संस्करण तैयार कराया जाय। डा० मंगलदेवजी शास्त्री को यह महत्त्वपूर्ण कार्य सौंपा गया। इसके लिये उन्हें भूमिका के हस्तलेखों के मिलान की भी सुविधा दी गई। यह कार्य भी अपूर्ण ही रहा क्योंकि डा० मंगलदेवजी अवकाशाभाव के कारण अजमेर आकर हस्तलेखों को न देख सके। हस्तलेखों को अन्यत्र भेजना सम्भव नहीं था।

सत्यार्थप्रकाश—महर्षि दयानन्द की सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण कृति सत्यार्थ-प्रकाश है। उसका प्रथम संस्करण १८७५ ई० में राजा जयकृष्णदास के द्वारा प्रकाशित हुआ। इस ग्रन्थ की रचना करने में भी राजा साहब की ही प्रेरणा थी। कालान्तर में अनेक कारणों से स्वामी दयानन्द ने सत्यार्थ प्रकाश को पूर्णतया संशोधित एवं परिवर्द्धित कर प्रकाशित करने का विचार किया। जिस समय सत्यार्थप्रकाश का उत्तरार्द्ध छप ही रहा था कि स्वामीजी का निधन हो गया। फलतः सत्यार्थप्रकाश का संशोधित द्वितीय संस्करण १८८४ ई० में प्रकाशित हो सका। स्वामीजी अपने ग्रन्थों को बोल-बोल कर लिखाते थे। लेखकों के प्रमाद से तथा मुद्रण जन्य त्रुटियों के कारण उनके ग्रन्थों में यत्र-तत्र अनेक भूलें तथा स्खलन जब पाठकों को दृष्टिगोचर होते थे तो वे स्वामीजी का ध्यान उन बातों की ओर आकृष्ट करते। अपने अत्यन्त व्यस्त जीवन में स्वामीजी को अपने ग्रन्थों की प्रेस कापी को भली भाँति देखने अथवा मुद्रण

---

१. ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका श्रीमद्दयानन्द सरस्वती स्वामिना निर्मिता या च संस्कृत प्राकृत भाष्याभ्यामुपनिबद्धा ऽऽसीत् सेदानीम् संस्कृताध्येतॄणा-मुपकाराय मूल्य सौकर्याय च प्राकृतभाषां विहाय केवलया संस्कृत भाषया प्रकाश्यते। सं० १९६० में प्रकाशित।

काल में प्रूफ आदि शोधन करने का समय भी नहीं मिलता था। यद्यपि यथा सम्भव वे स्वयं ग्रन्थ संशोधित करते थे।

महर्षि के ग्रन्थों के प्रकाशन विषयक सम्पूर्ण स्वत्व रखने वाली परोपकारिणी सभा का यह पुनीत कर्त्तव्य था कि वह अन्य ग्रन्थों की भांति सत्यार्थ प्रकाश को भी सर्वथा शुद्ध एवं परिष्कृत रूप में प्रकाशित करे। सत्यार्थ प्रकाश जैसे विशाल ग्रन्थ में, जिस में सैंकड़ों ग्रन्थों के सहस्रों उद्धरण तथा विभिन्न दार्शनिक विवेचन प्रधान विषय, अन्य मतों की समालोचना आदि के प्रकरण हों, लेखन एवं मुद्रण जन्य भूलों का रह जाना सर्वथा स्वाभाविक ही था। सभा के प्रारम्भिक युग में ही सत्यार्थप्रकाश के शुद्ध प्रकाशन का प्रश्न उठा। सभा के चतुर्थ अधिवेशन में स्वामी विश्वेश्वरानन्द एवं ब्रह्मचारी नित्यानन्द का एक पत्र पढ़ा गया जिसमें सभा का ध्यान सत्यार्थप्रकाश में विद्यमान ऐसी अशुद्धियों की ओर आकृष्ट किया गया था। उस समय तो सभा ने यह निश्चय किया कि वैदिक यन्त्रालय में कार्य करने वाले पण्डितों को यह पत्र भेजा जाये तथा उन्हें आगामी संस्करण में अशुद्ध बातों को शुद्ध करने का निर्देश दिया जाये। पं० लेखराम ने भी सभा के तृतीय अधिवेशन में यह प्रश्न उठाया था। १८९५ के अधिवेशन में सभा के सदस्य श्री रामगोपाल तथा पं० रामदुलारे वाजपेयी के प्रस्तावानुसार यह निश्चय हुआ कि सत्यार्थप्रकाश तथा स्वामीजी के अन्य ग्रन्थों में जो त्रुटियां तथा संदर्भों की भूलें हैं उनके सम्बन्ध में पूर्ण जानकारी प्राप्त की जाय तथा पं० लेखरामजी से भी इस सम्बन्ध में सम्पर्क किया जाय। तत्पश्चात् उन्हें सुधारने का उपाय भी किया जाना चाहिये।

सत्यार्थप्रकाश की प्रेस कापी मूल हस्तलेखों से मिलान करने के पश्चात् इस प्रकार तैयार की जाय कि उसे स्थिर टाइप (Stereo type) में छपाया जा सके। इस प्रयोजन की सिद्धि के लिये सभा ने अपनी १९१७ की वार्षिक सभा में एक उपसमिति बनाई गई जिसमें स्वामी श्रद्धानन्दजी, स्वामी सर्वदानन्दजी, स्वामी अनुभवानन्दजी, महात्मा हंसराजजी, पं० श्रीपाद दामोदर सातवलेकरजी जैसे विद्वानों को रखा गया। पं० बंशीधर इस समिति के संयोजक थे। सम्भवतः यह समिति कुछ अधिक कार्य नहीं कर सकी। अतः १९१८ के अधिवेशन में इस समिति का पुनर्गठन किया गया तथा स्वामी श्रद्धानन्दजी को उसका संयोजक नियत किया। पुनर्गठित उपसमिति में स्वामी श्रद्धानन्दजी, स्वामी सर्वदानन्दजी, स्वामी स्वतन्त्रानन्दजी तथा पं० भगवद्दत्तजी सभासद रूप में थे। पं० भगवद्दत्तजी ने हस्तलेखों से मिलान करने का भरपूर परिश्रम किया, फलतः सत्यार्थप्रकाश की संशोधित प्रति १९२० के अधिवेशन

में प्रस्तुत हो सकी। १९२१ के अधिवेशन में इस संशोधित प्रेस कापी के आधार पर सत्यार्थप्रकाश की ५ सहस्र प्रतियाँ छपाने का निश्चय हुआ।

सत्यार्थप्रकाश का शताब्दी संस्करण—

१९२५ ई० में ऋषि की जन्म शताब्दी पर सत्यार्थप्रकाश का १०००० का संस्करण छापा गया। इस संस्करण के सम्बन्ध में सभा का प्रस्ताव था कि सत्यार्थप्रकाश के प्रत्येक अनुच्छेद की पृथक् संख्या तथा प्रत्येक पृष्ठ में हाशिये पर पंक्तियों की संख्या अंकित की जाय। विषयानुक्रमणिका भी बनाने का आग्रह इस प्रस्ताव में किया गया तथा यह कार्य पं० भगवद्दत्तजी के सुपुर्द रहा। सत्यार्थप्रकाश के सम्बन्ध में अन्य योजनायें भी समय-समय पर प्रस्तुत होती रहीं, यद्यपि उनमें से अधिकांश का क्रियान्वयन नहीं हो सका। १९५३ के वार्षिक प्रतिवेदन में मन्त्री ने यह सुझाव उपस्थित किया कि सत्यार्थप्रकाश के विभिन्न समुल्लासों को पृथकशः पुस्तक रूप में प्रकाशित किया जाय तथा उनका उपोद्घात अथवा परिचय विशिष्ट विद्वानों से लिखवाया जाय। इसी प्रकार संस्कार विधि तथा ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका के पृथक् २ प्रकरण भी पृथक् रूप से प्रकाशित हों। इसी प्रकार १९५८ के वार्षिक प्रतिवेदन में स्थूलाक्षरों में सत्यार्थप्रकाश का एक संस्करण प्रकाशित करने का विचार प्रस्तुत किया। कुछ फार्म तैयार भी किये गये परन्तु इसी बीच स्वामी वेदानन्द तीर्थ ने यह संस्करण प्रकाशित कर दिया अतः इसकी उपयोगिता समाप्त हो गई।

सत्यार्थ प्रकाश के विभिन्न अनुवाद—

महर्षि दयानन्द के ग्रन्थों की उपयोगिता एवं उनकी लोक प्रियता को देखते हुये यह स्वाभाविक ही था कि अन्य भाषाओं में उनके अनुवाद होते। सभा के द्वितीय अधिवेशन में ही दीनापुर के डा० गंगादीन का पत्र पढ़ा गया जिसका यह आशय था कि स्वामी जी कृत ग्रन्थों के अंग्रेजी अनुवाद सभा के तत्त्वावधान में प्रकाशित होने चाहिये। अनुवाद विषयक स्वयं स्वामीजी का का ही मत प्रस्तुत करते हुये राय मूलराज ने तब कहा कि यों सामान्यतया भी महाराज अपनी पुस्तकों के अन्य भाषाओं के अनूदित किये जाने के विरोधी तो नहीं थे परन्तु उनका यह स्पष्ट मन्तव्य था कि यदि अन्य प्रान्तीय भाषाओं में अनुवाद होने लगेंगे तो जिस हिन्दी भाषा में ये ग्रन्थ लिखे गये हैं उसका सार्वत्रिक प्रचार नहीं हो सकेगा। स्वामीजी की यह भी धारणा थी कि पदार्थ विद्यादि के अपूर्ण शब्द भण्डार के कारण इन ग्रन्थों का उर्दू, फारसी में तो अनुवाद हो ही नहीं सकता। तथापि सभा ने निश्चय किया कि स्वामीजी के

ग्रन्थों के अनुवाद के सम्बन्ध में गुणावगुणों के आधार पर निर्णय किया जाय।

अतः सत्यार्थप्रकाश के विभिन्न भाषाओं में अनुवाद विषयक अनेक प्रश्न सभा के समक्ष समय समय पर आये। सभा की सुनिश्चित नीति थी कि सत्यार्थ-प्रकाश का भारत की प्रत्येक भाषा में अनुवाद होना अपेक्षित है। सभा के १९२९ के अधिवेशन में यह प्रस्ताव स्वीकार किया गया कि जिन भारतीय भाषाओं में इस ग्रन्थ का अनुवाद नहीं हुआ है उन भाषाओं में यदि कोई अनु-वाद करे तो सभा आज्ञा देने के लिये तैयार है। १८९५ के अधिवेशन में हर-विलास शारदा ने प्रस्ताव किया कि सत्यार्थप्रकाश के सर्वश्रेष्ठ अंग्रेजी अनुवाद को एक सहस्र रुपये के पुरस्कार से पुरस्कृत किया जाय तथा एतद् विषयक विज्ञप्ति विभिन्न पत्रों में प्रकाशित की जाय। इसी अधिवेशन में पं० रामदुलारे वाजपेयी का प्रस्ताव था कि सत्यार्थप्रकाश के सर्वश्रेष्ठ उर्दू, गुजराती तथा मराठी अनुवाद को प्रति अनुवाद ३०० रुपये से पुरस्कृत किया जाना चाहिये। कन्नड़ तथा उड़िया भाषा में अनुवाद कराने के विषय भी सभा के १९१७ ई० तथा १९२० ई० के अधिवेशनों में क्रमशः उपस्थित हुये थे। १९२३ के लाहौर में हुये वार्षिक अधिवेशन में सत्यार्थप्रकाश का अंग्रेजी में अनुवाद करने का कार्य प्रिन्सिपल दीवानचन्द तथा आचार्य रामदेव के सुपुर्द किया गया। अनुवाद के लिये ५०० रुपये पुरस्कार रूप में देने का भी निश्चय हुआ तथा यह आशा की गई कि अंग्रेजी अनुवाद ऋषि की जन्म शताब्दी (१९२५ ई०) के पूर्व ही प्रकाशित हो जाय। परन्तु १९२५ तक अंग्रेजी अनुवाद का कार्य सम्पन्न नहीं हुआ। १९२७ ई में सभा के समक्ष एक नवीन तथ्य आया कि सत्यार्थ-प्रकाश का एक अंग्रेजी अनुवाद जो किन्हीं प्रो० मोतीलाल द्वारा किया हुआ तथा स्वामी जी के समय का है, वैदिक यंत्रालय के कागजों में उपलब्ध है, क्या उसे सभा छपा सकती है? इस पर इसी अधिवेशन में निश्चय हुआ कि उपलब्ध अनुवाद और उसके अनुवादक की पूरी जांच की जाय तत्पश्चात् प्रिन्सि-पल दीवानचन्द तथा आचार्य रामदेव को यह अनुवाद दिखाया जाय तथा वे इस अनुवाद के सम्बन्ध में अपनी राय प्रस्तुत करें। इसी बीच लाहौर के डा० चिरंजीलाल भारद्वाज ने सत्यार्थप्रकाश का अंग्रेजी अनुवाद प्रकाशित कर दिया था, अतः सभा ने अपने दिसम्बर १९२७ के अधिवेशन में निश्चय किया कि अन्य अंग्रेजी अनुवाद को प्रकाशित कराने की आवश्यकता नहीं है।

कालान्तर में अंग्रेजी अनुवाद की उपयोगिता तथा उसे प्रकाशित करने का प्रश्न सभा के समक्ष पुनः उपस्थित हुआ। तब सभा ने अपने १९६१ के अधि-

वेशन में निश्चय किया कि डा० चिरंजीव भारद्वाज रचित अनुवाद जो अब वर्षों से अनुपलब्ध है, उसे डा० वासुदेव शरण अग्रवाल तथा डा०. मंगलदेव शास्त्री द्वारा संशोधित करा कर प्रकाशित किया जाय। जो संशोधन आदि हों उन्हें डा० चिरंजीव के पुत्र डा० सत्यकाम भारद्वाज को दिखा दिया जाय। तदनुसार कार्य आरम्भ हुआ। डा० सत्यकाम ने प्रारम्भिक समुल्लासों का संशोधन कर प्रकाशनार्थ भेजा, परन्तु उसी बीच जब मूल सत्यार्थप्रकाश के संशोधित संस्करण की तैयारी आरम्भ हुई तो यह अनुभव किया गया कि अंग्रेजी सत्यार्थप्रकाश भी इसी संशोधित सत्यार्थप्रकाश के अनुसार ही होना चाहिये। फलतः अंग्रेजी अनुवाद के मुद्रण में विलम्ब होता गया और इस योजना को छोड़ देना पड़ा।

परन्तु सत्यार्थप्रकाश का अंग्रेजी अनुवाद प्रकाशित कराने का सभा का संकल्प समाप्त नहीं हुआ। मेरठ के रा० ब० रतनलाल जी ने 'The Light Divine' के नाम से सत्यार्थप्रकाश का विशद आंग्ल भाषानुवाद किया जिसे सभा ने अनुवादक को उचित पारिश्रमिक देकर प्रकाशित करने के अधिकार प्राप्त किये। यथा सुविधा कागज आदि की कठिनाई दूर होने पर इस अनुवाद को प्रकाशित करने का सभा का ध्येय अपरिवर्तित है।

बंगला अनुवाद—आगरा कालेज, आगरा के संस्कृत प्राध्यापक पं०मोतीलाल भट्टाचार्य ने सत्यार्थप्रकाश का बंगला अनुवाद किया था। राव साहब कुचेसर के द्वारा यह अनुवाद सभा को प्राप्त हुआ। सभा ने १८९६ के अधिवेशन में इस अनुवाद को प्रकाशित करने का निश्चय किया। किसी कारणवश यह अनुवाद पर्याप्त समय तक नहीं छप सका। इसी बीच कलकत्ता के किसी प्रकाशक ने उसे प्रकाशित कर दिया। सभा ने अपने १९२४ के अधिवेशन में उक्त प्रकाशक की इस अनधिकार चेष्टा की पर्याप्त आलोचना की।

सत्यार्थप्रकाश का संशोधित संस्करण—यों तो सत्यार्थप्रकाश के द्वितीय संस्करण के प्रकाशित होने के पश्चात् से ही उसमें मुद्रण प्रमाद जन्य रह जाने वाली भूलों अथवा मूल हस्तलेख से पूर्णतया मिलान कर प्रेस कापी तैयार न किये जाने अथवा संशोधक विद्वानों के वैयक्तिक प्रमाद एवं स्खलन के कारण अनेक त्रुटियाँ रह जाती थीं। विगत ९० वर्षों की सुदीर्घ अवधि में परोपकारिणी सभा द्वारा इस ग्रन्थ के ३५ संस्करण प्रकाशित हुये। संशोधन की समस्या भी समय समय पर उठाई जाती रही, परन्तु जब सभा के अन्तर्गत विधिवत् विद्वत् समिति की स्थापना हुई तो सत्यार्थप्रकाश के सर्वांगीण संशोधन के पश्चात् उसकी प्रेस कापी बनाने का दायित्व भी इसी सभा पर पड़ा।

फलतः पं० भद्रसेन जी तथा पं० धर्मसिंह जी कोठारी को सत्यार्थ प्रकाश के विभिन्न समुल्लासों का मूल हस्तलेखों से मिलान कर संशोधित प्रति तैयार करने का कार्य सौंपा गया। इस कार्य के समाप्त होने पर विद्वत् समिति ने अपनी विभिन्न बैठकों में संशोधन कार्य का निरीक्षण किया और अन्तिम रूप से इस ग्रन्थ को मुद्रणार्थ दिया।

संस्कार विधि—सत्यार्थप्रकाश की ही भांति संस्कार विधि भी स्वामी जी का अत्यन्त लोकप्रिय ग्रन्थ है जिसमें षोडश संस्कारों का विधान किया गया है। विभिन्न कारणों से संस्कार विधि में भी अशुद्धियों का रह जाना स्वाभाविक ही था। सभा ने १९२९ के अधिवेशन में संस्कार विधि की अशुद्धियों को दूर करने के लिये तथा उसके शुद्ध प्रकाशन हेतु पं० जयदेव शर्मा विद्यालंकार को नियुक्त किया। यह निश्चय हुआ कि पं० जयदेव जी संस्कार विधि विषयक अपनी रिपोर्ट महात्मा हंसराज जी तथा पं० गंगा प्रसाद जी को दिखायें। महात्मा नारायण स्वामी जी ने सभा से यह निवेदन किया कि संस्कार विधि संशोधन सार्वदेशिक सभा तथा आर्य धर्म सभा की देखरेख में हो। इस पर सभा ने अपने १९३२ के अधिवेशन में संशोधन कार्य की पद्धति एवं उसका स्वरूप स्पष्ट करते हुये निर्देश दिया कि जिन स्थानों पर ग्रन्थ प्रमाणों के पते नहीं दिये हैं वहां कोष्ठक में पते दिये जायें तथा जहां पते या उनके उद्धरण विवादास्पद अथवा पाठ भेद वाले हों उनका उल्लेख पाद टिप्पणियों में कर दिया जाय।

सभा के ही एक सभासद स्वामी स्वतंत्रानन्दजी ने संस्कार विधि में यथेच्छ परिवर्तन कर उसे लाहौर से प्रकाशित कराया। इसमें विधि भाग मात्र ही दिया गया था तथा क्रम में भी स्वेच्छा से परिवर्तन किये गये थे। फलतः सभा ने अपने १९२९ के अधिवेशन में यह निश्चय किया कि यह पुस्तक स्वामी दयानन्द कृत नहीं है तथा स्वामी स्वतन्त्रानन्दजी का इस पुस्तक को इस प्रकार से छपाना अनुचित है। पं० गंगाप्रसाद उपाध्याय ने भी संकार विधि के संशोधन के सम्बन्ध में एक विचार सभा के सम्मुख प्रस्तुत किया था।[1] इस पर

---

१. सन् १९४६ में उपाध्यायजी ने संस्कार विधि की प्रकाशित प्रति का हस्तलेखों से मिलान कर निम्न शंकायें उपस्थित की थीं—

(अ) सामान्य प्रकरण में जहां चार मंत्र बोल कर तीन समिधायें डालने का विधान है वहां उनकी सम्मति में 'अयन्त इध्मआत्मा' इस मंत्र से पहली समिधा न डाल कर 'समिधाग्निं' 'सुसमिद्धाय' तथा 'तन्त्वा' इन ३ मन्त्रों से तीन समिधायें डालनी चाहियें।

विचारार्थ सभा ने अपने ४९ वें अधिवेशन में पं० जयदेवजी शर्मा विद्यालंकार तथा पं० ब्रह्मदत्त जिज्ञासु की एक उपसमिति बनाई। यह विषय १९४८ के अधिवेशन में पुनः प्रस्तुत हुआ। यद्यपि पं० जयदेवजी की सम्मति आ गई थी, परन्तु पं० भगवद्दत्तजी तथा पं० जिज्ञासुजी अपनी सम्मति नहीं भेज सके। तब इसविषय को स्वामी स्वतन्त्रानन्दजी तथा पं० ब्रह्मदत्तजी जिज्ञासु को इस निवेदन के साथ सुपुर्द किया गया कि वे उपाध्यायजी तथा पं० जयदेवजी के मत को समझकर अपनी राय दें।[1] अन्ततः इस समस्या का समाधान सभा के १९४९ के अधिवेशन में हुआ जब यह निश्चिय किया गया कि पं० भगवद्दत्तजी तथा पं० गंगा प्रसादजी जज ने संस्कार विधि की असली हस्तलिखित प्रति से प्रकाशित पुस्तक का मिलान कर लिया है। हस्तलेख तथा यन्त्रालय द्वारा मुद्रित पुस्तक में कोई अन्तर नहीं है, अतः संशोधन करना अनावश्यक है।

सभा के १९६० के अधिवेशन में डा० मंगलदेवजी शास्त्री ने यह सुझाव प्रस्तुत किया कि संस्कार विधि में उल्लिखित वेद मन्त्रों के अर्थ भी दिये जाने चाहियें। प्रथम तो मन्त्रार्थ तैयार करने का कार्य डा० मंगलदेवजी तथा पं० ब्रह्मदत्तजी जिज्ञासु के सुपुर्द दिया गया। डा० मंगलदेवजी जब अर्थ प्रस्तुत नहीं कर सके तो यह निश्चय हुआ कि जिन मन्त्रों के अर्थ दयानन्द भाष्य में उपलब्ध होते हैं वे तत् तत् स्थान पर, दिये जायें परन्तु जिन मन्त्रों का ऋषि भाष्य उपलब्ध नहीं है उन्हें यों ही रहने दिया जाय। १९६४ के अधिवेशन में इस सम्वन्ध में यह भी सुझाव आया कि पं० रामावतार शर्मा षटतीर्थ ने संस्कार विधि के सब मन्त्रों का अर्थ तैयार किया है, अतः ये अर्थ परिशिष्ट रूप में अर्थकर्त्ता के नामोल्लेख पूर्वक प्रकाशित किये जायें। यह प्रस्ताव क्रियान्वित नहीं हुआ।

अष्टाध्यायी भाष्य—स्वामी दयानन्द अष्टाध्यायी और महाभाष्य के आधार पर संस्कृत व्याकरण का अध्ययन कराने के प्रबल पक्षपाती थे। उनकी

(आ) विवाह प्रकरण में वर द्वारा 'सा नपूषा शिवतमा' यह मन्त्र नहीं पढ़ा जाना चाहिये क्योंकि ऋषि ने इसे संशोधन करते समय पैंन्सिल से काट दिया था, यद्यपि पूरा नहीं कट सका।

१. पं० जयदेव विद्यालंकार, पं० ब्रह्मदत्त जिज्ञासु तथा स्वामी स्वतन्त्रानन्दजी ने अपने विस्तृत पत्रों में पं० गंगा प्रसाद उपाध्याय द्वारा प्रस्तुत शंकाओं का समाधान किया तथा यह सिद्ध किया कि उल्लिखित प्रसंग संस्कार विधि में जैसे छाप रहें हैं वही उचित तथा स्वामी दयानन्द को अभिप्रेत हैं।

यह सुनिश्चित धारणा थी कि व्याकरण अध्ययन की यही आर्ष प्रणाली है। अतः उन्होंने अष्टाध्यायी का भाष्य स्वयं तैयार करने का प्रयास किया। यद्यपि यह उनके जीवनकाल में प्रकाशित नहीं हो सका, परन्तु कालान्तर में इसे प्रकाशित करने का विचार सभा के सम्मुख उपस्थित हुआ। १९१८ ई० के अधिवेशन में निश्चय हुआ कि अष्टाध्यायी टीका का जो अंश अप्राप्त है उसे आचार्य रामदेवजी तथा पं० भगवद्दत्तजी से तैयार करा लिया जाये, पुनः इस टीका को प्रकाशित कराया जाय। १९२० ई० के अधिवेशन में पं० भगवद्दत्तजी के सम्पादन में अष्टाध्यायी भाष्य को मासिक अंकों में प्रकाशित करना निश्चित हुआ। पं० भगवद्दत्तजी के सम्पादन में अष्टाध्यायी भाष्य के दो अंक प्रकाशित हुये। तत्पश्चात् वैदिक अनुसंधान विभाग (डी० ए० वी० कालेज, लाहौर) के कार्य में अत्यधिक व्यस्त रहने के कारण वे इस कार्य को प्रगति नहीं दे सके। सभा ने अपने १९३६ के अधिवेशन में अष्टाध्यायी के सम्पादन का कार्य पं० ब्रह्मदत्त जिज्ञासु के सुपुर्द किया। जब पं० ब्रह्मदत्तजी अष्टाध्यायी भाष्य का सम्यादन करने के लिये पर्याप्त समय नहीं निकाल सके तो म० हंसराजजी की प्रेरणा से यह कार्य सुप्रसिद्ध विद्वान् डा० रघुवीर के सुपुर्द किया गया। डा० रघुवीर द्वारा सम्पादित होकर दो अध्याय पर्यन्त अष्टाध्यायी भाष्य का प्रथम खण्ड १९२७ ई० में प्रकाशित हुआ। तृतीय अध्याय युक्त द्वितीय खण्ड १९४९ ई० में छपा। शेष भाग अद्यापि अप्रकाशित ही है। १९४२ के अधिवेशन में चतुर्थ अध्याय के मुद्रण के विषय में निश्चय हुआ कि कागज के उपलब्ध होने पर छापा जाय परन्तु शेष अध्यायों के बारे में रा० ब० पं० गंगाप्रसादजी की रिपोर्ट स्वीकार कर निश्चय किया गया कि उन्हें प्रकाशित न किया जाय। १९६४ के अधिवेशन में चतुर्थ अध्याय को प्रकाशित करने का निश्चय हुआ।

महर्षि कृत अन्य ग्रन्थों के विभिन्न अनुवादों का प्रकाशन—स्वामीजी के लघु ग्रन्थों के विभिन्न भाषाओं में जो अनुवाद सभा ने प्रकाशित किये हैं उनका संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है—

१. **आर्योद्देश्यरत्नमाला**—१८९१ ई० के अधिवेशन में ठाकुर मुकुन्दसिंहजी कृत आर्योद्देश्यरत्नमाला का कवितानुवाद प्रकाशनार्थ प्रस्तुत किया गया। कारणवश यह अनुवाद प्रकाशित नहीं हो सका। रत्नमाला का अंग्रेजी अनुवाद बाबा अर्जुनसिंह ने किया था। यह प्रथम आर्य पत्रिका में प्रकाशित हुआ। पुनः इसे पुस्तकाकार सभा ने प्रकाशित किया। आर्योद्देश्यरत्नमाला का मराठी अनुवाद भी सभा ने प्रकाशित किया।
२. **स्वमन्तव्यामन्तव्यप्रकाश** का अंग्रेजी अनुवाद सभा ने प्रकाशित किया।

३. वेदान्तध्वान्ति निवारण का अंग्रेजी अनुवाद बावा अर्जुनसिंह ने किया। इसे सभा ने १८९६ ई० में प्रकाशित किया।

४. **काशी शास्त्रार्थ**—अंग्रेजी में इस पुस्तक का प्रथम अनुवाद रा० ब० रतनलाल मेरठ निवासी ने किया था। इसे सभा ने १९७४ ई० में प्रकाशित किया।

५. **मेला चांदापुर (सत्य धर्म विचार)**—यद्यपि बहुत पूर्व बावा अर्जुनसिंह ने इस पुस्तक का अंग्रेजी अनुवाद किया था, परन्तु वह अनुपलब्ध था। रा० ब० रतनलाल कृत अनुवाद को सभा ने १९७४ ई० में प्रकाशित किया।

६. **भ्रमोच्छेदन**—राजा शिवप्रसाद के 'निवेदन' के उत्तर रूप में लिखित इस पुस्तक का प्रथम बार अंग्रेजो अनुवाद रा० ब० रतनलाल ने किया। यह भी १९७४ ई० में प्रकाशित हुआ।

७. **व्यवहारभानु**—वालकों की शिक्षा के लिये रचित व्यवहार भानु का प्रथम अंग्रेजी अनुवाद रा० ब० रतनलाल मेरठ ने किया। इसे भी १९७४ ई० में प्रकाशित किया गया।

८. महर्षि के स्वीकार पत्र का भी अंग्रेजी अनुवाद सभा ने प्रकाशित किया है।

महर्षि दयानन्द ग्रन्थमाला (जन्म शताब्दी संस्करण)—

१९२५ ई० में मथुरा में महर्षि की जन्म शताब्दी समारोह पूर्वक मनाई गई। इस अवसर पर सभा ने ऋषि के वेदभाष्य को छोड़कर अन्य सभी ग्रन्थों का संग्रह दयानन्द ग्रन्थमाला के शीर्षक से दो भागों में प्रकाशित करने का निश्चय किया। इसका सम्पादन तत्कालीन सभा मन्त्री दी० ब० हरविलास शारदा ने किया। ग्रन्थारम्भ में महर्षि की जीवनी स्वामी श्रद्धानन्द ने लिखी। इसे ५००० की संख्या में प्रकाशित किया गया।

दयानन्द स्मृति ग्रन्थ (Dayanand Commemoration Volume) जिस प्रकार महर्षि की जन्म शताब्दी पर दयानन्द ग्रन्थमाला का प्रकाशन किया गया था। उसी प्रकार निर्वाण अर्द्ध शताब्दी पर 'दयानन्द स्मृति ग्रन्थ' सम्पादित कर प्रकाशित किया गया। इसका सम्पादक सभा के विद्वान् मन्त्री दी० ब० हरविलास शारदा ने किया था। इस ग्रन्थ में अंग्रेजी, हिन्दी तथा उर्दू भाषाओं में महर्षि विषयक कुछ सुन्दर लेखों का संग्रह किया गया है। लेखकों में सुप्रसिद्ध भारतीय द्वारा विदेशी विद्वान् थे।

Works of Maharshi Dayanand and Paropkarini Sabha-लाहौर निवासी अमरसिंह एडवोकेट ने एक भ्रान्ति उत्पन्न करने वाली पुस्तक

अंग्रेजी भाषा में लिखकर प्रकाशित की जिसका अभिप्राय यह था कि स्वामी दयानन्द को वस्तुतः माँस भक्षण पर कोई आपत्ति नहीं थी और उन्होंने अपने ग्रन्थों में मांसाहार का समर्थन ही किया है, परन्तु ऋषि के निधन के पश्चात् आर्य समाजी पण्डितों ने उनके ग्रन्थों में मांसाहार विरोधी प्रमाण स्वेच्छा से प्रक्षिप्त कर दिये। परोपकारिणी सभा ने इस अनर्गल पुस्तक का खण्डन करने के लिये अपने विद्वान् मन्त्री श्री हरविलास सारड़ा को आदेश दिया। तदनुसार श्री सारड़ाजी ने उक्त पुस्तक लिखी। इससे यह सिद्ध हो गया कि स्वामी दयानन्द का मौलिक सिद्धान्त मांसाहार के विरोध में ही था, तथा उनके ग्रन्थों में कालान्तर में कोई प्रक्षेप नहीं हुये हैं।

शास्त्र ग्रन्थों का प्रकाशन—

सभा ने महर्षि कृत ग्रन्थों के अतिरिक्त अन्य प्राचीन आर्ष ग्रन्थों के प्रकाशन की योजना भी बनाई। स्वीकार पत्र लिखते समय वेद वेदाङ्गादि प्रामाणिक ईश्वरोक्त तथा आर्ष ग्रन्थों के प्रचार और प्रसार को स्वामीजी ने सभा का आवश्यक कर्त्तव्य निर्धारित किया था। जिस समय वैदिक यन्त्रालय आर्य प्रतिनिधि सभा पश्चिमोत्तर प्रदेश (वर्तमान उत्तर प्रदेश) के निरीक्षण और संचालन में प्रयाग में चल रहा था उसी समय सभा ने अपने १८८८ ई० के अधिवेशन में यह निश्चय कि जिन जिन आर्ष ग्रन्थों को स्वामीजी के उपदेशानुसार आर्य लोग प्रमाण मानते हैं उनके मूल और भाष्य पण्डितों से संशोधित करवाकर प्रकाशित कराये जाने चाहिये तथा लागत मूल्य में वे पाठकों को उपलब्ध कराये जायें। इस योजना के अन्तर्गत निम्न ग्रन्थ प्रकाशित हुये।
मूल वेद संहिताओं का प्रकाशन[1] (१९१७ ई० के अधिवेशन में स्वीकृत)

---

१. प्रश्न यह उपस्थित होता है कि वैदिक यन्त्रालय के द्वारा प्रकाशित चारों वेद संहिताओं के पाठ का मूलाधार क्या है? जैसा कि महर्षि के जीवन चरित से विदित होता है, उन्होंने जर्मनी से वेद संहितायें स्वउपयोगार्थ मंगाई थीं। अथर्ववेद की अमेरिका में प्रकाशित एक प्रति उन्हें बम्बई के सेठ मथुरादास लवजी ने भेंट की थी। यह पुस्तक सभा के पुस्तकालय में विद्यमान है। स्वामीजी के निधन के कुछ वर्ष पश्चात् ही प० गुरुदत्त विद्यार्थी ने विरजानन्द प्रेस लाहौर से चारों वेदों की संहितायें बहुरंगी छपाई में प्रकाशित की थीं। सम्भवतः यन्त्रालय द्वारा प्रकाशित चतुर्वेद संहितायें उपर्युक्त संहिताओं के आधार पर ही तैयार की गई हैं।

शतपथ ब्राह्मण—प्रथम एक काण्ड प्रकाशित हुआ तदनन्तर समग्र ग्रन्थ मूल रूप में प्रकाशित किया गया। १९१० ई० के अधिवेशन में शतपथ ब्राह्मण का भाष्य कराये जाने का विषय भी उपस्थित हुआ। पं० वंशीधर शर्मा से एतद् विषयक समग्र योजना प्रस्तुत करने के लिये कहा गया था। पं० भगवद्दत्तजी ने शतपथ की सूची बनाने का प्रस्ताव भी रखा था। ऐतरेय ब्राह्मण के प्रकाशन के विषय में १९१७ ई० के अधिवेशन में विचार हुआ तथा व्यय का विवरण मांगा गया। निरुक्त, निघण्टु, अष्टाध्यायी (मूल) तथा दशोपनिषद् मूल भी समय समय पर छापे। सभा के तत्वावधान में पं० शिवशंकर शर्मा काव्यतीर्थ ने छान्दोग्य तथा बृहदारण्यक उपनिषदों पर वृहद् संस्कृत एवं हिन्दी भाष्य लिखे जो प्रकाशित हुये।

चतुर्वेद विषय सूची—महर्षि के हस्तलेखों के विवरण से विदित होता है कि उन्होंने वेदभाष्य प्रारम्भ करने से पूर्व चारों वेदों के मन्त्रों के विषयों की एक सूची तैयार की थी। समय समय पर इस चतुर्वेद विषय सूची को प्रकाशित करने का आग्रह आर्य जगत् के विद्वानों की ओर से होता रहा। विद्वानों की यह धारणा थी कि यदि विषय सूची प्रकाशित हो जाती है तो उससे भावी वेद भाष्यकारों को मन्त्रार्थ विषयक निर्देश मिलते रहेंगे। अतः सभा ने इसके प्रकाशन पर विचार करना आवश्यक समझा। १९५७ के अधिवेशन में जब यह विषय प्रस्तुत हुआ तो डा० मंगलदेव शास्त्री ने अपनी धारणा व्यक्त करते हुये कहा कि यद्यपि विषय सूची की रक्षा आवश्यक है परन्तु सर्व साधारण के लिये उपयोगी नहीं है अतः इसे प्रकाशित न किया जावे। इसके विपरीत नवम्बर १९६० में आयोजित सभा के विशेष अधिवेशन में अपना निवेदन प्रस्तुत करते हुये आचार्य विश्वश्रवा ने चतुर्वेद विषय सूची के प्रकाशन की आवश्यकता बताई। उन्होंने यह भी कहा कि दयानन्द दीक्षा शताब्दी उत्सव में सम्पन्न हुये वेद सम्मेलन ने भी परोपकारिणी सभा से इस विषय सूची को छापने का आग्रह किया है।

फलतः चतुर्वेद विषय सूची का प्रकाशन १९७१ ई० में हुआ। इसकी प्रेस कापी सभा के संयुक्त मन्त्री डा० भवानीलाल भारतीय ने तैयार की तथा मूल हस्तलेख से उसका मिलान भी किया। विषय सूची के प्रकाशन का आर्य जगत् में सर्वत्र स्वागत हुआ। यद्यपि इसकी बिक्री उतनी नहीं हुई जितनी की आशा की गई थी।

महर्षि के जीवन चरित का प्रकाशन—सभा के द्वितीय अधिवेशन में ही स्वामीजी के जीवनचरित लेखन तथा प्रकाशन का प्रस्ताव लाला जीवनदास,

उपप्रधान आर्यसमाज, लाहौर ने प्रस्तुत किया। फलतः यह निश्चित हुआ कि पं० मोहनलाल वि० पण्ड्या महर्षि के जीवनचरित का लेखन करें। घटनाओं के संग्रह तथा चरितनायक विषयक बातों को बताने में सभी आर्य पुरुष तथा सभायें उनका सहयोग करेंगे यह भी निश्चय हुआ। परन्तु सभा का यह महत्त्व-पूर्ण निश्चय किन्हीं अज्ञात कारणों से क्रियान्वित नहीं हो सका। व्यक्तिशः सभा के एक क्रियाशील सभासद श्री रामविलास शारदा ने स्वामीजी का विस्तृत हिन्दी जीवनचरित 'आर्य धर्मेन्द्र जीवन' के नाम से लिखा। इसी प्रकार अंग्रेजी में श्री महाराज की विशद जीवनी दीवान बहादुर हर विलास शारदा ने लिखी जो १९४६ ई० में प्रकाशित हुई। सभा ने इसकी १०० प्रतियाँ क्रय कीं तथा उन्हें स्वदेश तथा विदेश के प्रमुख पुस्तकालयों तथा शिक्षण संस्थाओं को भेजा। इसका द्वितीय संस्करण सभा ने से १९६८ ई० में प्रकाशित किया।

ऋषि दयानन्द का पत्र व्यवहार—ऋषि दयानन्द के पत्र व्यवहार को प्रकाशित करने से भी उनकी जीवनी लिखने में प्रचुर सहायता मिलती तथा स्वामीजी के जीवन विषयक अनेक अज्ञात तथ्य प्रकाश में आते। फलतः पत्र व्यवहार के प्रकाशन का प्रश्न सभा के समक्ष उपस्थित हुआ। सभा की धारणा थी कि स्वामीजी के समस्त स्वत्वों की अधिकारिणी होने के कारण पत्र व्यव-हार पर भी उसका ही अधिकार है। लाला मुन्शीराम ने स्वामीजी का कुछ पत्र व्यवहार (मुख्यतः उनके नाम लिखे गये अन्यों के पत्र) वैदिक मैगजीन, तथा सद्धर्मप्रचारक में प्रकाशित किया, पुनः उसे पुस्तक रूप में भी छाप दिया। सभा ने अपने १९०९ के अधिवेशन में लालाजी के इस कृत्य की आलोचना की तथा १९१० के अधिवेशन में सम्पूर्ण पत्र व्यवहार का संग्रह करने तथा उसे व्यवस्थित करने का अधिकार श्री हरविलास शारदा तथा पं० बंशीधरजी को सौंपा। पत्र व्यवहार के प्रकाशन का विषय १९३५ के अधिवेशन में भी उपस्थित हुआ। उसमें इस कार्य का दायित्व पं० भगवद्दत्तजी को सौंपा गया। अन्ततः पं० चमूपति तथा पं० भगवद्दत्तजी की वैयक्तिक रुचि के कारण पत्र व्यवहार समग्र रूप में प्रकाशित हुआ परन्तु उस पर सभा का कोई अधिकार नहीं रह सका। उसे श्री रामलाल कपूर ट्रस्ट अमृतसर ने प्रकाशित किया।

इसी प्रकार सभा अपने प्रारम्भिक काल से ही स्वयं का, अन्य आर्य प्रति-निधि सभाओं तथा तदन्तर्गत आर्यसमाजों की कार्य प्रवृत्तियों का एक व्यवस्थित इतिहास प्रकाशित कराने पर विचार करती रही। १९०६ के अधिवेशन में जब यह विचार प्रस्तुत हुआ तो इतिहास विषयक सामग्री का संग्रह करने के

लिये एक उपसमिति का निर्माण किया गया। १९०७ के अधिवेशन में आर्य-समाज के इतिहास के लेखन का कार्य लाला (महात्मा) मुन्शीराम के सुपुर्द किया गया और १५०० रुपये व्यय हेतु स्वीकार किया। यद्यपि आर्यसमाज का इतिहास लेखन कार्य तो स्वामी श्रद्धानन्द के बलिदान के पश्चात् पं० इन्द्र विद्यावाचस्पति ने किया परन्तु परोपकारिणी सभा के इतिहास लेखन का कार्य सम्पन्न नहीं हो सका। १९२३ के अधिवेशन में यह प्रश्न पुनः उपस्थित हुआ। इस वार यह कार्य भक्त ईश्वरदास और पं० भगवद्दत्त के सुपुर्द किया गया। सम्यक् एवं व्यवस्थित रूप से इतिहासलेखन तो सम्भव नहीं हुआ तथापि सभा के १९२५ के निश्चय के अनुसार श्री गुलराजगोपाल गुप्त ने १८८३ से लेकर १९२५ तक की सभा की यथोपलब्ध रिपोर्टों का संग्रह प्रकाशित कर दिया। इससे सभा के भावी इतिहासकार को निश्चय ही सहायता मिली। पं० ब्रह्मदत्त सोढ़ा ने भी इतिहास विषयक विभिन्न तथ्यों एवं घटनाओं का संग्रह करने, उन्हें सुव्यवस्थित करने तथा समय समय पर परोपकारी में प्रकाशित करने का श्लाघनीय यत्न किया था।

□□

अध्याय ६

वैदिक अनुसंधान तथा तत् सम्बन्धी प्रवृत्तियाँ

सभा ने अपने तत्त्वावधान में वैदिक अनुसंधान कार्य की योजना बहुत पूर्व ही बनाई थी तथा उसे यथाशक्य क्रियान्वित करने की भी चेष्टा की गई। वेदानुसंधान के लिये एक उपसमिति बनाने का प्रस्ताव १९२३ के अधिवेशन में ही स्वीकार हुआ था। तत्पश्चात् १९२५ के अधिवेशन में पं० भगवद्दत्तजी ने वेदानुसंधान के लिये पुनः प्रस्ताव किया तथा एक योजना बनाने हेतु उपसमिति के गठन की मांग की। प्रस्ताव स्वीकार हुआ तथा श्री हरविलास शारदा, श्री गुलराजगोपाल गुप्त, प्रो० रामदेवजी तथा पं० भगवद्दत्तजी की एक उपसमिति एतदर्थ बनाई गई। परन्तु अनेक वर्षों तक यह कार्य प्रस्तावों तक ही सीमित रहा। १९५३ के अधिवेशन में पं० गंगाप्रसादजी ने पुनः अनुसंधान विभाग की स्थापना पर जोर दिया तथा सभा से आग्रह किया कि वह स्वामीजी के अद्यतन अप्रकाशित २६ ग्रन्थों को प्रकाशित करे। चतुर्वेद विषय सूची, औषधियों का विवरण, ऋग्वेद के कुछ सूक्तों का अनेकार्थ, कुरान का भाषानुवाद आदि के प्रकाशन का उन्होंने विशेष रूप से आग्रह किया। इस पर सभा ने निश्चय किया कि महर्षि के उपलब्ध हस्तलिखित ग्रन्थों में कौन कौन से प्रकाशित करने योग्य हैं, इसका निर्धारण विद्वानों से कराया जाना आवश्यक है।

पं० भगवद्दत्तजी ने समय-समय पर यह प्रयत्न किया कि सभा के माध्यम से वेदानुसंधान, वैदिक वाङ्मय के दुलर्भ ग्रन्थों का प्रकाशन तथा पश्चिमी विद्वानों द्वारा भारतीय साहित्य और संस्कृति पर किये जाने वाले विभिन्न आक्षेपों का निराकरण करते हुये ग्रन्थ लेखन का कार्य कराया जाय। तदर्थ

सभा के १९५४ के अधिवेशन में उन्होंने आर्ष ग्रन्थमाला के प्रकाशन तथा वेद विरुद्ध लिखे जाने वाले ग्रन्थों यथा, वेदकाल निरूपण करने वाले पाश्चात्य विद्वानों के ग्रन्थों तथा पश्चिमी भाषा विज्ञान के ग्रन्थों की समालोचना करते हुये उच्च कोटि के साहित्य लेखन की योजना सभा के समक्ष प्रस्तुत की। सभा ने पं० भगवद्दत्तजी के प्रस्तावों को क्रियान्वित करने हेतु उन्हीं से विस्तृत कार्य-योजना प्रस्तुत करने का आग्रह किया।

डा० मंगलदेव शास्त्री ने भी इस अधिवेशन में अपने विभिन्न प्रस्तावों द्वारा इस बात पर बल दिया कि महर्षि के वेद भाष्यों के सुगम और सुबोध संस्करण प्रकाशित किये जायें, ऋग्वेदादि भाष्यभूमिका का विवेचनात्मक एवं वैज्ञानिक सम्पादन युक्त संस्करण प्रकाशित हो तथा महर्षि के हस्तलिखित ग्रन्थों की सूची का प्रकाशन किया जाय। उपर्युक्त दोनों विद्वानों के प्रस्ताव १९५५ के अधिवेशन में भी प्रस्तुत हुये तथा विचार के अनन्तर यह निश्चय हुआ कि इन योजनाओं को क्रियान्वित करने के लिये सभा के उपप्रधान लाला हंसराज गुप्त के संयोजन में एक समिति गठित की जाय। इस समिति के सदस्य पं० भगवद्दत्तजी, डा० मंगलदेवजी शास्त्री, पं० युधिष्ठरजी मीमांसक, पं० बुद्धदेवजी विद्यालंकार तथा स्वामी वेदानन्दजी को बनाया गया।

इस समिति की बैठक दि० २३ जुलाई १९५५ को दिल्ली में हुई। इसमें ऋग्वेद भाष्य की मन्त्र तालिकाओं की अशुद्धियों का शोधन, संस्कृत पदार्थ अन्वय तथा भाषा पदार्थ में जो मन्त्र गत पद छूट गये हैं उनकी पूर्ति आदि विषयों पर विचार हुआ। स्वामी स्वतन्त्रानन्दजी द्वारा उठाये गये ऋग्वेद की द्विपदा एवं चतुष्पदा ऋचाओं के सम्बन्ध का विचार स्थगित रखा गया। सत्यार्थप्रकाश तथा संस्कार विधि के संशोधित संस्करण प्रकाशित करने के सम्बन्ध में भी निर्णय लिये गये तथा महाभाष्य, निरुक्त, न्याय एवं योग भाष्य तथा प्रशस्तपाद भाष्य को सम्पादित एवं प्रकाशित करने की योजना स्वीकार की गई।

पं० युधिष्ठिरजी मीमांसक तथा आचार्य विश्वश्रवा ने महर्षि के ग्रन्थों के सम्पादन तथा उनकी अन्तिम प्रेस कापी तैयार कराने के लिये अपने कुछ विचारों को पत्र रूप में सभा के समक्ष उपस्थित किया। इन प्रस्तावों पर विचारार्थ सभा का एक विशेष अधिवेशन दि० २३ अक्तूबर १९६० को आमंत्रित किया गया। इसमें सभासदों के अतिरिक्त उक्त पण्डित द्वय तथा पं० प्रियव्रत वेदवाचस्पति तथा आचार्य बृहस्पति शास्त्रीजी को भी आमंत्रित किया गया। पर्याप्त विचार-विमर्श के पश्चात् यह निश्चय हुआ कि ऋषि के जीवनकाल

में मुद्रित तथा उनके द्वारा संशोधित संस्करणों को प्रामाणिक और आधार माना जाकर सम्पादन कराया जाय जिसमें हस्तलेखों का भी उपयोग हो। मुद्रण से पूर्व इस प्रति को सभा की विद्वत् समिति भली-भांति देख ले।

सैद्धान्तिक विवाद और सभा का इति कर्त्तव्य—

यदा-कदा सभा को ऐसे सैद्धान्तिक विवादों का भी सामना करना पड़ता था जो किसी न किसी कारण से उत्पन्न हो जाते थे। महर्षि के ग्रन्थों में पाई जाने वाली भूलों (जो निश्चय ही लेखक प्रमाद जन्य होती थीं) अथवा हस्तलेखों से भली प्रकार मिलान कर प्रकाशित न होने के कारण रह जाने वाली त्रुटियों, अशुद्धियों अथवा भाषागत एवं व्याकरण से सम्बन्धित स्खलनों के कारण यदा कदा आर्य सामाजिक क्षेत्रों में वाद-विवाद उत्पन्न हो जाते थे। उदाहरणतः ३१ जुलाई १९३८ का विशेष अधिवेशन तो इसी प्रकार के प्रश्नों तथा समस्याओं के समाधानार्थ आयोजित किया गया। इसमें जो विचार हुआ उसका सार इस प्रकार है।

पं० श्रीपाद दामोदर सातवलेकर ने वैदिक यन्त्रालय से प्रकाशित ऋग्वेदादि संहिताओं में उल्लिखत देवता, ऋषि तथा छन्दों की अशुद्धियां बताई तथा पत्रों के माध्यम से एक आन्दोलन सा उपस्थित कर दिया। सभा ने इस पर विचार करने के पश्चात् निर्णय किया कि पं० सातवलेकर महर्षि दयानन्द अभिमत देवतावाद को स्वीकार नहीं करते तथा वैदिक यन्त्रालय से प्रकाशित संहिताओं में ऋषि तथा छन्दों की अशुद्धियां मानते हैं अतः इन विषयों पर विचार करने के लिये उन्हें शास्त्रार्थ हेतु आहूत किया जाय। यदि वे चाहें तो आर्य प्रतिनिधि सभा राजस्थान की स्वर्ण जयन्ती के अवसर पर (नवम्बर १९३८) यह शास्त्र विचार अजमेर में कर लें।

देवता विषयक प्रश्न पर विचार सभा के मार्च १९३९ के अधिवेशन में भी हुआ। यह प्रश्न स्वामी वेदानन्द तीर्थ ने अपने पत्र द्वारा प्रस्तुत किया था। निश्चय हुआ कि ऋग्वेद भाष्य में जो देवता स्वामीजी ने लिखे हैं उन्हें यथावद् माना जाय परन्तु ऋग्वेद के जिस अंश पर स्वामीजी का भाष्य नहीं है, वहाँ के देवता आदि का निर्धारण करने के लिये सभा ने एक उपसमिति बनाई जिसमें पं० ब्रह्मदत्त जिज्ञासु, पं० भगवद्दत्त, पं० गंगाप्रसाद तथा मंत्री सभा (संयोजक) को रक्खा गया।

पं० ब्रह्मदत्त जिज्ञासु कृत यजुर्वेद भाष्य विवरण—श्री रामलाल कपूर ट्रस्ट ने पं० ब्रह्मदत्त जिज्ञासु से यजुर्वेद भाष्य का विवरण तैयार कराया।

इसमें यजुर्वेद भाष्य के प्रथम दस अध्यायों पर विस्तृत टिप्पणियाँ दी गईं थीं। सभा के ३६ वें अधिवेशन में इस भाष्य विवरण को परोपकारिणी सभा के द्वारा ही प्रकाशित कराने का विषय उपस्थित हुआ। सभा ने इन शर्तों पर विवरण को छापना स्वीकार किया कि स्वामीजी कृत भाष्य मूल लेख से तुलना कर छपवाया जाय तथा स्वामीजी के भाष्य के समर्थन में जो टिप्पणियां हों वे पादटिप्पणी के रूप में ही दी जायें। परन्तु बहुत शीघ्र ही यह भाष्य विवरण विवाद का विषय बन गया। ट्रस्ट ने इसे २००२ वि० में प्रकाशित कर दिया।[1] जिज्ञासुजी के विवरण से अनेक प्रकार की आशंकायें प्रसरित हुईं। यह कहा गया कि इसमें जो संशोधन एवं परिवर्द्धन आदि किये गये हैं वे सर्वथा मनमाने हैं तथा विवरणकार ने ऋषि के आशय अथवा उनकी भाषा के साधुत्व को न समझ कर व्यर्थ में ही उसे परिवर्तित करने की चेष्टा की है। यह विवरणकार की अनधिकार चेष्टा है। सभा के समक्ष जब विवरण विषयक आरोप उपस्थित किये गये तो उसने पं० जयदेवशर्मा विद्यालंकार को विवरण पर अपनी सम्मति देने के लिये कहा। जब यह सम्मति प्रस्तुत हुई तो उस पर विचार भी हुआ।

वस्तुतः जिज्ञासु जी लिखित यजुर्वेद भाष्य विवरण ने आर्यसमाज में एक नये विवाद को जन्म दिया। संयुक्त प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा के तत्कालीन मन्त्री पं० रामदत्त शुक्ल ने इस सम्बन्ध में एक पत्र परोपकारिणी सभा को लिखा तथा आचार्य विश्वश्रवा ने भी एक पत्र इस विषय में सभा को भेजा। अतः सभा ने अपने २७ फरवरी १९५० के अधिवेशन में इस प्रश्न को मुख्यतः चर्चा का विषय बनाया। पं० ब्रह्मदत्तजी जिज्ञासु ने अपना एक लिखित वक्तव्य सभा के समक्ष प्रस्तुत किया जिसमें रामानन्द ब्रह्मचारी के एक पत्र की वास्तविकता की परीक्षा कराने तथा भाष्य विवरण विषयक सम्पूर्ण विषय को विद्वानों की एक परिषद् के समक्ष उपस्थित कराने का आग्रह किया गया था। जिज्ञासुजी इस विद्वत् परिषद् के समक्ष अपना पक्ष प्रस्तुत करने तथा उसमें होने वाले निर्णयों को स्वीकार करने के लिये तत्पर थे। जिज्ञासुजी ने ऋग्वेद भाष्य की संस्कृत के विषय में भी अपना विचार व्यक्त करते हुये कहा कि प्रथम मण्डल के १४४ सूक्त तक का अंश स्वामीजी ने स्वयं संशोधित किया था जब कि ७ वें मण्डल के ६७ वें सूक्त के द्वितीय मन्त्र तक का संस्कृत भाष्य पण्डितों को लिखवाया था। इस प्रकार प्रथम मण्डल के १४५ वें सूक्त से लेकर मण्डल

१. इस ग्रन्थ का मुद्रण वैदिक यन्त्रालय में ही हुआ था।

७ के ६७ वें सूक्त के द्वितीय मन्त्र तक की संस्कृत भाषा का वे संशोधन नहीं कर सके थे। उन्होंने यह भी कहा कि वेद भाष्य में जो भूलें हैं वे लेखक प्रमाद जन्य हैं, न कि स्वामी दयानन्द कृत।

जिज्ञासुजी कृत यजुर्वेद भाष्य विवरण पर विचारार्थ सभा का एक विशेष अधिवेशन ९, १० जुलाई १९५० को आमन्त्रित किया गया। सभा के मन्त्री ने भाष्य विवरण पर अपने विचार व्यक्त करते हुये कहा कि इसके प्रकाशन से महर्षि के भाष्य के सम्बन्ध में नाना प्रकार की भ्रान्तियाँ उत्पन्न हुई हैं। मन्त्री के आग्रह पर आचार्य विश्वश्रवा ने विवरण के सम्बन्ध में ८ आपत्तियां प्रस्तुत की जिनका उत्तर जिज्ञासुजी ने उसी अधिवेशन में दिया। अन्ततः दूसरे दिन के अधिवेशन में इस विषय पर समग्र रूप से विचार करने हेतु आर्यसमाज के विद्वानों की एक उपसमिति का गठन किया गया तथा इससे प्रार्थना की गई कि वह पं० ब्रह्मदत्त जिज्ञासु लिखित यजुर्वेद भाष्य विवरण के विभिन्न पहलुओं पर विस्तृत विचार कर अपनी सम्मति प्रदान करे। विद्वत् समिति में निम्न पण्डित थे—१. डा० मंगलदेव शास्त्री २. पं० द्विजेन्द्रनाथ शास्त्री ३. पं० भगवद्दत्त ४. पं० रामदत्त शुक्ल ५. पं० हरिदत्त शास्त्री ६. स्वामी वेदानन्दतीर्थ ७. पं० बुद्धदेव विद्यालंकार ८. पं० ईश्वरचन्द्र दर्शनाचार्य ९. पं० विश्वनाथ विद्यालंकार १०. आचार्य विश्वश्रवा ११. पं० ब्रह्मदत्त जिज्ञासु १२. डा० वासुदेवशरण अग्रवाल। सभा मन्त्री श्री हरविलास सारड़ा इसके संयोजक बने तथा समिति के अधिवेशन के व्यय हेतु १००० रुपया स्वीकार किया गया।

उक्त निश्चय के अनुसार पण्डित सभा का अधिवेशन १३,१४ अगस्त १९५० को दयानन्द आश्रम अजमेर में हुआ। स्वामी वेदानन्द तीर्थ, पं० बुद्धदेव विद्यालंकार तथा पं० विश्वनाथ विद्यालंकार के अतिरिक्त सभी विद्वान् उपस्थित थे। पं० जयदेव शर्मा विद्यालंकार भी वनस्थली विद्यापीठ से आमन्त्रित किये गये। प्रथम दिन की कार्यवाही की अध्यक्षता श्री घीसूलालजी ने की। सभा मन्त्री ने अपनी अस्वस्थता के कारण स्थानापन्न सभापति श्री घीसूलालजी को ही बनाया था। पर्याप्त विचार के पश्चात् समिति ने अपनी द्वितीय बैठक में एक प्रस्ताव स्वीकार किया जिसका भाव यह था कि जिज्ञासुजी ने जो यजुर्वेद के दस अध्यायों पर भाष्य विवरण लिखा है वह उनका व्यक्तिगत प्रयास है। इसका सम्पूर्ण दायित्व उन्हीं पर है। उसके प्रकाशन से अनेक प्रकार के भ्रम और संदेह उत्पन्न हुये हैं अतः इसे अप्रामाणिक घोषित किया जाय। समिति ने यह भी सम्मति दी कि महर्षि के ग्रन्थों का प्रकाशन, मुद्रण एवं सम्पादन ऋषि के गौरवानुरूप ही हो। इस कार्य को करने का अन्य किसी

व्यक्ति या संस्था को अधिकार नहीं है। इस निर्णय पर जिज्ञासुजी ने अपना लिखित वक्तव्य प्रस्तुत किया जिसे रख लिया गया।

विद्वत् समिति के उपर्युक्त प्रस्ताव पर सभा ने अपने ८ जनवरी १९५१ ई० के विशेष अधिवेशन में विचार किया। जिज्ञासुजी का लिखित वक्तव्य भी पढ़ा गया तथा उस पर आचार्य विश्वश्रवा के उत्तर को भी सुना गया। सभा ने विद्वत् समिति में स्वीकृत यजुर्वेद भाष्य विवरण विषयक प्रस्ताव को स्वीकृत किया तथा उसे प्रसारित करने का निश्चय किया। इस प्रकार यह अध्याय समाप्त हुआ।

विद्वत् समिति—यों तो समय समय पर परोपकारिणी सभा के तत्त्वावधान में विभिन्न सैद्धान्तिक एवं शास्त्रीय समस्याओं पर विचारार्थ तथा महर्षि दयानन्द के ग्रन्थों के प्रकाशन सम्बन्धी विभिन्न पहलुओं पर आधिकारिक निर्णय लेने के लिये अनेक समितियों का गठन होता रहा, परन्तु कालान्तर में विधिवत् विद्वत् समिति की स्थापना कर एतादृश विषयों को उसके निर्णय हेतु उपस्थित किया जाने लगा। विद्वत् समिति की स्थापना का निर्णय सभा के १९५७ के अधिवेशन में लिया गया। इस सभा में पं० गंगाप्रसादजी का एक प्रस्ताव विचारार्थ प्रस्तुत हुआ था, जिसमें वेदों के पश्चात् प्रमाणभूत ब्राह्मण एवं आरण्यक आदि ग्रन्थों के प्रामाणिक भाष्य, अनुवाद आदि कराने का विषय रखा था। इस निश्चय को क्रियान्वित करने के लिये २४ जुलाई १९५७ को विद्वत् समिति का निर्माण इस प्रकार किया गया। डा० मंगलदेव शास्त्री संयोजक, सदस्य डा० मथुरालाल शर्मा, पं० ब्रह्मदत्त जिज्ञासु, पं० भगवद्दत्त।

समय समय पर इस समिति ने अनेक विवादास्पद विषयों पर विचार एवं समाधान किया। सत्यार्थप्रकाश के संशोधन कार्य को भी इसी समिति ने अन्तिम रूप प्रदान किया। वर्तमान में विद्वत् समिति के निम्न सदस्य हैं—डा० मंगलदेव शास्त्री, डा० मथुरालाल शर्मा, पं० उदयवीर शास्त्री, डा० सुधीर कुमार गुप्त तथा डा० भवानीलाल भारतीय (संयोजक)।

परोपकारिणी सभा के तत्त्वावधान में महर्षि कृत ग्रन्थों के संशोधन एवं सम्पादन तथा अनुसंधानात्मक कार्य करने वाले विद्वान्—

(१) **पं० भीमसेन शर्मा**—स्वामी दयानन्द के आद्य शिष्य तथा उनके द्वारा स्थापित फर्रुखाबाद की संस्कृत पाठशाला के अन्तेवासी पं० भीमसेन शर्मा स्वयं श्री महाराज के जीवनकाल में ही ग्रन्थ संशोधक एवं लेखक के पद पर नियुक्त हुये थे। वे इस पद पर पर्याप्त समय तक रहे। स्वामीजी के परलोक

गमन के पश्चात् भी परोपकारिणी सभा ने अपने प्रथम अधिवेशन में उन्हें ऋग्वेद भाष्य का आर्य भाषानुवाद तैयार करने तथा प्रूफ शोधन के लिये २५ रुपये मासिक पर नियुक्त किया। यद्यपि पं० भीमसेन शर्मा सुपठित विद्वान् थे तथापि ऋषि के पत्र व्यवहार को देखने से पता चलता है कि वे ग्रन्थ शोधन कार्य में बहुत कुशल नहीं थे और अनेक त्रुटियाँ कर देते थे। उनकी वैदिक सिद्धान्तों के प्रति निष्ठा भी अविचलित नहीं थी। अतः कालान्तर में वे आर्य-समाज से ही पृथक् नहीं हुये अपितु अपने नगर इटावा से ब्राह्मण सर्वस्व पत्र निकाल कर आर्यसमाज का सैद्धान्तिक खण्डन भी करते रहे।

(२) **पं० ज्वालादत्त शर्मा (मिश्र)**—पं० ज्वालादत्त फर्रुखाबाद के निवासी थे तथा इसी नगर में स्वामीजी द्वारा स्थापित संस्कृत पाठशाला में उन्होंने अध्ययन किया था। स्वामीजी के निकट रहकर लेखक तथा ग्रन्थ संशोधक का कार्य करते रहे। इन्हें भी स्वामीजी के निधन के पश्चात् वेद भाष्य का भाषानुवाद तैयार करने के लिये सभा ने नियुक्त किया था। इनके द्वारा रचित दशनियम शिखरिणी (आर्यसमाज के नियमों का संस्कृत पद्यानुवाद) तथा स्वामीजी के निधन पर प्रणीत शोकोद्गार उल्लेखनीय हैं।

(३) **पं० नरदेव शास्त्री, वेदतीर्थ**—ज्वालापुर महाविद्यालय के उपकुलपति और मुख्याधिष्ठाता पं० नरदेव शास्त्री मूलतः हैदराबाद राज्य के निवासी थे। उनकी शिक्षा गुरुकुल कांगड़ी और कलकत्ते में हुई। पं० सत्यव्रत सामश्रमी के सान्निध्य में रहकर उन्होंने ऋग्वेद का विशेष अध्ययन किया और वेद तीर्थ की उपाधि प्राप्त की। जब सभा ने शतपथ ब्राह्मण प्रकाशित करने का निश्चय किया तो बाबू रामविलासजी शारदा की प्रेरणा से वेदतीर्थजी अजमेर पहुँचे और सात आठ मास तक शतपथ ब्राह्मण का संशोधन कार्य किया।

(४) **पं० शिवशंकर शर्मा काव्य तीर्थ**—सुप्रसिद्ध मैथिल विद्वान् पं० शिव-शंकर शर्मा दरभंगा जिले के निवासी थे। पं० अम्बिकादत्त इनके शास्त्र गुरु थे। स्वामी दयानन्द के ग्रन्थों का अनुशीलन करने के पश्चात् आप दृढ़ आर्यसमाजी बन गये। सन् १९०३ से १९०६ तक पं० शिवशंकरजी ने परोप-कारिणी सभा में संशोधक पद पर कार्य किया। इस बीच आपने छान्दोग्य तथा बृहदारण्यक उपनिषदों का विशद संस्कृत एवं आर्य भाषानुवाद किया। जिसे इस सभा ने प्रकाशित किया। स्वामीजी ने ऋग्वेद का भाष्य जहाँ तक किया उससे आगे के अंश का भाष्य भी ऋषि शैली पर ही पण्डितजी ने किया। इसका एक भाग कलकत्ता निवासी सेठ छाजूरामजी की आर्थिक सहायता

से वैदिक यन्त्रालय में मुद्रित होकर १९८० वि० में प्रकाशित हुआ। इसकी पाण्डुलिपि स्व० मथुराप्रसादजी शिवहरे के पास थी, ऐसा वताया जाता है।

(५) पं० पद्मसिंह शर्मा—सुप्रसिद्ध हिन्दी लेखक और समालोचक पं० पद्मसिंह शर्मा को १९०८ ई० में सभा ने अपने मासिक मुख पत्र परोपकारी का सम्पादक नियुक्त किया। फलत: शर्माजी ने अजमेर में रह कर परोपकारी का सम्पादन आरम्भ किया। अनाथ रक्षक नामक एक अन्य पत्र का भी उन्होंने सम्पादन किया।

(६) पं० विश्वनाथ विद्यालंकार—गुरुकुल कांगड़ी के सुयोग्य स्नातक; वेदों के प्रसिद्ध विद्वान् तथा कालान्तर में वेदोपाध्याय पं० विश्वनाथ विद्यालंकार ने भी सभा के अन्तर्गत संशोधन पद पर कार्य किया।

(७) पं० युधिष्ठिरजी मीमांसक—सुप्रसिद्ध विद्वान् तथा सभा के सदस्य पं० ब्रह्मदत्तजी जिज्ञासु के सुयोग्य शिष्य पं० युधिष्ठिरजी मीमांसक ने भी अपने गुरु श्री जिज्ञासु की प्रेरणा से सभा में रहकर स्वामीजी रचित ग्रन्थों के हस्तलेखों के निरीक्षण, तथा उन्हें सुव्यवस्थित करने तथा अनेक ग्रन्थों की प्रेस कापी तैयार करने का कार्य किया।

(८) डा० रघुवीर—अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त संस्कृत एवं पुरातत्त्व के विद्वान् डा० रघुवीर को महात्मा हंसराजजी की प्रेरणा से स्वामी दयानन्द कृत अष्टाध्यायी भाष्य के सम्पादन हेतु नियुक्त किया गया। इसे डा० रघुवीर ने सुचारु रूप से सम्पन्न किया।

(९) पं० धर्मदेव निरुक्ताचार्य—पं० ब्रह्मदत्तजी जिज्ञासु के ही एक अन्य शिष्य पं० धर्मदेवजी निरुक्ताचार्य संशोधक पद पर अनेक वर्षों तक कार्य करते रहे।

(१०) आचार्य भद्रसेन—अजमेर निवासी पं० भद्रसेनजी भी जिज्ञासुजी के ही शिष्य हैं। आपने कई वर्षों तक संशोधन पद पर कार्य किया तथा प्रमुख ग्रन्थों की प्रेस कापी तैयार की।

(११) पं० धर्मसिंहजी कोठारी—अजमेर निवासी पं० धर्मसिंहजी कोठारी ने सभा के संशोधन विभाग में रहकर सराहनीय कार्य किया। विशेषत: सत्यार्थप्रकाश की संशोधित प्रेस कापी तैयार करने में आपका योगदान महत्त्व-पूर्ण है। इस हेतु आपने सत्यार्थप्रकाश की पाण्डु-लिपि तथा द्वितीय प्रकाशित संस्करण से परिश्रम पूर्वक मिलान कर इस ग्रन्थ के ३५ वें सस्करण की प्रेस कापी बनाई।

(१२) पं० सत्यानन्दजी वेदवागीश—गुरूकुल चित्तौड़गढ़ के सुयोग्य स्नातक पं० सत्यानन्द वेदवागीश, व्याकरणाचार्य संशोधन पद पर दो बार रहे। आपने संस्कार विधि की प्रेस कापी तैयार करने के अतिरिक्त महर्षि के ऋग्वेद भाष्य तथा यजुर्वेद भाष्य के नवीन संस्करणों के प्रकाशन में महत्त्वपूर्ण योग दिया। उपर्युक्त विद्वानों के अतिरिक्त पं० नित्य किशोर शास्त्री, पं० सत्यव्रत शास्त्री आदि ने भी संशोधन विभाग में कार्य किया।

□□

अध्याय १०

महर्षि कृत ग्रन्थों के प्रकाशनाधिकार तथा उनकी सुरक्षा–माइक्रोफिल्मिंग तथा पटलीकरण

सभा को स्वामी जी के सभी ग्रन्थों के प्रकाशित करने के पूर्ण अधिकार राज्य नियमानुसार प्राप्त थे क्योंकि उनके प्रत्येक ग्रन्थ की रजिस्ट्री की हुई थी। तथापि कई प्रकाशक स्वलाभ के लिये इन ग्रन्थों को बिना सभा की आज्ञा लिये प्रकाशित कर देते थे। ऐसे व्यक्तियों पर क्या कार्यवाही की जाय यह निश्चित करने के लिये सभा के १८९१ ई० के अधिवेशन में विस्तार से विचार हुआ। उन संस्थाओं और व्यक्तियों के नाम प्रस्तुत किये गये जिन्होंने स्वामी जी रचित संध्या, संस्कार विधि, गोकरुणानिधि तथा सत्यार्थप्रकाश आदि छाप लिये हैं। सभा मन्त्री को यह अधिकार दिया गया कि वह इन लोगों से इस सम्बन्ध में पत्र व्यवहार कर उनके उत्तरों से सभा को अवगत कराये। पं० लेखराम ने सभा मन्त्री को यह भी परामर्श दिया था कि वे इस आशय की सूचना विभिन्न समाचार पत्रों तथा सरकारी राजपत्रों में प्रकाशित करा दें कि स्वामी दयानन्द के ग्रन्थों को छापने का अधिकार मात्र परोपकारिणी सभा को ही है। यदि कोई अनधिकार चेष्टा कर ऐसा करेगा तो उसे हानि उठानी होगी। यदा कदा ऐसे प्रसंग भी आये जब सभा को उन व्यक्तियों के विरुद्ध कानूनी कार्यवाही करने का विचार करना पड़ा जिन्होंने स्वामीजी के ग्रन्थों को स्वेच्छा से प्रकाशित कर दिया था।

सत्यार्थप्रकाश के प्रथम संस्करण को सनातन धर्म के कुख्यात पण्डित कालूराम शास्त्री ने छाप कर कापी राइट कानून का उल्लंघन किया। इस प्रश्न पर सभा के १९१७ ई० के अधिवेशन में विचार हुआ तथा निश्चय किया

गया कि पं० कालूराम शास्त्री पर अभियोग किया जाय, जिसकी व्यवस्था पं० घासीरामजी एम० ए० एल० एल० बी० मेरठ तथा श्री मदनमोहनजी सेठ एम०ए० एल०एल०बी० करें। दोनों विधि वेत्ताओं ने जो सम्मति इस विषय पर दी वह १९१८ के अधिवेशन में प्रस्तुत की गई। सम्मति का सार यह था कि पं० कालूराम पर अभियोग चलाना फलप्रद सिद्ध नहीं होगा। क्योंकि सत्यार्थप्रकाश के जिस प्रथम संस्करण (१८७५ ई० में प्रकाशित) को उक्त पण्डितजी ने प्रकाशित किया है उसके स्वत्व स्वामीजी ने राजा जयकृष्ण-दास को प्रदान किये थे न कि परोपकारिणी सभा को। अतः यह भी संदेहास्पद है कि उक्त प्रथम संस्करण पर स्वयं श्री महाराज का भी अधिकार रहा या नहीं। ऐसी स्थिति में अभियोग दायर करना लाभप्रद नहीं होगा।

जब १९२४ ई० में सर्वप्रथम कलकत्ता से गोविन्दराम हासानन्द ने सत्यार्थ-प्रकाश का प्रकाशन किया तब भी स्वामीजी के ग्रन्थों के कापी राइट की रक्षा का प्रश्न सभा के समक्ष उपस्थित हुआ। अधिकांश सभासदों की सम्मति थी कि बिना आज्ञा श्रीमहाराज के ग्रन्थों को छापना अनधिकार चेष्टा है। अतः १९२४ के अधिवेशन में एक प्रस्ताव द्वारा आर्यजनों से कहा गया कि वे उन प्रकाशकों द्वारा प्रकाशित ऋषि के ग्रन्थों को क्रय न करें जो परोपकारिणी सभा की अनुज्ञा के विरुद्ध प्रकाशित किये गये हैं। मेरठ के पं० छुट्टनलाल स्वामी ने भी संस्कार विधि को वैदिक संस्कार विधि के नाम से प्रकाशित किया। अतः उनको कानूनी कार्यवाही द्वारा इस पुस्तक को छापने तथा बेचने से रोकने के लिये लाला रोशनलाल को १९२४ के अधिवेशन में उचित अधिकार प्रदान किये गये। अन्ततः गोविन्दराम हासानन्द तथा पं० छुट्टनलाल पर अभियोग करने का निश्चय हुआ।

महर्षि के ग्रन्थों को सुरक्षा—

महर्षि के ग्रन्थों की फोटो स्टेट प्रतियाँ तैयार कराना आवश्यक समझा गया। कारण कि ज्यों ज्यों हस्तलेख पुराने होते जाते उनकी जीर्णता बढ़ती जाती थी। सुरक्षा की दृष्टि से यदि इन हस्तलिखित ग्रन्थों की फोटोस्टेट प्रतियाँ हो जायें तो वे आने वाले कई वर्षों तक विद्वानों के लिये सुलभ रहेंगे, यह विचार कर प्रथम सत्यार्थप्रकाश का फोटो कराने का निश्चय हुआ तथा १९३० के अधिवेशन में इस कार्य के लिये ८०० रुपये व्यय करना स्वीकार किया गया। १९३१ के अधिवेशन में फोटोस्टेट मशीन क्रय करने के लिये ५००० रुपये स्वीकार किये तथा यह बताने के लिये कि वेद भाष्य के कौन से

स्थल ऐसे हैं जिनका अविलम्ब फोटो लिया जाना चाहिये, एक समिति बनाई। महात्मा नारायण स्वामीजी इसके संयोजक थे।

कालान्तर में महर्षि के अधिकांश ग्रन्थों के फोटो लिये गये। इस प्रकार लगभग एक शताब्दी पुराने महर्षि के ग्रन्थों की जीर्ण शीर्ण पाण्डुलिपियाँ प्रकारान्तर से सुरक्षित हो गईं। सत्यार्थप्रकाश के प्रथम संस्करण की मूल प्रति राजा जयकृष्णदास के पास ही थी। सभा ने उनके वंशजों से प्रार्थना कर उक्त मूल प्रति की फोटो स्टेट कापी तैयार कराई तथा उसे अपने ग्रन्थ संग्रह में सुरक्षित रक्खा।

माईक्रोफिल्मिग तथा पटलीकरण—विज्ञान की नवीनतम उपलब्धियों का उपयोग प्राचीन ग्रन्थों तथा पुरातात्त्विक महत्त्व के अभिलेखों को सुरक्षित रखने के लिये भी किया जाता है। राष्ट्रीय अभिलेखागार दिल्ली के सहयोग से महर्षि के हस्तलेखों का माईक्रोफिल्मिग कराया जा रहा है तथा प्रत्येक पृष्ठ का पटलीकरण किया जाकर आगामी ३—४ शताब्दियों तक के लिये उसे पूर्ण सुरक्षित रखने का प्रयास किया जा रहा है। इसमें सभा आर्य जनता के सहयोग की आकांक्षी है। अब तक इस कार्य में पर्याप्त धन व्यय हुआ है।

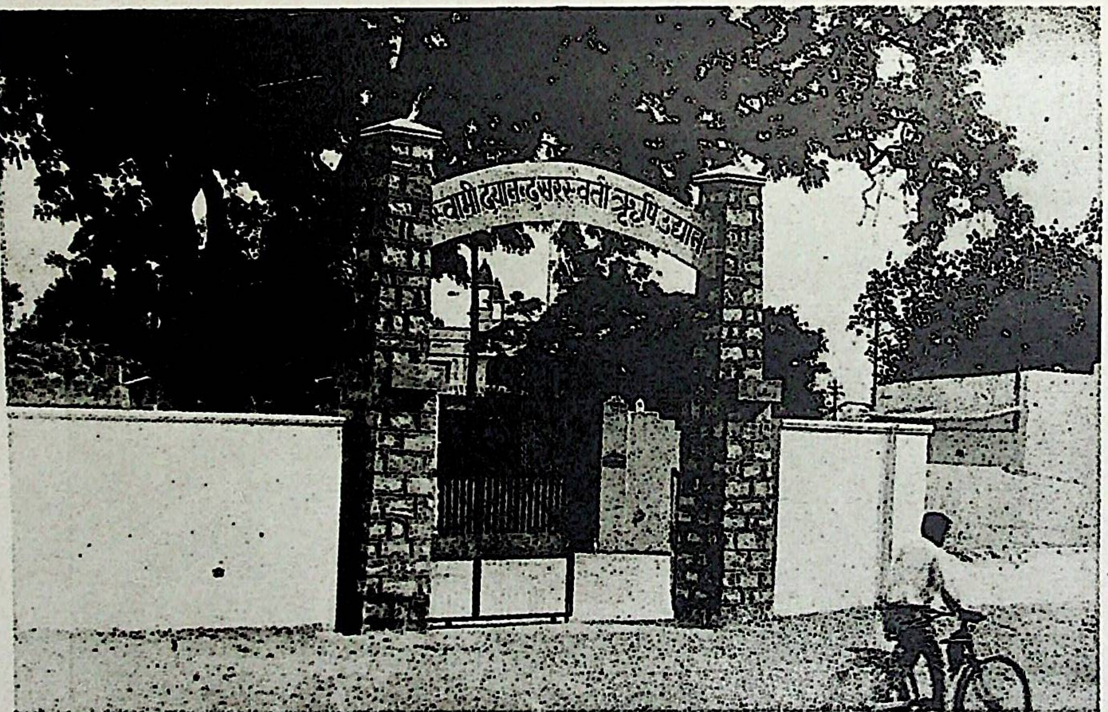
□□

अध्याय ११

सभा की नूतन प्रवृत्तियाँ—ऋषि मेला, ऋषि उद्यान, दयानन्द मार्केट

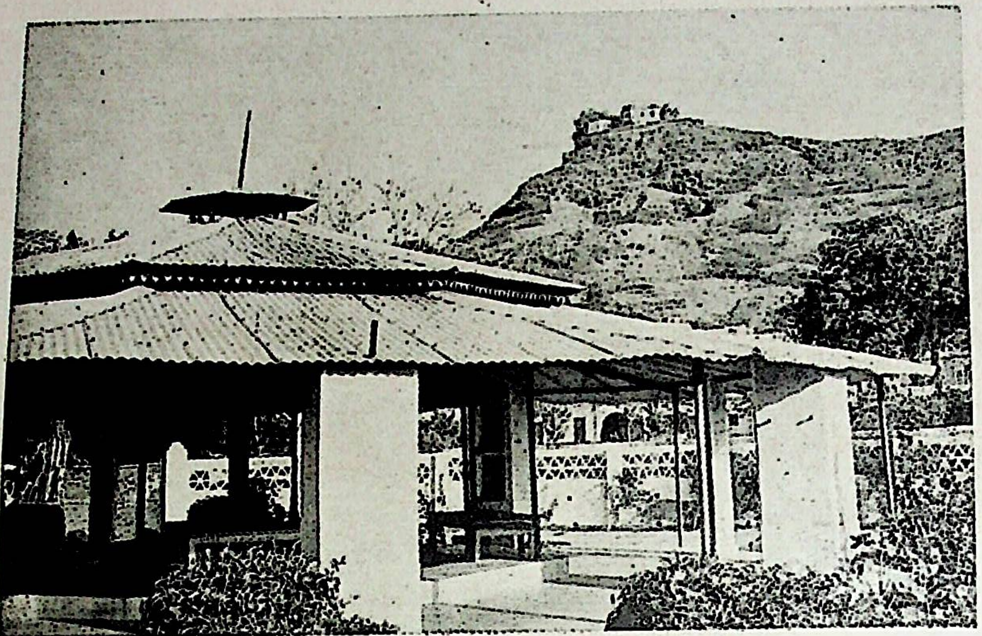
ऋषि मेला—१९५७ के वार्षिक अधिवेशन में पं० आनन्द प्रियजी ने प्रस्ताव किया कि महर्षि की स्मृति में दीपावली के आस-पास ऋषि मेले का आयोजन प्रतिवर्ष किया जाय, जिसमें यज्ञ, विद्वानों के प्रवचन, साँस्कृतिक कार्यक्रम, बालकों की खेलकूद प्रतियोगितायें तथा छात्र-छात्राओं की वाद-विवाद प्रतियोगितायें रखी जायें। सभा ने इस प्रस्ताव को सहर्ष स्वीकार किया। तदनुसार प्रथम ऋषि मेला १९५८ में सम्पन्न हुआ। इसमें सभा के तत्कालीन प्रधान महाशय कृष्णजी के ओजस्वी भाषणों के अतिरिक्त श्री जोरावरसिंह 'सिंह कवि' तथा उनकी धर्म पत्नी श्रीमती प्रभावती देवी के भजनोपदेशों का जनता पर अच्छा प्रभाव पड़ा। द्वितीय वर्ष का ऋषि मेला नवम्बर १९५९ में, मथुरा में आयोजित ऋषि दीक्षा शताब्दी महोत्सव के एक मास पूर्व हुआ। इस बार पं० ब्रह्मदत्तजी जिज्ञासु के आचार्यत्व में सामवेद पारायण महायज्ञ सम्पन्न हुआ तथा महात्मा आनन्द स्वामीजी के प्रवचनों की धूम रही। ऋषि मेले में निम्न प्रवृत्तियाँ प्रमुख रूप से प्रस्तुत की जाती हैं।

वेद पारायण यज्ञ—इन यज्ञों का आचार्यत्व समय समय पर आर्यसमाज के प्रमुख विद्वानों तथा कर्मकाण्ड के आचार्यों ने किया है। यथा पं० ब्रह्मदत्तजी सोढ़ा, पं० ब्रह्मदत्तजी जिज्ञासु, आचार्य विश्वश्रवा, आचार्य राजेन्द्रनाथ शास्त्री, स्वामी मेधार्थी, आचार्य कृष्ण, डा० भवानीलाल भारतीय, पं० सत्यानन्द वेदवागीश आदि ने गत १५ वर्षों में ऋग्, यजु, साम एवं अथर्ववेद के मंत्रों के पारायण यज्ञ सम्पन्न कराये हैं। वेद पाठी विद्वानों में यदा-कदा विभिन्न गुरु-



ऋषि उद्यान के नवनिर्मित प्रवेश द्वार का एक दृश्य

ऋषि उद्यान स्थित यज्ञशाला : एक दृश्य



कुलों के छात्र, आर्य कन्या महाविद्यालय बड़ौदा की छात्रायें तथा अन्य विद्वान् भाग लेते रहे हैं।

विद्वानों के प्रवचन एवं व्याख्यान—आर्यजगत् के लगभग सभी विद्वानों, साधु-सन्यासियों एवं व्याख्यानदाताओं ने मेलों में अपने प्रवचनों एवं व्याख्यानों द्वारा आर्य जनता को उपकृत किया है।

विभिन्न सम्मेलनों का आयोजन—ऋषि मेले पर वेद सम्मेलन, अराष्ट्रीय प्रचार निरोध सम्मेलन, आर्य सम्मेलन, शिक्षा सम्मेलन आदि के आयोजन भी हुये हैं। १९६० के ऋषि मेले में आर्यजगत् के प्रख्यात शिक्षा शास्त्रियों को आमन्त्रित किया गया था। गुरुकुल कांगड़ी के आचार्य पं० प्रियव्रत वेद वाचस्पति, आचार्य वृहस्पति शास्त्री (गुरुकुल वृन्दावन) स्वामी व्रतानन्दजी गुरूकुल चित्तौढ़गढ़, तथा पं० आनन्द प्रियजी (आर्य कन्या महाविद्यालय, वड़ौदा) आदि ने इस अवसर का लाभ उठाकर आर्यसमाज द्वारा संचालित शैक्षणिक प्रवृत्तियों पर विस्तार पूर्वक विचार किया। १९६६ ई० में राजस्थान आर्य प्रतिनिधि सभा का हीरक जयन्ती महोत्सव भी ऋषि मेले के अवसर पर ही सम्पन्न हुआ। इस अवसर पर आयोजित वेद सम्मेलन की अध्यक्षता सुप्रसिद्ध वैदिक विद्वान् तथा राजस्थान के तत्कालीन राज्यपाल डा० सम्पूर्णानन्दजी ने की थी। इसमें भारत विख्यात् वेदज्ञ पं० भगवद्दत्तजी, पं० उदयवीरजी शास्त्री, पं० युधिष्ठिरजी मीमांसक, डा० सुधीर कुमारजी गुप्त आदि के विद्वतापूर्ण भाषण एवं निवन्ध पाठ हुये।

वाद-विवाद प्रतियोगिता—देश भक्त चांदकरणजी शारदा तथा महात्मा कन्हैयालालजी की स्मृति में ऋषि मेले पर हायर सैकण्डरी तथा कालेज स्तर के छात्र-छात्राओं की वाद-विवाद प्रतियोगितायें होती हैं। विजेता दल को चल वैजयन्ती से पुरस्कृत किया जाता है।

सांस्कृतिक एवं खेल-कूद प्रतियोगितायें—बालक बालिकाओं को प्रोत्साहित करने के लिये विभिन्न प्रतियोगितायें तथा कार्यक्रम भी रहते हैं। आर्य कन्या महाविद्यालय बड़ौदा की छात्रायें विभिन्न शारीरिक तथा सांस्कृतिक कार्यक्रम प्रस्तुत करती हैं। कबड्डी तथा खो-खो के खेलों का भी आयोजन होता है।

निःशुल्क ऋषि लंगर—मेले में भाग लेने वाले स्त्री पुरुषों को ऋषि लंगर में नि:शुल्क भोजन कराया जाता है।

ऋषि मेले के लिये सभा कोई पृथकशः चन्दा एकत्रित नहीं करती। सभा

के वार्षिक बजट में ही एक निश्चित राशि मेले के लिये आवंटित की जाती है। सभा में भाग लेने वाले आर्य पुरुष स्वेच्छा से जो दान देते हैं उसे धन्यवाद पूर्वक स्वीकार किया जाता है।

ऋषि मेला का संयोजन आरम्भ से अब तक महामन्त्री श्री श्रीकरण शारदा के नेतृत्व में किया जाता है और वे दिन रात लगकर इसे उत्तरोत्तर वृद्धि व प्रसिद्धि पर ला रहे हैं।

ऋषि उद्यान—शाहपुराधीश का आनासागर स्थित उद्यान सभा को ऋषि के निर्वाण के पश्चात् ही प्रदान कर दिया गया था। समय समय पर इस उद्यान में विभिन्न उत्सव, समारोह आदि होते रहे हैं। इसी स्थान पर ऋषि निर्वाण अर्द्ध शताब्दी का महोत्सव हुआ। यहाँ की यज्ञ शाला में निर्वाण अर्द्ध शताब्दी पर चतुर्वेद महापारायण यज्ञ सम्पन्न हुआ। तब से लेकर आज तक यज्ञशाला में प्रातः सायं नित्य अग्निहोत्र किये जाने की व्यवस्था है। समय समय पर स्वामी दर्शनानन्दजी तथा स्वामी सर्वदानन्दजी आदि आर्यसमाज के उच्च कोटि के साधु यहाँ निवास कर कथा, प्रवचन, सत्संग आदि के आध्यात्मिक सत्रों का संचालन करते रहते थे। स्वामी केवलानन्दजी के पुरुषार्थ से इसी उद्यान के एक भाग में सरस्वती भवन नामक सुन्दर एवं भव्य सभागृह तथा निवास के कमरों से युक्त भवन का निर्माण हुआ। यहाँ राजस्थान आर्य प्रतिनिधि सभा का कार्यालय भी कई वर्षों तक रहा। सरस्वती भवन के बाहर विशाल संगमरमर प्रस्तर स्तम्भों पर चारों वेदों की ऋचायें उत्कीर्ण की गई हैं।

वर्षों तक ऋषि उद्यान उपेक्षित अवस्था में भी रहा। परन्तु जब सभा के मन्त्री पद पर श्री श्रीकरण शारदा अभिषिक्त हुये, उन्होंने उद्यान को एक भव्य, मनोहर एवं आकर्षक दर्शनीय स्थान के रूप में विकसित करने का यत्न किया। यद्यपि इससे पूर्व भी समय समय पर उद्यान में विभिन्न धार्मिक कृत्य सम्पन्न होते रहे हैं, यथा १९५५ ई० में श्रावणी के अवसर पर नगर आर्यसमाज अजमेर की ओर से यजुर्वेद पारायण यज्ञ तथा अथर्ववेद के पृथिवी सूक्तोक्त मन्त्रों के आधार पर यज्ञ हुआ। महात्मा कन्हैयालालजी, जो इस सभा के समासद् थे, वर्षों तक बिना किसी व्यवधान के उद्यान स्थित यज्ञशाला में यज्ञ साधन करते थे। परन्तु गत १५ वर्षों से उसे एक साधना स्थल का रूप प्रदान किया गया है। १९५६ के वार्षिक प्रतिवेदन में सभा मन्त्री ने बताया कि श्री बाबूप्रसाद जिज्ञासु तथा श्री गेहरालाल वानप्रस्थी आदि की

देखरेख में इस स्थान पर एक वानप्रस्थाश्रम का संचालन किया जा सकता है, जहाँ समय समय पर साधु संन्यासी एवं विरक्त जन निवास करें तथा उनके अध्ययन स्वाध्याय आदि की सुविधा हो। सभा ने इस प्रस्ताव को स्वीकार किया। तत्पश्चात् स्वामी ओमभक्तजी वानप्रस्थ की देखरेख में वैदिक साधन आश्रम की स्थापना भी हुई।

१९५८ ई० से ऋषि उद्यान में प्रतिवर्ष ऋषि मेले का आयोजन किया जाता रहा है। ऋषि उद्यान में यज्ञ शाला, सभागृह, अतिथिगृह, भोजनशाला, पाकशाला आदि के भवनों के अतिरिक्त सुन्दर उद्यान, कृषियोग्य भूमि, आनासागर तट पर श्रद्धानन्द घाट आदि स्थल हैं। सरस्वती भवन के ही एक कक्ष में स्वामीजी के निजी उपयोग की कतिपय वस्तुयें दर्शनार्थ रक्खी गई हैं। यथा, उनका कमण्डलु, पादुका, दुशाला, रेतघड़ी, पीतल की हस्ताक्षर मोहर, चाकू, डाक तोलने की तुला आदि। इसके अतिरिक्त सत्यार्थप्रकाश के प्रथम संस्करण की मूल प्रति, सत्यार्थप्रकाश के द्वितीय संस्करण की फोटोस्टेट प्रति. स्वामी विरजानन्द, महर्षि दयानन्द तथा स्वामी श्रद्धानन्द की स्मृति में प्रकाशित डाक टिकट, स्वामी दयानन्द रचित ग्रन्थ आदि। सरस्वती भवन में स्वामीजी के जीवन की प्रमुख घटनाओं को चित्रावली के माध्यम से प्रस्तुत किया गया है। इन कलापूर्ण चित्रों के द्वारा सम्पूर्ण महर्षि जीवन का चाक्षुष प्रत्यक्ष हो जाता है।

दयानन्द मार्केट—नगर परिषद् अजमेर ने सभा के समक्ष प्रस्ताव किया कि केसरगंज गोल चक्कर में यदि वह दुकानें बनाकर शरणार्थियों को उचित किराये पर देना स्वीकार करे तो परिषद् ५० वर्ष के पट्टे पर यह भूमि सभा को प्रदान कर देगा। सभा ने अपने १९६१ के अधिवेशन में इस प्रस्ताव को स्वीकार किया। कार्यकारिणी सभा को यह अधिकार प्रदान किया गया कि वह नगर परिषद् से उचित शर्तें निश्चित कर बाजार निर्माण का कार्य प्रारम्भ करे। तत् पश्चात् १९६३ के विशेष अधिवेशन में मार्केट निर्माण हेतु १ लाख पचास हजार रुपया व्यय करना स्वीकार किया गया तथा निर्माण कार्य को सुचारु रूप से सम्पन्न करने के लिये सभा प्रधान लाला हंसराज गुप्त, संयुक्त मन्त्री श्री श्रीकरण शारदा, श्री चित्तरंजन वर्मा, श्री अमरचन्द ईनाणी तथा श्री विष्णुचन्द्र इन पांच सदस्यों की उपसमिति का निर्माण किया।

तदनुकूल मार्केट की आधार शिला राजस्थान के तत्कालीन राज्यपाल डा० सम्पूर्णानन्दजी के कर कमलों द्वारा १८ जनवरी १९६३ को रक्खी गई। सम्पूर्ण निर्माण कार्य में १ लाख ३५ हजार आठ सौ पचास रुपया व्यय हुआ,

तथा इसका उद्घाटन राजस्थान के तत्कालीन मुख्य मन्त्री श्री मोहनलालजी सुखाड़िया ने दि० १ नवम्बर १९६४ को किया। मार्केट के निर्माण में सभा के तत्कालीन संयुक्त मन्त्री श्री श्रीकरण शारदा का असीम पुरुषार्थ तथा अध्यवसाय ही प्रमुख कारण था। श्री अमरचन्दजी ईनाणी तथा पं० भगवानस्वरूपजी न्यायभूषण ने उनको बराबर सहयोग दिया।

□□

अध्याय १२

सभा की कुछ विशिष्ट उपलब्धियाँ—

श्रीमद्दयानन्द अर्द्ध निर्वाण शताब्दी महोत्सव—

जब १९८३ वि० में महर्षि दयानन्द का जन्म शताब्दी महोत्सव मथुरा में समारोह पूर्वक मनाया गया तो उसकी कृतकार्यता से प्रभावित होकर महर्षि के भक्त आर्य नरेश राजाधिराज नाहरसिंहजी ने परोपकारिणी सभा के समक्ष अर्द्ध निर्वाण शताब्दी महोत्सव अजमेर में ही आयोजित करने का प्रस्ताव रक्खा। २४ दिसम्बर १९२५ के सभा के अधिवेशन में यह प्रस्ताव औपचारिक रूप से प्रस्तुत किया गया। प्रस्ताव सर्वसम्मति से स्वीकृत हुआ। तत्पश्चात् २२ मार्च १९३२ को दिल्ली में समस्त आर्य प्रतिनिधि सभाओं के प्रतिनिधियों की एक सभा परोपकारिणी सभा के अधिवेशन के साथ आमंत्रित की गई। इसमें यह निश्चय हुआ कि सन् १९३३ में दीपावली के अवसर पर अजमेर में यह उत्सव मनाया जाय। इस कार्य को सफलता पूर्वक सम्पन्न करने के लिये एक समिति का गठन किया गया जिसमें परोपकारिणी सभा के समस्त सदस्य, सार्वदेशिक सभा के समस्त सभासद तथा प्रादेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के सात सदस्य लिये गये। निर्वाण अर्द्ध शताब्दी समिति के प्रधान राजाधिराज उम्मेदसिंहजी, कार्यकर्त्ता प्रधान महात्मा नारायण स्वामीजी, मंत्री दी० ब० हरविलासजी शारदा तथा संयुक्त मन्त्री प्रो० घीसूलालजी नियुक्त हुये। इस वृहत् आयोजन को सम्पन्न करने के लिये विभिन्न उप-समितियाँ नियत की गई। परोपकारिणी सभा ने अग्रिम रूप से एक सहस्र रुपया प्रदान किया।

निर्वाण अर्द्ध शताब्दी का कार्यक्रम एक सप्ताह तक चलता रहा। इस बीच जो महत्त्वपूर्ण कार्य सम्पन्न हुये उनका विवरण इस प्रकार है—

ब्रह्मपारायण महायज्ञ—परोपकारिणी सभा के आनासागर तट स्थित ऋषि उद्यान की यज्ञ शाला में चतुर्वेद पारायण महायज्ञ कार्तिक कृष्णा २ सं० १९९० को प्रारम्भ हुआ। यज्ञ के ब्रह्मा पद पर म० म० पं० आर्य मुनिजी आसीन थे। उनके सहायक पं० ब्रह्मदत्तजी जिज्ञासु, पं० द्विजेन्द्रनाथजी शास्त्री आदि विद्वान् थे। यज्ञ समिति के संयोजक सभा के सदस्य तथा यज्ञ प्रेमी श्री महात्मा कन्हैयालालजी थे। यज्ञ में लगभग १०.सहस्र रुपया व्यय करने का अनुमान किया गया था।

१६ अक्टूबर को एक विशाल नगर कीर्तन अजमेर के आनासागर तट से लेकर फाईसागर तक विस्तृत आर्यनगर के पण्डाल से प्रारम्भ हुआ। इसमें सम्पूर्ण भारत भर की आर्यसमाजों से उपस्थित प्रतिनिधियों के अतिरिक्त अफ्रीका, ब्रह्मदेश, फिजी, मौरिशस आदि देशों के प्रतिनिधि भी पर्याप्त संख्या में भाग ले रहे थे। नगर कीर्तन भिनाय की कोठी (ऋषि निर्वाण स्थल) पर समाप्त हुआ। इस विशाल शोभा यात्रा से आर्यसमाज की शक्ति और संगठन का अद्भुत प्रदर्शन हुआ। नगर कीर्तन की सफलता का श्रेय उसके संचालकों और स्वयंसेवकों को है जिन्होंने पर्याप्त परिश्रम पूर्वक इसे सम्पन्न किया। प्रो० घीसूलालजी ने इसका संचालन किया। आर्य ध्वज उद्घाटन दि० १४ अक्टूबर को राजाधिराज उम्मेदसिंहजी के कर कमलों द्वारा हुआ। इस अवसर पर भाषण देते हुये राजाधिराज ने कहा कि इस पुण्य प्रणवपताका को फहरा कर महर्षि दयानन्द के अनुयायी हम आर्यगण वैदिक धर्म के प्रति अपनी अगाढ़ निष्ठा का परिचय दे रहे हैं। तीस हजार नर नारियों के उपस्थित जन समूह ने 'जयति ओमध्वज व्योम विहारी' ध्वज गीत का गायन किया।

इस महोत्सव में जो विभिन्न सम्मेलन आयोजित किये गये उनका संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है—

(१) **आर्य सम्मेलन**—१५ अक्टूबर को हुआ। इसमें आर्यसमाज की शक्ति को सुसंगठित करने तथा धर्म प्रचार को प्रगति देने हेतु विभिन्न प्रस्ताव स्वीकार किये गये।

(२) **आर्य महिला सम्मेलन**—इस सम्मेलन की स्वागत समिति की प्रधाना श्रीमती गुलाब देवी थीं। सम्मेलन की अध्यक्षता श्रीमती शन्नोदेवी ने की। सम्मेलन में भारत की महिला जाति को उन्नत बनाने विषयक अनेक उपयोगी प्रस्ताव पारित हुये।

(३) **महर्षि परिचय सम्मेलन**—१९ अक्टूबर को एक विशिष्ट सम्मेलन आयोजित किया गया जिसमें उन लोगों के भाषण हुये जिन्होंने स्वामी दयानन्द

को अपने जीवन काल में देखा था। स्वामीजी का साक्षात्कार करने वाले निम्न महानुभाव इसमें उपस्थित थे—श्री हरविलास शारदा, राजाधिराज उम्मेदसिंहजी शाहपुरा, पं० आर्यमुनि, म० नारायण स्वामी, म० हंसराजजी, श्री सुजानसिंहजी कोठारी, श्री विनायकरावजी नागपुर, श्री ज्वालाप्रसादजी, पं० भूमित्र शर्मा, श्री नथमलजी, श्री जगरूपजी, श्री गंगाप्रसादजी, श्री लादूरामजी, श्री जालिमसिंहजी।

(४) शुद्धि सम्मेलन—महात्मा हंसराजजी के सभापतित्व में सम्पन्न हुआ।

(५) वर्ण व्यवस्था सम्मेलन पं० गंगाप्रसादजी की अध्यक्षता में हुआ।

(६) आर्य सिद्धान्त रक्षा सम्मेलन—पं० आत्मारामजी अमृतसरी की अध्यक्षता में हुआ।

(७) आर्य कुमार सम्मेलन की अध्यक्षता पं० आत्मारामजी अमृतसरी ने की।

(८) आर्यवीर दल सम्मेलन दि० १७-१०-३३ को हुआ।

(९) आर्य भाषा सम्मेलन—पं० गंगाप्रसादजी उपाध्याय की अध्यक्षता में हुआ। आर्य-भाषा (हिन्दी) के प्रचार एवं प्रसार विषयक विभिन्न प्रस्ताव स्वीकृत हुये।

(१०) संस्कृत भाषा सम्मेलन की अध्यक्षता म० म० आर्य मुनिजी ने की।

(११) कवि सम्मेलन के अध्यक्ष पं० चमूपतिजी थे। पं० बुद्धदेवजी विद्यालंकार, पं० हरिशंकरजी शर्मा, श्रीमती विद्यावती कोकिल की कवितायें प्रशंसित हुईं।

(१२) संन्यासी सम्मेलन स्वामी शंकरानन्दजी की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ।

(१३) प्रवासी सम्मेलन की अध्यक्षता कुं० चांदकरणजी शारदा ने की।

(१४) अस्पृश्यता निवारण सम्मेलन दी० ब० हरविलासजी शारदा की अध्यक्षता में हुआ।

(१५) मादक द्रव्य निषेध सम्मेलन श्री पूर्णचन्द्रजी एडवोकेट की अध्यक्षता में हुआ।

(१६) विधवा विवाह सम्मेलन की अध्यक्षता पं० आनन्दप्रियजी ने की।

(१७) विद्वत् सम्मेलन के अध्यक्ष पं० बुद्धदेवजी विद्यालंकार थे। इसमें म० म० पं० आर्यमुनि, पं० ब्रह्मदत्तजी जिज्ञासु, स्वामी वेदानन्द तीर्थ आदि के महर्षि की वेद भाष्य शैली पर विचारोत्तेजक भाषण हुये।

(१८) शिक्षा सम्मेलन—प्राचीन एवं अर्वाचीन शिक्षा पद्धतियों पर दो पृथक् सम्मेलन आयोजित किये गये।

इस महोत्सव की एक प्रमुख प्रवृत्ति थी अखिल भारतीय स्वदेशी औद्योगिक प्रदर्शनी का आयोजन। इसमें देश के विभिन्न कला कौशल एवं उद्योगों की एक मार्मिक झांकी प्रस्तुत की गई थी। इसका उद्घाटन राजपुताना के ए० जी० जी० श्री ओगिलिवी ने किया। इसे सफल बनाने का श्रेय श्री कस्तूरमल बांठिया एवं श्री कृष्णगोपाल गर्ग आदि को है।

प्रदर्शनी का मुख्य द्वार अत्यन्त भव्य तथा आकर्षक बनाया गया था। प्रदर्शनी के विभिन्न विभागों में स्वास्थ्य विभाग, शिक्षा विभाग, ललितकला विभाग, खादी प्रदर्शनी, चिड़ियाघर, व्यापार मण्डल आदि उल्लेखनीय थे। रात्रि में प्रदर्शनी भूमि पर हजारों विद्युतदीप जगमगा उठते थे तब उसका प्रतिबिम्ब आनासागर के चंचल जल पर गिर कर प्रदर्शनी भूमि की शोभा को द्विगुणित कर देता था।

निर्वाण अर्द्ध शताब्दी महोत्सव वस्तुतः परोपकारिणी सभा की एक उल्लेखनीय उपलब्धि है। इसे सफल बनाने में दी० ब० हरविलास शारदा, प्रो० घीसूलाल, मास्टर कन्हैयालाल, डा० मानकरण शारदा, श्री चांदकरणजी शारदा, पं० भगवानस्वरूपजी न्यायभूषण आदि कार्यकर्त्ताओं ने अकथनीय परिश्रम किया। श्री चांदकरणजी शारदा की प्रेरणा से अखिल भारतीय हिन्दू महासभा का अधिवेशन भी इस अवसर पर भाई परमानन्दजी की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ।

सभा के स्फुट कार्य—

बड़ौदा के भूतपूर्व नरेश श्री सयाजीराव गायकवाड़ ने दलित जातियों के उत्थान तथा उन्हें शिक्षित करने के लिये प्रशंसनीय कार्य किया था। उनकी इन सामाजिक सेवाओं को दृष्टि में रख कर सभा ने अपने १९२० के अधिवेशन में यह निश्चय किया कि नरेश को 'पतित पावन' की उपाधि से विभूषित किया जाय। तदनुसार २१ मार्च १९२१ को सभा के मन्त्री दीवान बहादुर हरविलास शारदा तथा पं० रामचन्द्र शर्मा शाहपुरा निवासी बड़ौदा गये तथा लक्ष्मीविलास राजमहल में उन्होंने गायकवाड़ नरेश को सभा की ओर

से पतित पावन की उपाधि भेंट की। नरेश महोदय ने इसे सादर स्वीकार किया तथा आर्यसमाज के कार्यों की प्रशंसा की।

हरिद्वारीय कुम्भ मेले पर साहित्य प्रचार—१९४९-५० के वार्षिक विवरण से ज्ञात होता है कि हरिद्वारीय कुम्भ मेले पर सभा ने स्वामीजी की कतिपय लघु पुस्तकों के विशिष्ट संस्करण प्रकाशित किये। यथा, आर्योद्देश्य रत्नमाला १० सहस्र, गोकरुणा निधि १० सहस्र, वेदान्तध्वान्त निवारण, शिक्षा पत्री ध्वान्त निवारण तथा वेद विरुद्ध मत खण्डन प्रत्येक ५०००। २०३१ वि० के कुम्भ मेले पर प्रचारार्थ सभा ने 'दयानन्द उवाच' शीर्षक से एक पुस्तक ५००० की संख्या में प्रकाशित की। इसमें महर्षि के विभिन्न ग्रन्थों तथा उनके आत्मकथन के उद्धरणों का संग्रह प्रस्तुत किया गया है। इसका सम्पादन डा० भवानीलाल भारतीय ने किया।

महर्षि स्मारक ट्रस्ट टंकारा की सहायता—

महर्षि दयानन्द के जन्म स्थान टंकारा में उनके जन्म शताब्दी वर्ष में एक विशेष महोत्सव आयोजित किया गया था। उस समय यह निश्चय किया गया कि टंकारा में महर्षि का भव्य स्मारक बनाया जाना चाहिये। कालान्तर में जब महर्षि स्मारक ट्रस्ट टंकारा की स्थापना हुई तो सभा ने उसके कार्यों में पूर्ण सहयोग किया। १९५१ के अधिवेशन में कुं० चांदकरणजी शारदा के संयोजन में एक समिति बनाई गई जिसे इस सम्बन्ध में परामर्श देने के लिए कहा। १९५२ के अधिवेशन में जब यह विषय पुनः प्रस्तुत हुआ तो सभा ने यह आश्वासन दिया कि टंकारा में महर्षि के गौरव के अनुरूप स्मारक की स्थापना में यह सभा भरपूर सहायता करेगी। इस निश्चय के उपरान्त १९५४ के अधिवेशन में सभा ने यह निश्चय किया कि टंकारा स्मारक बन जाने पर सभा वेद प्रचार के लिये ५० हजार रुपये का ब्याज प्रति वर्ष दिया करेगी।

जब टंकारा ट्रस्ट की मुख पत्रिका टंकारा पत्रिका का प्रकाशन बन्द हो गया तो अप्रेल १९६६ से सभा के मुख पत्र परोपकारी के साथ टंकारा पत्रिका का विलयन कर दिया गया। ट्रस्ट की सूचनायें तथा अन्य विवरण परोपकारी में ही प्रकाशित होने लगे।

□□

उत्तरार्द्ध

परोपकारिणी सभा के सभासद

(१८८३ ई० से १६७४ ई०)

परोपकारिणी सभा के सभासद—
(१८८३ ई० से १९७४ ई० तक)

१—परोपकारिणी सभा के प्रथम प्रधान
मेदपाटेश्वर महाराणा श्री सज्जनसिंहजी—

अपने स्वीकार पत्र के अनुसार स्वामी दयानन्द सरस्वती ने अपनी स्थानापन्न जिस परोपकारिणी सभा का निर्माण किया, उसके प्रथम प्रधान मेवाड़ के तत्कालीन नरेश महाराणा सज्जनसिंहजी स्वयं स्वामीजी द्वारा ही नियत किये गये थे। महाराणा सज्जनसिंह का जन्म ८ जुलाई १८५९ को महाराज शक्तिसिंह के यहां हुआ। अपने चचेरे भाई महाराणा शम्भुसिंह के परलोकवासी होने पर १५ वर्ष की आयु में ७ अक्टूबर १८७४ को इन्हें मेवाड़ की गद्दी पर अभिषिक्त किया गया। २७ अक्टूबर १८८१ को जब ऋषि दयानन्द चित्तौड़ पहुंचे तो कविराज श्यामलदास ने महाराणा की आज्ञा से गम्भीरी नदी के तट पर एक विशाल शामियाना लगवाकर उनके निवास की व्यवस्था की। चित्तौड़ में उस समय तत्कालीन वायसराय लार्ड रिपन के सम्मान में एक विशेष दरबार का आयोजन किया गया था जिसमें महाराणा को ब्रिटिश सरकार के द्वारा जी० सी० एस० आई० की उपाधि दी जाने वाली थी। जब स्वामीजी का चित्तौड़ में महाराणा से प्रथम बार साक्षात्कार हुआ तो यह युवक क्षत्रिय-शासक श्रीमहाराज की तेजस्विता, क्रान्तदर्शिता तथा उदाराशयता से अत्यधिक प्रभावित हुये। उन्होंने स्वामीजी को चित्तौड़ दुर्ग तथा वहां के राजप्रासाद एवं विभिन्न दर्शनीय स्थल दिखलाये तथा स्वामीजी से अनुरोध किया कि वे मेवाड़ की राजधानी उदयपुर को अपने पावन चरणों से पवित्र करें।

महाराणा का अनुरोध स्वीकार कर स्वामीजी ११ अगस्त १८८२ ई० को उदयपुर पहुंचे। महाराणा ने उन्हें सज्जननिवास (नौलखा बाग) में ठहराया। वे नियमित रूप से श्री सेवा में उपस्थित होते तथा स्वामीजी से राजनीति, दर्शन, व्याकरण आदि का नियमित रूप से अध्ययन करते। उदयपुर रहते हुये ही स्वामीजी ने अपना स्वीकार पत्र लिखा तथा मेवाड़ राज्य की सर्वोच्च शासक सभा महद्राज सभा से उसे पञ्जीकृत कराया। जिस समय स्वामीजी उदयपुर से बिदा होने लगे तो महाराणा ने उन्हें वेद भाष्य मुद्रणार्थ १२०० रुपये, एक रेशमी उत्तरीय तथा मान पत्र अर्पित किया। स्वामीजी के विचारों का महाराणा पर व्यापक प्रभाव पड़ा था तथा वे अपने वैयक्तिक जीवन, राज्य शासन तथा प्रजापालन में स्वामीजी के दृष्टिकोण को महत्त्व देने लगे थे। महाराणा काव्यानुरागी, साहित्य रसिक तथा सुधारक प्रवृत्ति के पुरुष थे। जब स्वामीजी का ३० अक्टूबर १८८३ ई० को अजमेर में निधन हो गया तो महाराणा ने डिंगल भाषा के दो छन्दों की रचना कर अपने गुरु को श्रद्धाञ्जलि अर्पित की। वे छन्द निम्न प्रकार हैं—

दोहा—नभ चव ग्रहसरि दीप दिन दयानन्द सहसत्व।
वय त्रेसठ वतसर बिचै पायो तन पंचत्व ॥

कवित्त—जाके जीह जोर तें प्रचण्ड फिलासफिन को।
अस्त सों समस्त आर्य मण्डल तें मान्यो मैं ॥
वेद के विरुद्धी मत मत के कुबुद्धी मंद,
भद्र मन्द्र आदिन पै सिंह अनुमान्यो मैं ॥
ज्ञाता षट शास्त्रन को वेद को प्रणेता जेता,
आर्य विद्या अर्क हूं को अस्ताचल जान्यो मैं ॥
स्वामी दयानन्द जू के विष्णुपद प्राप्त हूते,
पारिजात को सो आज पतन प्रमान्यो मैं ॥

स्वामीजी के निधन के एक वर्ष पश्चात् ही पौष शुक्ला ६ सं० १९४१ वि० (२६ दिसम्बर १८८४ ई०) को महाराणा सज्जनसिंह का केवल २५ वर्ष की आयु में ही स्वर्गवास हो गया। महाराणा यदि दीर्घायु होते तो निश्चय ही उनके नेतृत्व में परोपकारिणी सभा एवं आर्यसमाज महर्षि दयानन्द के स्वप्न को साकार करने में अधिक सक्षम होते। परोपकारिणी सभा का प्रथम अधिवेशन महाराणाजी के जीवनकाल में ही २८-२९ दिसम्बर १८८३ ई० को अजमेर में हुआ था, परन्तु अपनी शारीरिक अस्वस्थता के कारण वे उसमें

उपस्थित नहीं हो सके थे। देलवाड़े के राजराणा फतहसिंह तथा कविराजा श्यामलदास जी ने उनका प्रतिनिधित्व इस अधिवेशन में किया था। सभा के प्रथम अधिवेशन की समाप्ति पर इस अधिवेशन का विवरण महाराणा से निवेदन करने हेतु रा० ब० गोपाल राव हरिदेशमुख, पं० श्यामजी कृष्ण वर्मा तथा लाला जगन्नाथप्रसाद उदयपुर गये तथा उनके समक्ष सम्पूर्ण इतिवृत्त निवेदन किया।[1] उन्हें यह जानकर परम हर्ष और संतोष हुआ कि स्वामीजी के स्वीकार पत्र के अनुकूल ही परोपकारिणी सभा अपनी भावी योजनायें बना रही हैं। वे स्वयं द्वितीय अधिवेशन में उपस्थित होने की उत्सुकता पूर्वक प्रतीक्षा कर रहे थे परन्तु अधिवेशन के दो दिन पूर्व ही उनका परलोकवास हो गया। (महाराणा सज्जनसिंहजी के निधन के पश्चात् परोपकारिणी सभा ने उनके उत्तराधिकारी महाराणा फतहसिंहजी से निवेदन किया कि वे इस सभा के अध्यक्ष पद को ग्रहण करें। महाराणा फतहसिंहजी ने सभा का संरक्षक बनना तो स्वीकार कर लिया परन्तु वे अध्यक्ष बनने के लिये राजी नहीं हुये।)

२—राय मूलराज एम० ए० (एक्स्ट्रा एसिस्टेन्ट कमिश्नर) उप सभापति—

राय मूलराज का मूल निवास स्थान लुधियाना था। ये मेधावी तथा प्रतिभा शाली पुरुष के। इन्होंने प्रेमचन्द रायचन्द छात्रवृत्ति प्राप्त कर कलकत्ता विश्वविद्यालय से एम० ए० की परीक्षा उत्तीर्ण की। पंजाब में ये एक्स्ट्रा एसिस्टेन्ट कमिश्नर के पद पर नियुक्त हुये। जिस समय लाहौर में आर्यसमाज की स्थापना हुई उस समय राय मूलराज उसके प्रधान निर्वाचित हुये थे। आर्यसमाज के दस नियम जो उसके उद्देश्य भी कहलाते हैं, लाहौर में ही बनाये गये। नियमों के निर्माण में राय मूलराज ने स्वामीजी को पर्याप्त सहयोग और परामर्श दिया था. यह कुछ इतिहासकारों की धारणा है। परोपकारिणी सभा का निर्माण होने पर राय मूलराज उसके प्रथम उपसभापति बनाये गये। स्वामीजी का राय मूलराज में अत्यधिक विश्वास भी था।

कालान्तर में मांस भक्षण तथा कतिपय अन्य कारणों से गत शताब्दी के अन्तिम दशाब्द में जब आर्यसमाज का विभाजन हो गया तो राय मूलराज मांस भक्षण का समर्थन करने वाले दल के एक नेता माने गये। उन्होंने दश प्रश्नी नामक एक विवादास्पद पुस्तिका भी लिखी जिसमें यह प्रतिपादन करने की चेष्टा की गई थी कि आर्यसमाज का सदस्य बनने के लिये मात्र दस नियमों

---

१. दयानन्द दिग्विजयार्क खण्ड ३ पृष्ट २५४

पर हस्ताक्षर करना ही आवश्यक है।[1] स्वामी दयानन्द के सिद्धान्तों एवं मन्तव्यों में आस्था रखना आवश्यक नहीं है।[2] राय मूलराज स्वामीजी द्वारा किये गये वेदार्थ को निर्भ्रान्त नहीं मानते थे। दश प्रश्नों में उठाये गये विवादास्पद प्रश्नी का सटीक उत्तर महात्मा हंसराज ने 'दश प्रश्नी की समीक्षा' लिख कर दिया।

परोपकारिणी सभा के अधिवेशनों में राय मूलराज ने बड़ी तत्परता पूर्वक भाग लिया। उन्होंने प्रथम अधिवेशन की अध्यक्षता की तथा जब तक नये सभापति का निर्वाचन (१८९३ ई०) नहीं हो गया वे सभा के कार्यवाहक सभापति बने रहे। पुनः वे १९४१ तक सभा के उपसभापति पद पर प्रतिष्ठित रहे। १९४२ के अधिवेशन में तीन अधिवेशनों में उनकी निरन्तर अनुपस्थिति को देखते हुये उनका सभासद का पद रिक्त समझा गया तथा उनके स्थान पर शाहपुरा के तत्कालीन युवराज श्री सुदर्शनदेवजी को सभासद चुन लिया। इस प्रकार ५९ वर्ष की दीर्घ अवधि तक इस सभा में रह कर राय मूलराज ने विश्राम लिया।

३—कविराजा श्यामलदास प्रथम मंत्री परोपकारिणी सभा—

कविराजा श्यामलदास दधिवाड़िया गोत्र के चारण थे। इनका जन्म आषाढ़ कृष्ण ७ सं० १८९३ वि० को हुआ था। ये संस्कृत, हिन्दी, राजस्थानी (डिंगल) आदि भाषाओं के मर्मज्ञ थे। उदयपुर महाराणा ने इन्हें पौष शुक्ला २ सं० १९३५ को 'कविराजा' की उपाधि प्रदान की। अंग्रेजी सरकार ने भी १ जनवरी १८८८ ई० को 'महामहोपाध्याय' की पदवी प्रदान कर कविराजाजी को सम्मानित किया। कविराजा श्यामलदास की प्रमुख कृति 'वीर विनोद' नामक मेवाड़ राज्य का वृहद् इतिहास है जो लगभग ३ हजार पृष्ठों में लिखा जाकर १९४६ वि० में तैयार हुआ। ज्येष्ठ बदि ३० सं० १९५१ को इनका निधन उदयपुर में हुआ।

यद्यपि कविराजाजी को सभा के मन्त्री पद पर स्वामीजी ने ही प्रतिष्ठित किया था, परन्तु वे अपनी अस्वस्थता के कारण इस कार्य का वहन भली-भाँति नहीं कर पाये। सभा के द्वितीय अधिवेशन (दिसम्बर १८८५ ई०) में उन्होंने

---

१. दश प्रश्नी—५ वाँ प्रश्न (सत्यार्थप्रकाशक ग्रन्थमाला सं० १) दीपावली १९९० वि०
२. ” ८ वाँ प्रश्न

अपना त्याग-पत्र प्रस्तुत किया जिसे खेद पूर्वक स्वीकार कर लिया गया। कविराजाजी का स्वामीजी से अत्यन्त सौहार्दभाव था। जिस समय स्वामीजी प्रथम वार चित्तौड़गढ़ पधारे उसी समय कविराजाजी से उनका साक्षात्कार हुआ था तथा वे श्री महाराज के तेजस्वी विचारों तथा ओजस्वी व्यक्तित्व से प्रभावित हुये थे। महाराणा उदयपुर, राजाधिराज शाहपुरा तथा मेवाड़ के अन्य सरदारों को स्वामीजी की शिक्षाओं की ओर अभिमुख करने तथा उनके सम्पर्क में आने की प्रेरणा भी कविराजाजी ने ही दी थी।

४—लाला रामशरणदास रईस (उपप्रधान आर्यसमाज मेरठ) मन्त्री परोपकारिणी सभा—

मेरठ निवासी प्रतिष्ठित रईस लाला रामशरणदास स्वामीजी के परम भक्त तथा विश्वास पात्र थे। लालाजी का निधन परोपकारिणी सभा के प्रथम अधिवेशन के पूर्व ही १० जून १८८३ ई० को हो गया था। अतः इनके स्थान पर पं० गोपाल राव हरि देशमुख को सभा के मन्त्री पद पर नियुक्त किया गया। यद्यपि लाला रामशरण दास परोपकारिणी सभा में अपना सक्रिय योगदान नहीं कर सके परन्तु वे स्वामीजी के अत्यन्त श्रद्धालु एवं विश्वस्त अनुयायी थे। अपने मेरठ प्रवास के समय स्वामीजी लालाजी की कोठी पर ही ठहरा करते थे। उनके व्याख्यानादि भी वहीं होते थे। लालाजी ने स्वामी जी की नितान्त भक्ति भाव से सेवा की तथा उनके बताये आदर्शों पर चलते रहे।

५—पं० मोहनलाल विष्णुलाल पण्ड्या—

परोपकारिणी सभा के प्रथम उपमन्त्री पं० मोहनलाल विष्णुलाल पण्ड्या के पूर्वज गुजरात के निवासी थे। वे कालान्तर में दिल्ली और उसके पश्चात् मथुरा में आकर बस गये। पण्ड्याजी का जन्म मार्ग शीर्ष कृष्णा तृतीय सं० १९०७ वि० मंगलवार को हुआ। प्रारम्भ में इन्हें हिन्दी एवं संस्कृत की शिक्षा दी गई। दो वर्ष पश्चात् सेंट जॉन्स कालेज के स्कूल विभाग में अंग्रेजी का अध्ययन भी किया। पुनः बनारस के क्वीन्स कालेज तथा जयनारायण कालेज में भी अध्ययन किया। काशी निवास काल में पण्ड्याजी की घनिष्टता हिन्दी के लब्ध प्रतिष्ठ साहित्यकार भारतेन्दु हरिश्चन्द्र से हो गई। 'समान शील व्यसनेषु सख्यम' के आधार पर पण्ड्याजी भी साहित्यिक अभिरुचि सम्पन्न व्यक्ति थे। भारतेन्दु द्वारा प्रवर्तित 'हरिश्चन्द्र चन्द्रिका' पत्रिका को इन्होंने 'मोहनचन्द्रिका' नाम से नाथद्वारा से प्रकाशित किया। इसी पत्रिका में महाभारत काल के

परवर्ती आर्य राजाओं की सूची प्रकाशित हुई थी, जिसे स्वामीजी ने सत्यार्थ-प्रकाश के एकादश समुल्लास के अन्त में उद्धृत किया है।

१८७७ ई० में पण्ड्याजी मेवाड़ राज्य की सेवा में आये। नाथद्वारा और कांकरोली के वल्लभ सम्प्रदाय के महन्तों की अवयस्क दशा में उन रियासतों की प्रवन्ध व्यवस्था के अधीक्षक रहे। तत्पश्चात् उदयपुर की सदर अदालत की दीवानी का काम इन्हें मिला। पुनः स्टेट कौन्सिल (महद्राज सभा) के सदस्य तथा सचिव भी बनाये गये। १३ वर्ष तक उदयपुर राज्य की सेवा में रहने के पश्चात् इन्होंने त्याग पत्र दे दिया और प्रतापगढ़ (देवलिया) के दीवान बन गये। उदयपुर में परोपकारिणी सभा के संगठित होने पर स्वामीजी ने पण्ड्याजी को इस सभा का प्रथम उपमन्त्री मनोनीत किया। अजमेर में जब ३० अक्टूबर १८८३ को श्री महाराज का परलोक गमन हुआ था तो उस समय पण्ड्याजी ने ही परोपकारिणी सभा के उपमन्त्री के अधिकार से स्वामीजी की पुस्तक, द्रव्य एवं अन्य वस्तुओं को स्व अधिकार में लिया था। परोपकारिणी सभा के कार्य संचालन में पण्ड्याजी का योगदान महत्त्वपूर्ण है। दिसम्बर १८८५ में कविराज श्यामलदास के मन्त्रीपद से अस्वस्थता के कारण त्याग पत्र दे देने पर पण्ड्याजी मन्त्री नियुक्त किये गये। पण्ड्याजी उच्चकोटि के लेखक तथा साहित्यकार थे। सैद्धान्तिक विषयों पर उनके निम्न ग्रन्थ प्रकाशित हुये—

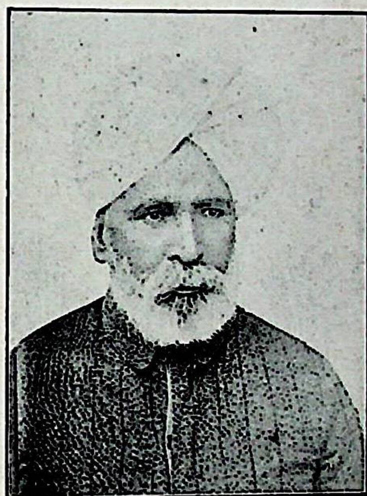
१. **आर्यावर्तान्तर्गत आर्यसमाजों के दस नियम**—दस नियमों की यह व्याख्या १८९७ ई० में वैदिक यन्त्रालय से मुद्रित होकर प्रकाशित हुई।
२. **आर्य सिद्धान्त मार्तण्ड भाग १**—ओंकार की विस्तृत व्याख्या पर यह पुस्तक राजस्थान यन्त्रालय से १८९० ई० में मुद्रित हुई।
३. **आर्य सिद्धान्त मार्तण्ड भाग २**—इसमें आर्यसमाज का विस्तृत परिचय दिया गया है। वैदिक यन्त्रालय से १८९२ ई० में प्रकाशित।
४. **आर्य सिद्धान्त मार्तण्ड भाग ४**—स्वामीजी के स्वमन्तव्यामन्तव्यों की व्याख्या। (सम्भवतः अप्रकाशित)
५. **आर्यों के संवत्सर की गणना ६ आर्य शिक्षा भाग ४**—

महाकवि चन्द्रवरदाई की विख्यात कृति पृथ्वीराज रासो का पण्ड्याजी ने विवेचन युक्त सम्पादन किया। ४ दिसम्बर १९१२ को ६२ वर्ष की आयु में पण्ड्याजी का निधन मथुरा में हुआ।

परोपकारिणी सभा के भूतपूर्व सदस्य



महाराणा सज्जनसिंह जी



लाला मूलराज जी

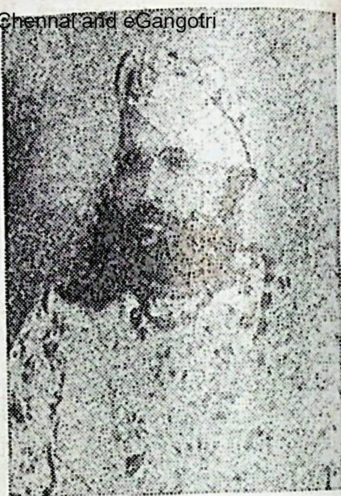


कविराज श्यामलदास



पं. मोहनलाल वि० पण्ड्या


श्री नाहरसिंहजी वर्मा


राव तख्तसिंह जी वेदला


श्री गर्जसिंह जी


राव बहादुरसिंह जी


पं॰ सुन्दरलाल जी


राजा जयकृष्णदास जी



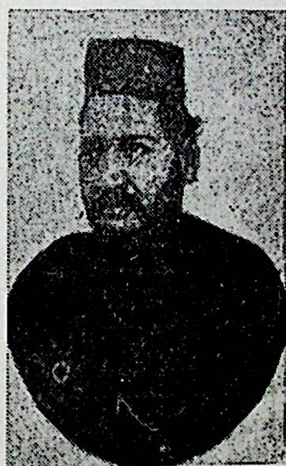
बाबू दुर्गाप्रसाद जी



सेठ निर्भयराम



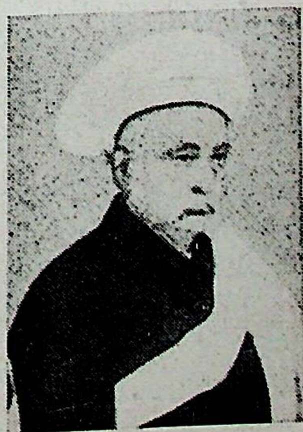
लाला कालीचरण जी रईस



लाला रामचरणजी रईस

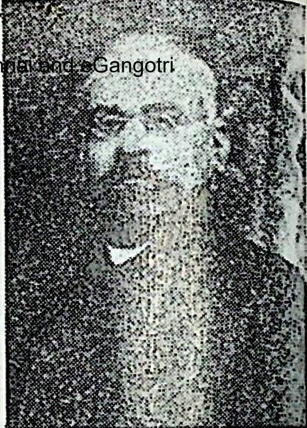


लाला साईंदास

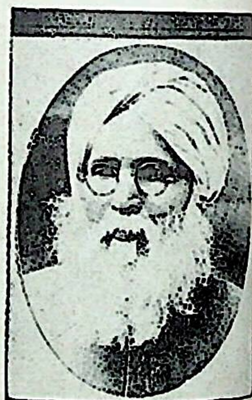


पं. गोपालराव हरि देशमुख


श्री महादेव गोविन्द रानडे


प. श्यामजी कृष्ण वर्मा


कर्नल प्रतापसिंह जी


महात्मा हंसराजजी


दी. ब. हरबिलासजी शारदा


लाला लाजपतराय जी

पं. रामदुलारेजी वाजपेयी



बैरिस्टर रामगोपालजी



सेठ पुरुषोत्तम नारायण जी



मुंशी पद्मचन्द जी



श्री रोशनलालजी



श्री उमेदसिंह जी शाहपुरा



श्री रामभजदत्त चौधरी



स्वामी श्रद्धानन्दजी



गंगाप्रसादजी जज



पं० भगवानदीन जी



श्री राम विलासजी शारदा



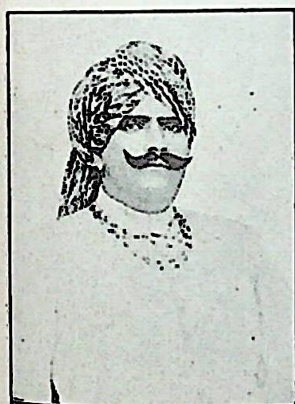
पं० वंशीधर शर्मा



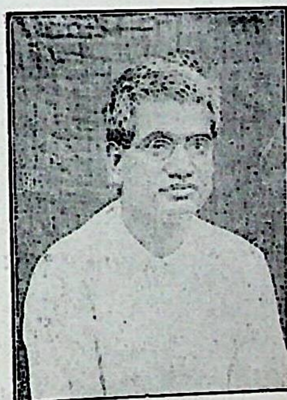
श्री रणछोड़दास भवान



बाबू घासीराम जी



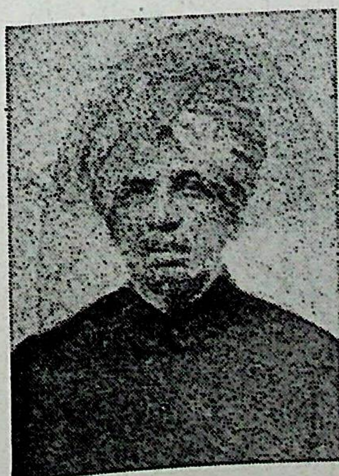
ठाकुर नरेन्द्रसिंह जी



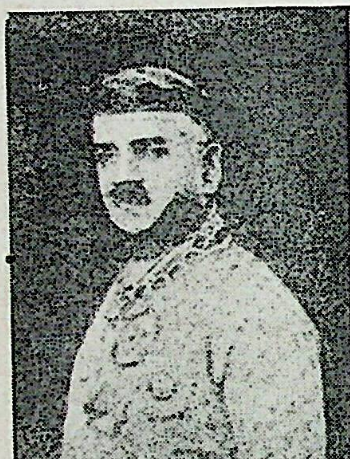
प्रो. रामदेव जी



श्री साहू छत्रपति



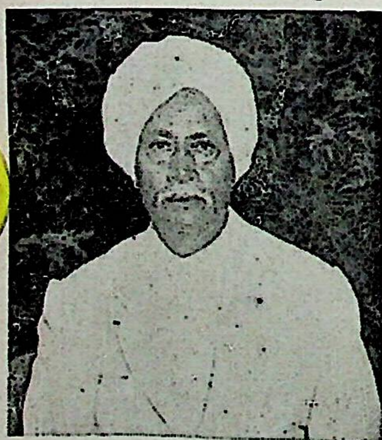
श्री गुलराज गोपाल गुप्ता



श्री सयाजी राव गायकवाड़



सर राजारामजी छत्रपति



पं० भगवद्दत्तजी



स्वामी विश्वेश्वरानन्द जी

परोपकारिणी सभा में पण्ड्याजी का कार्यकाल चिरस्मरणीय रहेगा। यह समय सभा का शैशवकाल था। पण्ड्याजी ने निरन्तर अध्यवसाय एवं तत्परता पूर्वक सभा की कार्य प्रवृत्तियों का संचालन किया तथा उसको सुव्यवस्थित करते रहे। उनके समय में ही दयानन्द आश्रम का निर्माण हुआ। वैदिक यन्त्रालय प्रयाग से स्थानान्तरित होकर अजमेर आया तथा सभा के तत्त्वावधान में विविध लोकोपकारी, शैक्षणिक तथा साहित्यिक प्रवृत्तियों का सूत्रपात हुआ। पण्ड्याजी का स्वामीजी से अत्यन्त सौहार्द भाव था। वे पण्ड्याजी के आग्रहवश ही चित्तौड़ आये थे, जहां महाराणा उदयपुर से उनकी प्रथम भेंट हुई। पण्ड्याजी स्वामीजी की देशभक्ति, लोक मंगल की भावना तथा सर्वांगीण प्रगतिशील विचारधारा से अत्यन्त प्रभावित थे।

६—राजाधिराज नाहरसिंहजी वर्मा शाहपुराधीश—

राजन्य वर्ग में श्रीमहाराज के प्रमुख शिष्य राजाधिराज नाहरसिंहजी का जन्म कार्तिक कृष्णा १३ सं० १९१२ वि० को ठिकाना धनोप के ठाकुर धीरतसिंह के यहाँ हुआ। शाहपुरा नरेश की गद्दी पर ज्येष्ठ शुक्ला १३ सं० १९२६ वि० को विराजमान हुये। स्वामीजी से इनकी प्रथम भेंट चित्तौड़ में हुई थी और वे प्रथम दर्शन में ही महाराज के तेजस्वी व्यक्तित्व से अत्यधिक प्रभावित हुये। पुनः श्रीमहाराज के सान्निध्य में रह कर नाहरसिंहजी ने लगभग तीन मास तक धर्म तथा राजनीति का पाठ पढ़ा। शाहपुराधीश को स्वामीजी का अगाध विश्वास प्राप्त था। वे कालान्तर में परोपकारिणी सभा के मन्त्री तथा प्रधान भी रहे। ७८ वर्ष की आयु में राजाधिराज का निधन आषाढ़ कृष्णा ६ सं० १९८९ को हुआ। अंग्रेजी सरकार ने इन्हें सर तथा के० सी० एस० आई० की उपाधियाँ प्रदान की थीं। वैदिक धर्म के दृढ़ अनुयायी नाहरसिंहजी ने प्रजाहित तथा लोक कल्याण की अनेक योजनायें अपने शासनकाल में प्रवर्तित कीं। राजाधिराज ने स्वामीजी की स्मृति में दयानन्द आश्रम की स्थापना हेतु अजमेर में आनासागर स्थित अपना विशाल बाग सभा को प्रदान किया, जहां कालान्तर में दयानन्द सरस्वती भवन, साधु आश्रम, यज्ञशाला एवं ऋषि उद्यान आदि की प्रवृत्तियाँ संचालित की गईं। जब महाराणा सज्जनसिंहजी के असामयिक निधन के कारण परोपकारिणी सभा के प्रधान का पद एक वर्ष के भीतर ही रिक्त हो गया तो १८९३ (दिसम्बर) में सभा के छठे अधिवेशन में राधाधिराज शाहपुरा सभा के प्रधान पद पर प्रतिष्ठित किये गये। इससे पूर्व तक रा० ब० मूलराज ही अन्तरिम रूप से सभापति का कार्य कर रहे थे। जोधपुर के कर्नल महाराज प्रतापसिंह ने जब

सभा की अध्यक्षता स्वीकार कर ली तब राजाधिराज नाहरसिंहजी मन्त्री पद पर अभिषिक्त हुये ! इस पद पर वे जीवन पर्यन्त रहे।

७—राव तख्तसिंह बेदला (मेवाड़)—

मेवाड़ के ठिकाना वेदला के ये जागीरदार थे । १८९३ में इनका निधन हुआ।

८—राजराणा फतहसिंह वर्मा देलवाड़ा (मेवाड़)—

मेवाड़ की देलवाड़ा जागीर के स्वामी थे। १८९० ई० में आपका निधन हुआ।

९—रावत अर्जुनसिंह वर्मा आसींद (मेवाड़)—

जब महाराणा सज्जनसिंहजी का देहान्त हो गया तो उनके उत्तराधिकारी महाराणा फतहसिंहजी को सभा का अध्यक्ष पद स्वीकार करने हेतु प्रार्थना करने का कार्य रावत अर्जुनसिंहजी को सौंपा गया था । आपके आग्रह को स्वीकार कर उक्त महाराणा ने सभा की संरक्षकता स्वीकार की।

१०—महाराज गजसिंह वर्मा शिवरती (उदयपुर)—

उदयपुर राज्य के अन्तर्गत शिवरती ठिकाने के आप ठाकुर थे। महाराणा सज्जनसिंह के देहावसान पर महाराणा पद फतहसिंहजी को प्राप्त हुआ। वे इनके छोटे भाई थे। इनका जन्म १८८७ वि० तथा निधन १९५७ वि० में हुआ।

११—राव बहादुरसिंह वर्मा मसूदा (अजमेर)—

अजमेर जिलान्तर्गत मसूदा ठिकाने के इस्तमरार (जमींदार) राव बहादुरसिंहजी स्वामीजी के परमभक्त तथा अनुयायी थे। राव साहब के आग्रह पर स्वामीजी दो बार मसूदा पधारे। राव साहब ने अपने राम बाग नामक उद्यान में स्वामीजी के निवास हेतु एक छोटा भवन बनवाया था । स्वामीजी के प्रवचन राम बाग तथा रावसाहब के निवास स्थान (दुर्ग) में भी हुये। रावसाहब ने विदा के समय वेदभाष्य प्रकाशन में सहायता हेतु ४०० रुपये स्वामीजी की सेवा में भेंट किये। अन्तिम रुग्णावस्था में जब श्रीमहाराज अजमेर आये तो उन्हें मसूदा के बंगले पर ही रखा गया। राव साहब के प्रति स्वामीजी का अगाध स्नेह और विश्वास था। जोधपुर से जब स्वामीजी ने प्रस्थान का विचार किया जो उनके मन में मसूदा जाने का भाव ही प्रथमतः

आया था, इससे भी वहाँ के शासक रावसाहब के प्रति स्वामीजी का सौहार्द भाव सूचित होता है। रावसाहब का निधन १० जुलाई १९०३ को हुआ।

रावसाहब के निरीक्षण में ही दयानन्द आश्रम स्थापित किये जाने के लिये अजमेर के केसरगंज मुहल्ले में भूमि क्रय की गई तथा उन्हीं की देख रेख में दयानन्द आश्रम का विशाल भवन निर्मित हुआ। २८ दिसम्बर १८९६ के अधिवेशन में रावसाहब का सभासद पद से त्याग पत्र विचारार्थ प्रस्तुत हुआ जिसे स्वीकार कर लिया गया।

१२—रावबहादुर पं० सुन्दरलाल सुपरिन्टेडेण्ट पोस्टल वर्कशाप और प्रेस, आगरा—

पं० सुन्दरलाल का स्वामीजी से प्रथम सम्पर्क उस समय हुआ जब वे दण्डीजी की पाठशाला में अपना अध्ययन समाप्त कर प्रचार क्षेत्र में अवतीर्ण हुये थे। उस समय पं० सुन्दरलाल आगरा में डाक विभाग के एक उच्च पद पर प्रतिष्ठित थे। पण्डितजी के प्रति स्वामीजी का अगाध स्नेह और विश्वास था। महाराज के निधन के थोड़े समय पश्चात् ही पं० सुन्दरलाल अजमेर पहुंचे। स्वामीजी की अन्त्येष्टि के समय जब पं० सुन्दरलाल ने गुरु महाराज का किञ्चित गुणानुवाद करना चाहा तो वे भाव विह्वल हो गये। गद् गद् कण्ठ हो जाने के कारण वे कुछ भी बोल नहीं सके। १८९० ई० में उनका निधन हुआ। जिस समय वैदिक यन्त्रालय प्रयाग में अवस्थित था, उस समय पं० सुन्दरलाल ही उसके अधिष्ठाता थे।

१३—राजा जयकृष्णदास सी० एस० आई० डिप्टी कलक्टर (बिजनौर) मुरादाबाद—

राजा जयकृष्णदास मुरादाबाद निवासी माथुर चतुर्वेदी ब्राह्मण थे। इन्होंने बिजनौर, मुरादाबाद आदि जिलों में डिप्टी कलक्टर के पद पर कार्य किया। महर्षि दयानन्द के परम भक्त राजा साहब ने ही स्वामीजी से प्रार्थना की थी कि वे अपने सिद्धान्तों का विवेचन करते हुये एक ऐसा ग्रन्थ लिखें जो उनके विचारों का प्रकाश करने में प्रदीपवत् हो। फलतः स्वामीजी ने सत्यार्थप्रकाश की रचना की। इसके प्रथम संस्करण का व्यय भार राजा साहब ने ही उठाया था तथा इसे १८७५ ई० में काशी के स्टार प्रेस से मुद्रित कर प्रकाशित कराया।

१४—बाबू दुर्गाप्रसाद (कोषाध्यक्ष आर्यसमाज फर्रुखाबाद) रईस— फर्रुखाबाद (जन्म १२ अक्तूबर १८४७ ई० मृत्यु २० अप्रैल १९०९ ई०)

से स्वामी दयानन्द का विशेष सम्बन्ध रहा। वे यहाँ अनेक बार पधारे थे। प्रसिद्ध रईस बाबू दुर्गाप्रसाद महर्षि के अनन्य अनुयायी बन गये। १९३७ वि० में जब स्वामीजी का इस नगर में पदार्पण हुआ तो बाबू दुर्गाप्रसाद ने इन्हें आग्रह पूर्वक एक मास से भी अधिक समय तक ठहराया, स्वामीजी का सत्संग लाभ किया तथा उनके उपदेश सुने। बाबूजी ने सहस्रों रुपये आर्यसमाज के लोक हितकारी कार्यों में व्यय किया तथा वेदभाष्य निधि में ५०० रुपये प्रदान किये, साथ ही वैदिक यन्त्रालय की स्थापना हेतु एकत्रित किये गये कोष में भी ५०० रुपये भेंट किये। १९६६ वि० में ६२ वर्ष की आयु प्राप्त कर बाबू दुर्गाप्रसाद परलोकवासी हुये।

१५ लाला जगन्नाथप्रसाद रईस, फर्रुखाबाद।—

फर्रुखाबाद निवासी लाला जगन्नाथप्रसाद का जन्म १८९९ वि० में एक समृद्ध कुल में हुआ। जब स्वामी दयानन्द सं० १९२४ में प्रथम बार इस नगर में पधारे तो लालाजी ने उनके दर्शन किये तथा स्वामीजी के दृढ़ अनुयायी बन गये। स्वामीजी फर्रुखाबाद आकर लालाजी द्वारा निर्मित विश्रान्त (गंगा तटवर्ती घाट) पर ही निवास करते थे। स्वामीजी के आतिथ्य, निवास, व्याख्यान, शास्त्रार्थ आदि की व्यवस्था में लालाजी का पूर्ण योग रहता था। श्री महाराज के उपदेश से लालाजी ने विधिपूर्वक यज्ञोपवीत धारण किया। लालाजी ने वेद भाष्य निधि में ५०० रुपये प्रदान किये तथा स्वामीजी के परमापदारूढ़ होने पर परोपकारिणी सभा के प्रथम अधिवेशन में सम्मिलित होकर २००० रुपये दयानन्द आश्रम के निर्माण हेतु दिये। १० दिसम्बर १८९१ ई० को ४९ वर्ष की आयु में लालाजी का स्वर्गवास हुआ।

१६—सेठ निर्भयराम (प्रधान आर्यसमाज फर्रुखाबाद) बिसाऊ (राजस्थान)—

सेठ निर्भयराम मूलतः शेखावाटी (राजस्थान) के बिसाऊ ठिकाने के निवासी था। आपका व्यवसाय फर्रुखाबाद में था। स्वामीजी के विश्वास पात्र वणिक् भक्तों में सेठजी का प्रमुख स्थान था। लोकोपकार हेतु जो द्रव्य श्री महाराज को भेंट रूप में प्राप्त होता, वह सेठजी के यहाँ ही जमा रहता। दयानन्द आश्रम के निर्माण हेतु आपने एक हजार रुपया प्रदान किया तथा वेद भाष्य सहायता निधि में भी उतने ही रुपये दिये। फर्रुखाबाद में वैदिक पाठशाला की स्थापना स्वामीजी के परामर्शानुसार आपने ही की। इस पाठशाला में स्वामीजी के सतीर्थ्य पं० उदयप्रकाश अध्यापन कार्य करते थे। पं० भीमसेन और पं० ज्वालादत्त, जो पर्याप्त समय तक स्वामीजी के साथ रहकर ग्रन्थ लेखन का कार्य करते रहे, इसी पाठशाला के छात्र रह चुके थे।

इनकी पढ़ाई का व्यय भी सेठ निर्भयराम ने ही दिया था। वैशाख शुक्ला ४ सं० १९४६ वि० को ६४ वर्ष की आयु में सेठजी परलोक गामी हुये।

१७—लाला कालीचरण रामचरण (मन्त्री आर्यसमाज फर्रुखाबाद)—

फर्रुखाबाद के जिस धनाढ्य वर्ग ने स्वामीजी की शिक्षाओं को स्वीकार कर आर्यसमाज के सिद्धान्तों के प्रचार प्रसार में अपना योगदान दिया उनमें लाला कालीचरण रामचरण के नाम उल्लेखनीय हैं। कालीचरण और रामचरण सहोदर भाई थे। १९३७ वि० में आप दोनों ने आर्यसमाज में प्रवेश किया। लाला कालीचरण आर्यसमाज फर्रुखाबाद के सात वर्ष तक मन्त्री रहे। परोपकारिणी सभा के प्रथम अधिवेशन में दोनों भाई सम्मिलित हुये थे तथा उन्होंने दयानन्द आश्रम की स्थापना में क्रमशः ५०० तथा १०० रुपये प्रदान किये। वैदिक यन्त्रालय की स्थापना हेतु लाला कालीचरण ने ५०० रुपये भेंट किये। १८९४ ई० में लाला रामचरण तथा १९०० में लाला कालीचरण का देहान्त हुआ। परोपकारिणी सभा का सभासद पद दोनों भाइयों को संयुक्त रूप से प्राप्त था। लाला कालीचरण ने १८९० ई० में सभासद पद से त्यागपत्र दे दिया जिसे स्वीकार कर लिया गया, परन्तु लाला रामचरण सभासद बने रहे।

१८—बाबू छेदीलाल गुमाश्ते —

इनका निवास स्थान मेरठ था। ये स्वामीजी के विश्वासपात्र भक्त थे। जब महाराष्ट्र निवासिनी विदुषी रमाबाई स्वामीजी से भेंट करने आई तो उसे छेदीलालजी के बंगले पर ठहराया गया। थियोसोफिकल सोसाइटी के संस्थापक कर्नल आल्काट तथा मैडम ब्लैवेट्स्की भी उन्हीं दिनों उसी बंगले में ठहरे थे। सभा के किसी भी अधिवेशन में ये उपस्थित नहीं हो सके।

१९—लाला सांईदास मंत्री आर्यसमाज, लाहौर—

पंजाब के जो कर्मठ पुरुष स्वामी दयानन्द के सम्पर्क में आये उनमें लाला सांईदास का नाम अग्रगण्य है। लालाजी का जन्म जालंधर जिले की फिल्लौर तहसील के अन्तर्गत लस्साडा ग्राम में १८४१ ई० में हुआ। अमृतसर से दसवीं कक्षा उत्तीर्ण कर ये पंजाब के गवर्नर के कार्यालय में क्लर्क बन गये। सरकारी सेवा में रहते हुये भी लाला सांईदास की प्रवृत्ति समाज सुधार तथा धर्म शोधन की ओर थी। प्रारम्भ से वे ब्रह्मसमाज के सदस्य बने, पुनः सत्य सभा नामक एक अन्य संस्था की स्थापना की, अन्ततः स्वामी दयानन्द के लाहौर आगमन

पर इस दिव्य संन्यासी की क्रांतिकारी शिक्षाओं को स्वीकार कर आर्यसमाज के सभासद बन गये। २४ जून १८७७ को जब सर्व प्रथम लाहौर में आर्यसमाज की स्थापना हुई तो लाला सांईदास उसके मन्त्री बनाये गये। लाला सांईदास स्वदेशी वस्त्र, स्वदेशी भाषा तथा स्वदेशी विचारधारा के कट्टर पक्ष पोषक थे। आर्यसमाज में नवयुवकों को प्रविष्ट कराने के आप घोर समर्थक थे। लाला लाजपतराय, महात्मा मुन्शीराम आदि अग्रणी नेता लालाजी का प्रोत्साहन पाकर ही आर्यसमाज के प्रमुख कार्यकर्त्ता बन सके। जून १८९० में आपका परलोकवास हुआ।

२०—बाबू माधोलाल मन्त्री, आर्यसमाज दानापुर (बिहार)—

कतिपय अन्य स्थानों की भाँति बिहार का दानापुर नगर स्वामीजी की शिक्षाओं को ग्रहण करने में अग्रगण्य रहा। यहाँ के निवासी बाबू माधोलाल ने स्वामीजी को १८७९ ई० में आमन्त्रित किया। फलतः ३० अक्टूबर १८७९ को वे दानापुर पधारे और उक्त बाबू माधोलाल के गृह पर ही निवास किया। उन्होंने स्वामीजी के कर कमलों से यज्ञोपवीत भी धारण किया था।

२१—रावबहादुर रा० रा० पं० गोपालराव हरि देशमुख सदस्य, गवर्नर कौंसिल बम्बई, प्रधान आर्यसमाज बम्बई। (निधन १८९३ ई०)

महाराष्ट्र के जिन उच्च पदस्थ तथा विचारशील लोगों ने स्वामीजी की विचारधारा को सर्वात्मना स्वीकार किया था उनमें पं० गोपालराव हरि देशमुख प्रमुख थे। राव बहादुर प्रथम बम्बई में न्यायाधीश रहे। कालान्तर में गवर्नर की कौन्सिल के सदस्य भी बने। लोकहितवादी नामक अपनी मराठी पुस्तक (निबंध संग्रह) में देशमुख महाशय ने स्वामीजी के ओजस्वी व्यक्तित्व तथा उनके महान् कृतित्व का विशद मूल्यांकन किया। लाला रामशरणदास के निधन पर रावबहादुर को परोपकारिणी सभा के प्रथम अधिवेशन में ही मंत्री पद पर नियुक्त किया गया था।

२२—रावबहादुर रा० रा० महादेव गोविन्द रानडे, न्यायाधीश पूना—

सुप्रसिद्ध समाज सुधारक, विचारक तथा महाराष्ट्र के विख्यात नेता महामति रानडे प्रथम प्रार्थना समाज से सम्बन्धित रहे। प्रार्थना समाज की स्थापना कर उन्होंने महाराष्ट्र में समाज सुधार की नींव डाली। स्वामी दयानन्द को उन्होंने १८७५ ई० में पूना आमंत्रित किया जहाँ वे न्यायाधीश पद पर कार्य कर रहे थे। रानडे की प्रेरणा से ही स्वामीजी ने भिड़े के बाड़े

में तथा पूना छावनी में लगभग ५० व्याख्यान दिये। इस व्याख्यान माला की समाप्ति पर उन्हीं की प्रेरणा से स्वामीजी के अभिनन्दन में एक सभा का आयोजन किया गया परन्तु पौराणिक समुदाय ने इस सभा को भंग करने तथा महाराज का अपमान करने के लिये एक गधे का जलूस निकाला। श्री महाराज के निधन के पश्चात् परोपकारिणी सभा की जो प्रथम बैठक अजमेर में हुई उसमें रानडे महोदय भी उपस्थित थे। इस बैठक में देश भर की आर्यसमाजों को परस्पर संगठित करने तथा उनका परोपकारिणी सभा से सम्बन्ध स्थापित करने का प्रस्ताव भी रानडे ने ही उपस्थित किया। स्वामीजी की कीर्ति को सुस्थिर बनाने हेतु तथा उनके कार्य को अग्रसर करने के लिये दयानन्द आश्रम की स्थापना तथा उसके तत्त्वावधान में पुस्तकालय, वैदिक विद्यालय, यन्त्रालय, व्याख्यानगृह, अनाथालय आदि संस्थाओं को संचालित करने का प्रस्ताव भी इस अधिवेशन में उन्होंने ही उपस्थित किया था।

२३—पं० श्यामजी कृष्ण वर्मा प्रोफेसर संस्कृत, आक्सफोर्ड यूनीवर्सिटी—

संस्कृत के अद्वितीय विद्वान् तथा क्रान्तिकारी देश भक्त श्यामजी कृष्ण वर्मा का जन्म कच्छ राज्य के मांडवी नामक ग्राम में कार्तिक कृष्णा २ सं० १९१४ वि० (५ अक्टूबर १८५७ ई०) को हुआ। श्यामजी का जन्म एक साधारण परिवार में हुआ था। कुशाग्र बुद्धि होते हुये भी उनकी शिक्षा की कोई समुचित व्यवस्था नहीं हो सकी थी। अक्टूबर १८७४ में श्यामजी की स्वामीजी से प्रथम भेंट बम्बई की भाटिया धर्मशाला में हुई। स्वामीजी इस मेधावी किशोर की अध्ययन प्रवणता को पहचान गये तथा उनके संस्कृत शिक्षण की समुचित व्यवस्था कर दी। स्वामीजी की प्रेरणा से ही श्यामजी का विवाह एक सम्पन्न पुरुष सेठ छबीलदास भंसाली की कन्या भानुमती के साथ हो गया। उच्चतर अध्ययन के लिये स्वामीजी ने श्यामजी को १८७९ मार्च में इंग्लैण्ड भेजा। यहाँ आक्सफोर्ड विश्वविद्यालय में ये संस्कृत के प्राध्यापक बन गये तथा उच्चतर अध्ययन भी करते रहे। स्वामीजी का श्यामजी से निरन्तर पत्र व्यवहार होता रहता था।

१८८५ ई० में बैरिस्टर की परीक्षा में उत्तीर्ण होकर श्यामजी स्वदेश आये। यहाँ से रतलाम, उदयपुर, जूनागढ़ आदि अनेक रियासतों के प्रधानमन्त्री पद पर कार्य करते रहे। कुछ समय पश्चात् श्यामजी की राजनैतिक और क्रान्तिकारी गतिविधियाँ बढ़ गई। अब ये पुनः लन्दन पहुँचे और इण्डियन होमरूल सोसाइटी की स्थापना (१८ फरवरी १९०५) की तथा इण्डियन सोशियोलोजिस्ट नामक पत्र निकाला। विनायक दामोदर सावरकर जैसे क्रान्ति-

कारी देशभक्त श्यामजी के ही शिष्य थे। अन्ततः श्यामजी को इंगलैण्ड से निर्वासित होना पड़ा और स्विट्जरलैण्ड के जिनेवा नगर में ३१ मार्च १९३० को उनका निधन हुआ।

२८ दिसम्बर १८८५ ई० के अधिवेशन में पं० मोहनलाल विष्णुलाल पण्ड्या के द्वारा सभा के मन्त्री पद स्वीकार कर लेने पर श्यामजी कृष्ण वर्मा को उपमन्त्री नियुक्त किया गया। जब वैदिक यन्त्रालय अजमेर स्थानान्तरित किया गया तो पं० श्यामजी कृष्ण वर्मा उसके अधिष्ठाता पद पर रहे।

२४—कर्नल महाराज प्रतापसिंह के० सी० एस० आई० जोधपुर—

मेरठ निवासी लाला रामशरणदास के निधन के कारण रिक्त हुए सभासद के पद पर जोधपुर के महाराजा जसवन्तसिंहजी के अनुज महाराज प्रतापसिंह को परोपकारिणी सभा ने अपने प्रथम अधिवेशन दि० २८, दिसम्बर १८८३ के दिन सभासद मनोनीत किया। महाराज प्रतापसिंह का जन्म कार्तिक कृष्णा ६ सं० १९०२ वि० (२१-१०-१८४५ ई०) को महाराजा तख्तसिंह के यहाँ हुआ। १८७६ से १९०२ तक ये जोधपुर राज्य के मुसाहिब आला (प्रधान मन्त्री) पद पर रहे। जोधपुर में स्वामीजी को राजकीय आमन्त्रण दिलाने में महाराज प्रतापसिंह का प्रमुख हाथ था। स्वामी दयानन्द की शिक्षाओं का महाराज प्रतापसिंह पर सुनिश्चित प्रभाव पड़ा। इन्हीं के प्रयत्न से स्वामीजी की उपस्थिति में ही आर्यसमाज जोधपुर की स्थापना श्रावण कृष्णा १० सं० १९४० को हुई। महाराज ने जोधपुर राज्य की कचहरियों में हिन्दी भाषा को राजभाषा के रूप में १२ अगस्त १८८३ ई० को स्थान देने के आदेश दिये तथा ज्येष्ठ कृष्णा ४ सं० १९४१ को राजकर्मचारियों को खादी के वस्त्र धारण करने की प्रेरणा राज्यादेश द्वारा की। विदेशों में वैदिक धर्म प्रचारार्थ स्वामी भास्करानन्द को इंग्लैण्ड तथा अमेरिका भेजा। डी० ए० वी० कालेज, लाहौर के भवन का शिलान्यास भी २३ अप्रैल १९०५ को महाराज प्रतापसिंह द्वारा ही हुआ। उक्त कालेज के लिये आपने प्रचुर धनराशि सहायता रूप में भी प्रदान की। ४ सितम्बर १९२२ ई० को महाराज प्रतापसिंह का ७७ वर्ष की आयु में निधन हो गया। महाराजा प्रतापसिंह सभा के अध्यक्ष पद पर भी रहे परन्तु उन्होंने अपने सदस्यता काल में एक बार भी सभा के अधिवेशन में उपस्थित होने का कष्ट नहीं किया।

२५—लाला लालचन्द एम० ए०—

यद्यपि परोपकारिणी सभा ने जोधपुर के महाराज प्रतापसिंह को १८८३

में ही सभासद मनोनीत किया था, परन्तु वे लगभग ५ वर्षों तक इस पद को स्वीकार करने में असमर्थता व्यक्त करते रहे। अन्ततः २८ दिसम्बर १८८८ ई० के अधिवेशन संख्या ४ में यह निश्चय हुआ कि महाराज प्रतापसिंह के स्थान पर लाला लालचन्द सभासद बनायें जाये। लाला लालचन्द पंजाब में कालेज विभाग के प्रमुख स्तम्भ थे।

२६—लाला ईश्वरदास एम० ए० लाहौर—

देलवाड़े के राजराणा फतहसिंहजी के १८९० ई० में दिवंगत होने पर लाला ईश्वरदास उसी वर्ष के दिसम्बर अधिवेशन में सभासद बनाये गये।

२७—लाला हंसराज बी० ए० लाहौर—

(जन्म १५ अप्रैल १८६४ ई०-निधन १५-११-१९३८) आर्यसमाज के महान् शिक्षा शास्त्री, त्यागी एवं तपस्वी नेता महात्मा हंसराजजी सेठ निर्भयराम के १८९० में स्वर्गवासी होने पर उसी वर्ष सभासद बनाये गये। महात्मा हंसराज ने जिस प्रकार डी० ए० वी० कालेज लाहौर का अवैतनिक रूप से प्रिन्सिपल पद स्वीकार कर उसे आर्यसमाज का एक अद्वितीय शिक्षण संस्थान बनाया, यह एक इतिहास प्रसिद्ध बात है। पंजाब में कतिपय कारणवश जब आर्यसमाज का विभाजन हो गया तो महात्माजी कालेज विभाग के सर्व सम्मत नेता रहे तथा आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा का संगठन कर वैदिक धर्म प्रचार कार्य में तत्परता दिखाई। महात्माजी का निधन १५ नवम्बर १९३८ को हुआ। महात्माजी परोपकारिणी सभा के कार्यों में बराबर रुचि लेते थे।

२८—दीवान बहादुर हर विलास शारदा—

लाल सांईदास की मृत्यु (१८९०) के कारण रिक्त हुये स्थान पर हरविलास शारदा चुने गये। आधी शताब्दी से भी अधिक समय तक परोपकारिणी सभा के मन्त्री पद पर रह कर उसका सूत्र संचालन करने वाले दीवान बहादुर हर विलास शारदा का जन्म ३ जून १८६७ ई० को अजमेर में श्री हरनारायण जी के यहाँ हुआ। बाल्यकाल में ही स्वामी दयानन्द के दर्शन तथा उनका आशीर्वाद प्राप्त करने का सौभाग्य उन्हें प्राप्त हुआ था। १८९० में वे परोपकारिणी सभा के सभासद बने तथा तीन वर्ष पश्चात् १८९३ ई० में वे इस सभा के संयुक्त मन्त्री पद पर चुने गये। दीवान बहादुर शारदा एक प्रसिद्ध समाज सुधारक शिक्षा शास्त्री, लेखक, विधायक तथा साहित्यकार के रूप में स्मरण किये जायेंगे। केन्द्रीय विधायिका सभा के वे वर्षों

तक सभासद रहे तथा बाल विवाह निरोधक कानून पारित करा कर शारदा एक्ट के जनक के रूप में ख्याति प्राप्त की। शारदाजी ने अंग्रेजी में स्वामीजी का वृहद् जीवन चरित लिखा तथा १९३३ ई० में महर्षि की निर्वाण अर्द्ध शताब्दी के अवसर पर दयानन्द स्मृति ग्रन्थ (Dayanand Commemoration Volume) का सम्पादन किया। शंकर और दयानन्द, स्वामी विरजानन्द, पं० श्यामजी कृष्ण वर्मा आदि पुस्तकें भी आपने लिखीं तथा Works of Maharshi Dayanand aud Paropkarini Sabha लिख कर महर्षि के ग्रन्थों के सम्बन्ध में प्रचलित अनेक प्रवादों का समाधान किया। इतिहास में उनकी अत्यधिक रुचि थी और मध्यकालीन राजपूत इतिहास पर उन्होंने अधिकार पूर्वक ग्रन्थ तथा शोध निवन्ध लिखे। २० जनवरी १९५५ को आपका निधन हुआ।

२९—लाला लाजपतराय वकील, हिसार—

प्रसिद्ध देशभक्त तथा आर्यसमाज के प्रख्यात नेता लाला लाजपतराय को परोपकारिणी सभा का सभासद ६ सितम्बर १८९१ के अधिवेशन (संख्या ६) में बनाया गया। एक स्थान तो महाराणा सज्जनसिंहजी की मृत्यु (१८८४) के कारण लगभग ७ वर्ष से ही रिक्त था। यह आशा थी कि उदयपुर के तत्कालीन नरेश महाराणा फतहसिंहजी इस पद को स्वीकार कर लेंगे। वे सभा के संरक्षक बनने के लिये तो सहमत हो गये थे किन्तु सदस्यता स्वीकार नहीं की थी। दूसरा स्थान रा० व० सुन्दरलालजी के निधन के कारण १८९० में रिक्त हुआ था। प्रथम रिक्त स्थान पर लालाजी को सभासद पद दिया गया। यद्यपि लालाजी का सामाजिक और राजनैतिक जीवन अत्यन्त व्यस्तता पूर्ण था, तथापि वे महर्षि की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा की प्रवृत्तियों में यथाशक्य रुचि लेते थे।

३०—पं० रामदुलारे वाजपेयी—

१८९१ ई० में वाजपेयीजी सभा के सभासद मनोनीत हुये। ये लखनऊ के निवासी थे। वाजपेयीजी सभा के सक्रिय सदस्य थे। पं० श्यामजी कृष्ण वर्मा के वैदिक यन्त्रालय के अधिष्ठाता पद से त्याग पत्र दे देने पर इन्हें अधिष्ठाता नियुक्त किया गया। आप सभा की प्रवृत्तियों में पूर्ण रुचि लेते थे।

३१— ठाकुर मुकुन्दसिंह रईस, छलेसर—

स्वामी जी के परम-भक्त छलेसर के ठाकुर मुकुन्दसिंह १८९१ ई० में

वेदला के राव तख्तसिंह जी के निधन के कारण हुए रिक्त स्थान पर सभा के सदस्य मनोनीत हुये। सभा में उनकी उपस्थिति एक बार ही हुई।

३२—श्री रामगोपाल बैरिस्टर—

रा० ब० गोपाल राव हरि देशमुख के निधन के कारण हुये रिक्त स्थान पर आपको १८९३ के अधिवेशन में सभासद चुना गया। बैरिस्टर रामगोपाल विद्वान्, विचारक तथा सुयोग्य लेखक थे। दी० ब० हरविलास शारदा के वे परम मित्र थे। जिस समय स्वामीजी ने भिनाय की कोठी में परलोक गमन किया उस समय श्री रामगोपाल अपने अन्य मित्रों हरविलास शारदा तथा रामविलास शारदा के साथ उसी भवन के अन्य कक्ष में विद्यमान थे। स्वामीजी की शिक्षाओं का उन पर बड़ा प्रभाव पड़ा था। वे स्वामीजी के भाषण अजमेर में कई बार सुन चुके थे। रामगोपालजी ने भी सभा की प्रगति में एक सदस्य के रूप में पूर्ण योगदान दिया।

३३—लाला पुरुषोत्तमनारायण फर्रुखाबाद—

आपके पिता लाला जगन्नाथप्रसाद स्वामीजी के परम भक्त थे। लालाजी के निधन पर ही आपको दिसम्बर १८९३ ई० में सभासद मनोनीत किया गया। अपने पिता की भाँति लाला पुरुषोत्तमनारायण भी आर्यसमाज के प्रति पूर्ण कर्त्तव्य निष्ठ तथा महर्षि दयानन्द प्रतिपादित सिद्धान्तों के अनुपालन में दत्तचित्त थे। वे आर्यसमाज फर्रुखाबाद के उपप्रधान एवं मन्त्री आदि पदों पर चुने गये। आपने विभिन्न धार्मिक कार्यों में दान भी दिया। सभा के दो अधिवेशनों में उपस्थित हुये।

३४—मुन्शी पद्मचन्दजी प्रधान आर्यसमाज अजमेर—

दि० २८ दिसम्बर १८९६ को मुन्शी पद्मचन्दजी सभासद मनोनीत हुये। पद्मचन्दजी आर्यसमाज अजमेर के प्रधान तथा प्रमुख कार्यकर्त्ता थे। इनका मूल निवास नसीराबाद था, परन्तु अजमेर नगरपालिका में ये निरीक्षक पद पर कार्य करते थे। मुन्शी पद्मचन्दजी ने सभा की अचल सम्पति के निर्माण में प्रशंसनीय योगदान दिया। उन्होंने आर्यसमाज अजमेर के विशाल भवन का निर्माण कराया तथा दयानन्द अनाथालय, दयानन्द आश्रम पाठशाला आदि की प्रवृत्तियों में भी अपना पूर्ण सहयोग दिया। उनके निरीक्षण में ही केसरगंज स्थित अधिकांश भवन बने। उनका निधन २६ अप्रैल १९०८ को हुआ। वे सभा के सक्रिय तथा प्रभावशाली सदस्य थे।

३५—बैरिस्टर रोशनलाल प्रधान आर्यसमाज, इलाहाबाद—

२८ दिसम्बर १८९६ के अधिवेशन में सभासद पद पर अभिषिक्त हुये।

३६—श्री विजयसिंह वर्मा कुनाड़ी, कोटा—

२८ दिसम्बर १८९६ को सभा के नवें अधिवेशन में कोटा राज्यान्तर्गत कुनाड़ी जागीर के स्वामी श्री विजयसिंह वर्मा सभासद बनाये गये। सभा के किसी भी अधिवेशन में ये उपस्थित नहीं हुये।

३७—रावसाहब कर्णसिंह बेदला—

२८ दिसम्बर १८९६ को सभा के नवें अधिवेशन में सभासद बने। सभा के किसी भी अधिवेशन में इनकी उपस्थिति नहीं हुई।

३८—श्री गौरीशंकर बैरिस्टर, अजमेर—

राव बहादुरसिंह मसूदा के त्याग पत्र दे देने के कारण हुये रिक्त स्थान पर इन्हें २८ दिसम्बर १८९६ के अधिवेशन में सभासद चुना। ये उस समय महाराज कुमार प्रतापगढ़ के ट्यूटर थे। बैरिस्टर गौरीशंकर ने सभा की विभिन्न प्रवृत्तियों में अपना सक्रिय योगदान दिया।

३९—महाराज कुमार उम्मेदसिंहजी शाहपुरा—

शाहपुराधीश सर नाहरसिंहजी के युवराज श्री उम्मेदसिंहजी २७ दिसम्बर १९०६ के १० वें अधिवेशन में सभासद बनाये गये। १८९६ के पश्चात् १९०६ में ही सभा का अधिवेशन हो पाया था। अपने पिता की ही भाँति श्री उम्मेदसिंहजी भी स्वामी दयानन्द के परम भक्त तथा आर्यसमाज के प्रति समर्पित व्यक्तित्व वाले राज पुरुष थे। १९३३ में ऋषि निर्वाण अर्द्ध शताब्दी का उत्सव आपकी अध्यक्षता में ही मनाया गया। आप कालान्तर में सभा के प्रधान भी रहे। १९५४ को आपका निधन हो गया।

४०—ठाकुर कर्णसिंह, जोबनेर—

२७ दिसम्बर १९०६ के अधिवेशन में इन्हें सदस्य बनाया गया। जयपुर राज्य के अन्तर्गत जोबनेर ठिकाने के ठाकुर कर्णसिंह भी स्वामीजी के अद्वितीय भक्त थे। इनका जन्म १९२४ वि० में हुआ। जब १९४० वि० में स्वामीजी का अजमेर में निधन हुआ उस समय कर्णसिंह मेयो कालेज अजमेर में छात्र थे। उन्होंने महर्षि के महाप्रयाण का समाचार सुनते ही यह निश्चय किया—

दयानन्दोद्देश्य पूर्त्यर्थं आत्मानं समर्पयामि। दयानन्द के उद्देश्यों की पूर्ति हेतु मैं अपने आपको समर्पित करता हूँ। रावल कर्णसिंह ने श्री महाराज को अपनी भावाञ्जलि अर्पित करते हुये निम्न दोहा लिखा था—

राज त्रिलोकी को हमें मिलणो है आसान।
गुरु दयानन्द सारखा मिलणो कठिन जहान॥

रावल कर्णसिंहजी ने अपने नगर जोबनेर में डी० ए० वी० हाई स्कूल की स्थापना सं० १९४४ वि० में की। सं० १९५१ की दीपावली पर जोबनेर में पं० लेखरामजी के द्वारा भारतवर्ष में सर्वप्रथम शुद्धि का कार्यक्रम सम्पन्न हुआ। इस अवसर पर महात्मा हंसराजजी, लाला लाजपतराय, स्वामी नित्यानन्द एवं स्वामी विश्वेश्वरानन्दजी आदि आर्यसमाज के गण्यमान्य नेता उपस्थित थे। इस अवसर पर बिड़दखां को शुद्ध कर वृद्धिचन्द्र का नाम दिया गया। पं० लेखराम जोबनेर वर्षों तक आते रहे। पं० लेखराम के बलिदान पर रावल कर्णसिंह ने निम्न सोरठा उच्चरित किया—

लेख मरण लखनांह हयहयकारो हिन्द हुयो।
वाल्हा बीछड़तांह करण कलेजो कांपियो॥

पं० लेखराम की मृत्यु को देखकर हिन्द में हाहाकार मच गया। अपने प्रिय का वियोग होते ही कर्णसिंह का कलेजा कांप गया। रावलजी का निधन आषाढ़ शु० ५ सं० १९६८ वि० को हुआ।

४१—श्री रामभजदत्त चौधरी बी० ए० एल० एल० बी० वकील, लाहौर—

२७ दिसम्बर १९०६ के अधिवेशन में सभा के सदस्य निर्वाचित हुये। इनका जन्म गुरुदासपुर जिले के ग्राम कंजरूर में हुआ। एल० एल० बी० करने के अनन्तर लाहौर में वकालत आरम्भ की। आपने पंजाब में दलित वर्ग के उत्थान तथा शुद्धि कार्य में महत्त्वपूर्ण योग दिया। चौधरीजी सभा के दो अधिवेशनों में सम्मिलित हुये थे।

४२—लाला मुन्शीराम मुख्याधिष्ठाता, गुरुकुल कांगड़ी—

आर्यसमाज के महान् नेता, शुद्धि संगठन के मंत्रदाता तथा गुरुकुल शिक्षा प्रणाली के उद्भावक महात्मा मुन्शीराम को २७ दिसम्बर १९०६ में परोपकारिणी सभा का सभासद मनोनीत किया गया। महात्मा मुन्शीराम ने आर्यसमाज की विभिन्न प्रवृत्तियों का सुचारु रूप से संचालन एवं नेतृत्व किया। यद्यपि वे आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के प्रधान, गुरुकुल कांगड़ी के आचार्य

एवं मुख्याधिष्ठाता आदि विभिन्न पदों पर कार्य कर रहे थे, तथापि सभा की प्रवृत्तियों में भी उन्होंने पूर्ण रुचि एवं उत्साह से भाग लिया। रा० सा० रामविलासजी शारदा आपके परम सहयोगी थे।

४३—पं० गंगाप्रसाद एम० ए० डिप्टी कलक्टर, गोरखपुर—

आर्यसमाज के प्रसिद्ध विद्वान् तथा Fountain Head of Religion जैसी उत्कृष्ट पुस्तक के रचयिता पं० गंगाप्रसाद का जन्म मई १८७१ ई० में मेरठ में हुआ। आगरा कालेज से आपने एम० ए० की परीक्षा उत्तीर्ण की। तदुपरान्त कुछ समय तक मेरठ कालेज में प्राध्यापन कार्य करने के अनन्तर डिप्टी कलक्टर के पद पर नियुक्त हुये। पर्याप्त समय तक ब्रिटिश शासन की सेवा करने के पश्चात् टिहरी राज्य में न्यायाधीश पद पर रहे। सार्वदेशिक सभा के प्रधान पद पर भी रहने का सौभाग्य आपको प्राप्त हुआ। आपके द्वारा रचित ग्रन्थों में धर्म का आदि स्रोत के अतिरिक्त केन तथा कठ उपनिषद् का अंग्रेजी अनुवाद, जाति व्यवस्था, ज्योतिषचन्द्रिका, गरुड़ पुराण की आलोचना, आत्मकथा आदि उल्लेखनीय हैं। १३ जनवरी १९६६ को जयपुर में आपका निधन हुआ। पं० गंगाप्रसाद २७ दिसम्बर १९०६ ई० को परोपकारिणी सभा के सभासद बने। पं० गंगाप्रसादजी की सभा के प्रति सेवायें अवर्णनीय हैं। वे साहित्यिक अभिरुचि सम्पन्न, उच्चकोटि के विचारक विद्वान् तथा कुशल नेता थे। सभा को उनका सक्रिय सहयोग समय समय पर प्राप्त होता रहा।

४४—श्री पं० भगवानदीन मिश्र, प्रधान, आर्यप्रतिनिधि सभा पश्चिमोत्तर प्रदेश—

पं० भगवानदीन का जन्म चैत्र शुक्ला नवमी १९२७ वि० को हरदोई जिले के एक ग्राम में हुआ। पं० भगवानदीन ने उत्तर प्रदेश में वैदिक धर्म प्रचार तथा आर्य समाज के संगठन का महत्त्वपूर्ण कार्य किया। वे वर्षों तक उत्तरप्रदेशीय आर्य प्रतिनिधि सभा के मन्त्री तथा प्रधान रहे। गुरुकुल वृन्दावन के मुख्याधिष्ठाता पद पर भी प्रतिष्ठित रहे, तथा अपना आर्य भास्कर प्रेस सभा को भेंट कर दिया। ४ जून १९१२ को आपका निधन हुआ। परोपकारिणी सभा में आपका प्रवेश २७ दिसम्बर १९०६ के अधिवेशन में हुआ। सभा के तीन अधिवेशनों में आप उपस्थित हुये।

४५—बाबू रामविलास शारदा अजमेर—

महर्षि दयानन्द की प्रथम सुविस्तृत हिन्दी जीवनी के लेखक बाबू राम-

विलास शारदा का जन्म पौष शुक्ला प्रतिपदा सं० १९२१ वि० को हुआ। इनके पिता श्री रामरतनजी अजमेर के प्रसिद्ध व्यवसायी थे। बाल्यावस्था में ही आपने महर्षि के व्याख्यान सुने थे। स्वामीजी के निधन के पश्चात् आप विधिवत् आर्यसमाज के सभासद बने। यद्यपि रामविलासजी रेलवे के कैरेज वैगन विभाग में कर्मचारी थे परन्तु अपना अवकाश का सारा समय आर्यसमाज के कार्यों में ही लगाते। आर्यधर्मेन्द्र जीवन आपके द्वारा लिखित महर्षि का विशद जीवन चरित है। आप परोपकारिणी सभा द्वारा संचालित सभी प्रवृत्तियों का प्रमुख रूप से सूत्र संचालन करते थे। अखिल भारतीय स्तर के आर्यनेताओं से आपका घनिष्ट सम्पर्क रहा। ७ मई १९३१ को उनका स्वर्गवास हुआ। बाबू रामविलास शारदा प्रचार और ख्याति से दूर रहकर मौन रूप से सेवा करने वाले विचक्षण पुरुष थे। जिस समय सार्वदेशिक सभा की स्थापना नहीं हुई थी उस समय भी ब्रह्मचारी नित्यानन्दजी तथा महात्मा मुन्शीरामजी जैसे नेताओं के सहयोग से वे आर्यसमाज की सार्वदेशिक प्रवृत्तियों का संचालन करते थे। सभा के द्वारा संचालित वैदिक यन्त्रालय को सुव्यवस्थित करने तथा उसे प्रान्त के सर्वश्रेष्ठ मुद्रणालय के रूप में विकसित करने का श्रेय रावसाहब को ही है। सभा के व्यवसाय सम्बन्धी तथा वित्तीय प्रश्नों को रावसाहब को सौंप कर सभा मन्त्री दी० ब० हरविलासजी सारड़ा पूर्णतया संतुष्ट थे तथा अपनी साहित्यिक गतिविधियों द्वारा सभा के उत्कर्ष की वृद्धि करते थे।

४६—पं० वंशीधर शर्मा एम० ए० एल० एल० बी० अजमेर—

आप सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के संगठित होने पर १९०८ में उसके प्रथम प्रधान निर्वाचित हुये थे। अजमेर निवासी होने के कारण सभा की विभिन्न प्रवृत्तियों में शर्माजी का योगदान प्राप्त होता रहा।

४७—पं० विष्णुलाल शर्मा एम० ए०—

रा० ब० दुर्गाप्रसाद के निधन के कारण हुये रिक्त स्थान पर पं० विष्णुलाल शर्मा को १२ नवम्बर १९०९ की बैठक में सभासद चुना गया। आप अंग्रेजी के अच्छे लेखक थे। The Hand Book of Aryasamaj शीर्षक आपकी पुस्तक को अच्छी ख्याति प्राप्त हुई। १९१८ ई० में आपने सभासदी से त्याग-पत्र दे दिया।

४८—श्री रणछोड़दास भवान बम्बई—

२७ अक्तूबर १९१६ की बैठक में इन्हें सदस्य बनाया गया। सेठ रणछोड़-दास भवान मूलतः सौराष्ट्र (काठियावाड़) के निवासी थे। इनके पिता श्री

भवान जीवराज की बम्बई में आटे की मिल थी। बम्बई की आर्यसामाजिक गतिविधियों के वे प्राण रहे। १९१२ में आर्यन ब्रदरहुड के तत्त्वावधान में उन्होंने एक वृहद् प्रीतिभोज का आयोजन किया जिसमें विभिन्न वर्गों के व्यक्तियों ने सम्मिलित होकर खान पान विषयक बन्धनों को तोड़ा। अमलसाड़ में आपने शारदापीठ के शंकराचार्य के साथ पं० बाल कृष्ण शर्मा का शास्त्रार्थ आयोजित कराया। इसमें आर्यसमाज की अपूर्व विजय हुई और शंकराचार्य शास्त्रार्थ के दूसरे दिन ही चले गये। सेठ रणछोड़दास ने स्वामी नित्यानन्द ब्रह्मचारी की एक विशद जीवनी भी प्रकाशित कराई। श्री रणछोड़दास भवान स्वल्पकाल के लिये वैदिक यन्त्रालय के अधिष्ठाता भी रहे थे।

४९—पं० घासीरामजी एम० ए० एल० एल बी० मेरठ—

२७ अक्टूबर १९१६ को सम्पन्न हुये सभा के १७ वें अधिवेशन में आर्यसमाज के प्रसिद्ध साहित्यकार तथा महर्षि की जीवनी के प्रामाणिक लेखक पं० घासीरामजी सभा के सदस्य बने। इनका जन्म कार्तिक पूर्णिमा १९२९ वि० को मेरठ में लाला द्वारिकादास के यहाँ हुआ। इनके पिता स्वामी दयानन्द के उपदेशों को ग्रहण कर मूर्तिपूजा से विरत हो गये थे। पं० घासीरामजी ने मैट्रिक की परीक्षा मेरठ से उत्तीर्ण की। तत्पश्चात् उच्च शिक्षा के लिये आगरा चले गये। १८९४ में बी० ए० और १८९६ में डबल कोर्स लेकर आपने एम० ए० और एल० एल० बी० की परीक्षायें उत्तीर्ण कीं। कुछ वर्षों तक जसवन्त-कालेज जोधपुर में दर्शनशास्त्र के प्राध्यापक रहे। पुनः मेरठ आकर वकालत करने लगे। आर्य प्रतिनिधि सभा संयुक्त प्रान्त के वे वर्षों उपप्रधान और प्रधान रहे। पं० घासीराम ने प्रसिद्ध बंगाली जीवनी लेखक देवेन्द्रनाथ मुखोपाध्याय रचित स्वामी दयानन्द के जीवन चरित का अनुवाद किया तथा उसे पूरा भी किया। उन्होंने देवेन्द्रबाबू द्वारा लिखित दयानन्द चरित (लघु) तथा विरजानन्द चरित का भी अनुवाद किया। उन्होंने स्वामीजी की ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका का भी अंग्रेजी में अनुवाद किया। ३० नवम्बर १९३४ को पडिण्तजी का देहान्त हुआ। सभा की साहित्यिक एवं अनुसंधानात्मक प्रवृत्तियों में पं० घासीरामजी का पूर्ण योगदान रहा।

५०—रावल नरेन्द्रसिंहजी, जोबनेर—

जोबनेर के ठाकुर रावल नरेन्द्रसिंह २७ अक्टूबर १९१६ की बैठक में परोपकारिणी सभा के सभासद बने। रावलजी जयपुर राज्य के मन्त्री पद पर भी रहे। आपका महर्षि दयानन्द एवं आर्यसमाज के प्रति प्रबल आस्थाभाव था। अपने पिता रावल कर्णसिंहजी की भांति रावल नरेन्द्रसिंहजी ने भी आर्यसमाज

की आजन्म सेवा की। १९३० में सभा के तीन अधिवेशनों में निरन्तर अनुपस्थित रहने के कारण इन्हें सदस्यता से पृथक् करना पड़ा परन्तु ३१ वर्ष पश्चात् २ अप्रैल १९६१ को श्री कंवरलाल वाफना की मृत्यु हो जाने के कारण उनके स्थान पर ये पुनः सभा के सभासद बनाये गये।

५१—आचार्य रामदेवजी, गुरुकुल कांगड़ी—

प्रसिद्ध शिक्षा शास्त्री, अद्वितीय वक्ता तथा विद्वान् आचार्य रामदेवजी का प्रवेश परोपकारिणी सभा में २७ अक्टूबर १९१६ को हुआ। रामदेवजी का जन्म ३१ जुलाई १८८१ को हुआ। एफ० ए० तक की शिक्षा डी० ए० वी० कालेज, लाहौर में हुई। महात्मा मुन्शीराम के आप प्रमुख सहायक थे। प्रथम आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के मुख पत्र आर्य पत्रिका के उप सम्पादक बने, पुनः जालंधर के विक्टर हाई स्कूल के मुख्याध्यापक नियुक्त हुये। १९०४ में इन्होंने बी० ए० और १९०५ में बी० टी० की परीक्षायें उत्तीर्ण कीं। जब लाला मुन्शीराम ने गुरुकुल कांगड़ी की स्थापना की तो आचार्य रामदेव उनके मुख्य सहायक बन गये। कालान्तर में महात्मा मुन्शीराम जब गुरुकुल के आचार्य पद से अवकाश ग्रहण कर देश के सार्वजनिक जीवन में अवतीर्ण हुये तो आचार्य रामदेव गुरुकुल के आचार्य और मुख्याधिष्ठाता बन गये। इस पद पर उन्होंने १९३२ तक कार्य किया। आचार्य रामदेवजी का सहयोग सभा को सर्वदा प्राप्त हुआ। विशेषतः साहित्यिक एवं शैक्षणिक प्रवृत्तियों के संचालन में आचार्यजी ने अपनी योग्यता और अनुभव के आधार पर सभा का मार्ग दर्शन किया।

आचार्य रामदेव एक सिद्धहस्त लेखक भी थे। महात्मा मुन्शीराम के सहलेखन में आपने Arya Samaj & Its Detractors—A Vindication नामक विशद पुस्तक लिखी तथा आर्यसमाज के विषय में फैलाई गई उन भ्रान्तियों का निराकरण किया जिनके आधार पर इस धार्मिक, सामाजिक आन्दोलन को राजनैतिक कहा जाता था। उन्होंने भारतवर्ष का इतिहास (वैदिक और आर्ष युग), पुराणमत पर्यालोचन (पं० जयदेव विद्यालंकार के सहलेखन में) आदि पुस्तकें भी लिखीं। वर्षों तक गुरुकुल की अंग्रेजी मुख-पत्रिका The Vedic Magazine के वे सम्पादक भी रहे। देश की पुकार पर आप महात्मा गाँधी द्वारा संचालित सत्याग्रह आन्दोलन में भी अवतीर्ण हुये तथा कारावास की यातनायें सहीं। ९ दिसम्बर १९३९ को कन्या गुरुकुल देहरादून में आपका स्वर्गवास हुआ।

५२—महाराजाधिराज साहू छत्रपति कोल्हापुर नरेश—

पं० वंशीधरजी शर्मा के देहान्त के कारण जो स्थान रिक्त हुआ उस पर २९ दिसम्बर १९१८ के १९ वें अधिवेशन में कोल्हापुर नरेश साहू छत्रपति सभासद बनाये गये। आप महर्षि के परम भक्त थे। मास्टर आत्माराम अमृतसरी की प्रेरणा से इन्होंने कोल्हापुर में आर्यसमाज तथा गुरुकुल की स्थापना की। राजाराम कालेज के प्रिन्सिपल पद पर डा० बालकृष्ण की नियुक्ति हुई जो पहले गुरुकुल कांगड़ी में प्राध्यापक थे। दलित वर्ग के उत्थान के लिये महाराज साहू छत्रपति ने प्रवल प्रयत्न किये। ६ मई १९२२ को साहू छत्रपति का निधन हुआ। उनके निधन पर मद्रास के जस्टिस नामक दैनिक पत्र ने लिखा—"He was a prince among men and a man among Princes."

५३—श्री गुलराज गोपाल गुप्त—

श्री विष्णुलाल शर्मा के त्याग पत्र दे देने के कारण हुये रिक्त स्थान पर श्री गुलराज गोपाल गुप्त २९ दिसम्बर १९१२ के अधिवेशन में सभासद चुने गये। श्री गुप्तजी मुलतः उत्तरप्रदेश के निवासी थे, परन्तु अजमेर में निवास करने के कारण सभा को आपकी सेवाओं का लाभ मिलता रहा। आप वैदिक यन्त्रालय के अधिष्ठाता पद पर भी रहे तथा सभा के अन्य कार्यों में पूर्ण सहयोग देते रहे। श्री गुप्तजी के पुत्र लाला हंसराज गुप्त कालान्तर में सभा के प्रधान पद पर रहे।

५४—महाराजाधिराज सर सयाजीराव गायकवाड़, बड़ौदा नरेश—

१९२३ ई० में जोधपुर के कर्नल महाराज प्रतापसिंहजी के निधन के कारण हुये रिक्त स्थान पर बड़ौदा के सुधार प्रिय महाराजा सयाजीराव दि० ४ मार्च १९२३ के अधिवेशन में सभासद चुने गये। महाराजा गायकवाड़ एक अत्यन्त उदार विचारों के लोकप्रिय शासक थे। उन्होंने अपने राज्य में हरिजनों के उत्थान तथा दलितवर्ग की शिक्षा के लिये प्रचुर प्रयास किया। स्वामी नित्यानन्द ब्रह्मचारी के उपदेशों से वे अत्यन्त प्रभावित हुये थे तथा अमृतसर के पं० आत्मारामजी को अपने राज्य में बुलाकर अछूत जातियों की शिक्षण संस्थाओं का निरीक्षक नियुक्त किया। सर सयाजीराव ने हिन्दी के प्रचार प्रसार के लिये भी प्रयत्न किया तथा विभिन्न समाज सुधार के कार्यों में अग्रणी रहे। इन्हें सभा ने अपने प्रधान पद पर भी अभिषिक्त किया। सभा ने महाराज गायकवाड़ को उनके दलितोद्धार विषयक विभिन्न आयोजनों के उपलक्ष्य में

पतित पावन की उपाधि प्रदान की। सर सयाजीराव हिन्दी भाषा के प्रवल पोषक तथा समर्थक थे।

५५—एच० एच० महाराजा सर राजाराम, कोल्हापुर—

स्व० महाराजा साहू छत्रपति के निधन पर महाराजा राजाराम कोल्हापुर दि० ४ मार्च १९२३ के अधिवेशन में सदस्य बने। इनके नाम पर कोल्हापुर में राजाराम कालेज तथा हाई स्कूल की स्थापना हुई। पं० गंगाप्रसाद उपाध्याय हाई स्कूल के मुख्याध्यापक तथा डा० बालकृष्ण कालेज के प्रिन्सिपल रहे थे। इनके राज्यकाल में कोल्हापुर राज्य में वैदिक धर्म का पर्याप्त प्रचार हुआ।

५६—पं० भगवद्दत्त बी० ए० लाहौर—

राजा विजयसिंहजी कुनाड़ी के त्याग पत्र देने पर हुये रिक्त स्थान की पूर्ति वैदिक वाङ्मय के अद्वितीय विद्वान् तथा आर्यसमाज के प्रतिभाशाली लेखक पं० भगवद्दत्तजी को सदस्य बनाकर की गई। वे ४ मार्च १९२३ को सभासद बने। पण्डितजी का जन्म २७ अक्टूबर १८९३ में अमृतसर में हुआ। इण्टर तक की शिक्षा विज्ञान लेकर ग्रहण की, पश्चात् १९१५ में संस्कृत विषय लेकर बी० ए० परीक्षा उत्तीर्ण की। प्रारम्भ में वे डी० ए० वी० कालेज लाहौर में अध्यापन का कार्य करने लगे। पुनः महात्मा हंसराजजी के अनुरोध से उसी कालेज के अनुसंधान विभाग के अध्यक्ष रूप में कार्य करने लगे। १९ वर्ष तक निरन्तर इस पद पर कार्य करते हुये कालेज के शोध विभाग को समुन्नत किया। सहस्रों पाण्डु लिपियों का संग्रह किया तथा वैदिक वाङ्मय का इतिहास (३ भाग) जैसा उच्चकोटि का खोजपूर्ण ग्रन्थ लिखा। देश विभाजन के पश्चात् दिल्ली आपका कार्यक्षेत्र बना। विभिन्न प्राचीन आर्ष ग्रन्थों की खोज, सम्पादन तथा व्याख्या लिखकर पण्डितजी ने आर्यसमाज में वैदिक अनुसधान को सुदृढ़ आधार प्रदान किया। २२ नवम्बर १९६८ को आपका निधन हुआ। पं० भगवद्दत्तजी का सभा को साहित्यिक एवं गवेषणात्मक कार्यों में सदा सहयोग मिला। स्वामीजी के ग्रन्थों के संशोधन एवं प्रकाशन के सम्बन्ध में वे अपने मूल्यवान विचार सभा को देते रहते थे। जब विद्वत् समिति का गठन किया गया तो पण्डितजी उसके सभासद बनाये गये। १९६६ के अधिवेशन में उपस्थित होकर उन्होंने सभा के समक्ष अनेक उपयोगी सुझाव रखे तथा आर्य प्रतिनिधि सभा राजस्थान की हीरक जयन्ती के उपलक्ष्य में आयोजित वेद सम्मेलन में विद्वता पूर्ण भाषण दिया।

५७—स्वामी विश्वेश्वरानन्दजी—

१९२३ ई० में पं० रामभजदत्त चौधरी की मृत्यु के कारण जो स्थान रिक्त हुआ उसकी पूर्ति २७ दिसम्बर १९२३ के अधिवेशन में स्वामी विश्वेश्वरानन्दजी की नियुक्ति के द्वारा हुई। स्वामी नित्यानन्द और स्वामी विश्वेश्वरानन्द आर्यसमाज में संन्यासी युगल के रूप में जाने जाते हैं। स्वामी नित्यानन्दजी की स्वामी विश्वेश्वरानन्दजी से प्रथम भेंट गाजियावाद स्टेशन पर हुई जहाँ ये दोनों स्वामी दिल्ली जाने वाली गाड़ी के एक ही डिब्बे में बैठे थे। परस्पर के परिचय तथा उसके पश्चात् दोनों के समान विचारों ने उन्हें एक साथ कार्य करने के लिये प्रेरित किया। तब से दोनों स्वामियों ने निरन्तर एक साथ रहकर ही भ्रमण, धर्म-प्रचार, शास्त्रार्थ आदि का कार्य किया। दोनों स्वामियों ने चारों वेदों की अनुक्रमणिकायें तैयार कराने की महत्त्वपूर्ण योजना बनाई तथा बड़ौदा तथा अन्य देशी राज्यों के सहयोग से इस महत्त्वपूर्ण कार्य को पूरा किया। २३ नवम्बर १९२५ को स्वामी विश्वेश्वरानन्दजी का निधन हुआ। उनकी स्मृति में विश्वेश्वरानन्द वैदिक शोध संस्थान की स्थापना हुई जिसका मुख्य कार्यालय होश्यारपुर में है। यद्यपि स्वामी विश्वेश्वरानन्दजी का सदस्यता काल स्वल्प ही रहा परन्तु इस अल्प अवधि में होने वाले सभा के तीनों अधिवेशनों में उन्होंने भाग लिया।

५८—मास्टर कन्हैयालालजी बी० ए० एल० टी०—

१९२५ के २३ नवम्बर को स्वामी विश्वेश्वरानन्दजी का निधन हो गया। फलतः उनके रिक्त स्थान पर दि० २४ दिसम्बर १९२५ के अधिवेशन में मास्टर कन्हैयालालजी को सभासद बनाया गया। आप सुप्रसिद्ध शिक्षा शास्त्री, कर्मकाण्डी तथा निष्ठावान् कार्यकर्त्ता थे। आपका जन्म आश्विन शुक्ला ५ सं० १९२८ को हुआ। मास्टर कन्हैयालालजी प्रारम्भ में डी० ए० वी० स्कूल अजमेर के मुख्याध्यापक पद पर रहे। कालान्तर में टीचर्स ट्रेनिंग कालेज, मीरशाहअली अजमेर के प्राचार्य पद पर रहे। परोपकारिणी सभा के आप सक्रिय सदस्य थे। उसकी विभिन्न प्रवृत्तियों का संचालन करने में आपका योगदान महत्त्वपूर्ण रहा। ऋषि निर्वाण अर्द्ध शताब्दी के उपलक्ष्य में जो चतुर्वेद पारायण महायज्ञ आयोजित किया गया उसकी व्यवस्था एवं संचालन का भार आप पर ही रहा। आपने दयानन्द विद्यालय की स्थापना की तथा विभिन्न शैक्षणिक एवं सामाजिक कार्यों में अपना सहयोग दिया। आप आर्य प्रतिनिधि सभा राजस्थान के प्रधान पद पर भी रहे थे।

५९- श्री घनश्यामदास बिड़ला—

सुप्रसिद्ध उद्योगपति श्री घनश्यामदास बिड़ला स्वामी श्रद्धानन्द की निर्मम हत्या के कारण हुये रिक्त स्थान पर दि० १४ फरवरी १९२७ के अधिवेशन में सभासद बनाये गये। अपने व्यावसायिक कार्यों में व्यस्त रहने के कारण श्री बिड़लाजी सभा के किसी भी अधिवेशन में उपस्थित नहीं हो सके, फलतः उनके स्थान पर १९३० में डा० मानकरण शारदा को सदस्य चुन लिया गया।

६०—महात्मा नारायण स्वामी—

लाला लाजपतराय के निधन के कारण हुये रिक्त स्थान पर आर्य जगत् के प्रख्यात संन्यासी, नेता तथा विद्वान् महात्मा नारायण स्वामीजी को दिनांक ३१ मार्च १९२९ के अधिवेशन में सभासद निर्वाचित किया। नारायण स्वामीजी का जन्म वसन्त पञ्चमी सं० १९२६ वि० को अलीगढ़ जिले के एक ग्राम में हुआ। आप प्रारम्भ से ही आर्यसमाज के सम्पर्क में आये और आर्यप्रतिनिधि सभा संयुक्त प्रान्त के उपमन्त्री, मन्त्री आदि पदों पर कार्य किया। गुरुकुल वृन्दावन के आचार्य तथा मुख्याधिष्ठाता पद पर भी रहे। संन्यास की दीक्षा लेकर मुन्शी नारायण प्रसाद महात्मा नारायण स्वामी बने। आपने १९२५ ई० में महर्षि दयानन्द जन्म शताब्दी के कार्यक्रमों का सुयोग्य संचालन स्वामी श्रद्धानन्दजी की विशेष प्रेरणा और आग्रह से किया। सार्वदेशिक सभा के वर्षों मन्त्री तथा प्रधान रहे। परोपकारिणी सभा के द्वारा आयोजित महर्षि निर्वाण अर्द्ध शताब्दी के विस्तृत कार्यक्रम का संचालन आपने १९३३ में निर्वाण अर्द्ध शताब्दी समिति के कार्यकर्ता प्रधान के रूप में किया। १९३९ ई० में निजाम हैदराबाद की धार्मिक अत्याचारपूर्ण कार्यवाहियों के विरोध में आर्यसमाज को सत्याग्रह का आयोजन करना पड़ा तो इस धर्मयुद्ध का निर्भीकतापूर्वक संचालन महात्माजी ने प्रथम सर्वाधिकारी रूप में किया तथा कारावास में रहे। महात्माजी उच्चकोटि के साहित्यकार तथा व्याख्याता थे। परोपकारिणी सभा की प्रवृत्तियों में आपका पूर्ण सहयोग रहा। १५ अक्टूबर १९४७ ई० को बरेली में आपका निधन हुआ।

६१—प्रो० सुधाकर एम० ए०—

उत्कृष्ट लेखक तथा साहित्यकार प्रो० सुधाकर एम० ए० का जन्म १८८९ ई० में पश्चिमी पंजाब की खुशाब तहसील के एक ग्राम राजड़ में हुआ। पं० केशवदेव शास्त्री के प्रेम पूर्ण आग्रह से ये काशी चले आये और अष्टाध्यायी

का अध्ययन किया। कालान्तर में आपने दर्शन विषय में एम० ए० की परीक्षा उत्तीर्ण की तथा रावल पिण्डी, देहरादून तथा गुरुकुल कांगड़ी में अध्यापन कार्य किया। आपकी 'मनोविज्ञान' शीर्षक पुस्तक पर हिन्दी साहित्य सम्मेलन ने १२०० रुपये का मंगलाप्रसाद पारितोषिक प्रदान किया। १९२६ ई० में आपको शाहपुराधीश ने राजकुमारों के अध्यापन हेतु नियुक्त किया। फलतः आप लगभग ६–७ वर्ष शाहपुरा रहकर राजकुमारों को शिक्षा प्रदान करते रहे। आर्य प्रतिनिधि सभा राजस्थान तथा सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के मन्त्री एवं प्रधान पदों पर आपने कार्य किया। १९ जून १९४८ को आपका निधन हुआ। परोपकारिणी सभा में आपका प्रवेश दिनांक २८ दिसम्बर १९३० को हुआ, जब कि लाला ईश्वरदास के स्थान पर आपको सभासद बनाया गया। प्रो० सुधाकर ने ऋषि दयानन्द निर्वाण अर्द्ध शताब्दी के आयोजन में पूर्ण सहयोग दिया।

६२—राज्य रत्न मास्टर आत्मारामजी अमृतसरी—

श्री रणछोड़दास भवान की अनुपस्थिति के कारण उनके स्थान पर मास्टर आत्मारामजी को २८ दिसम्बर १९३० के अधिवेशन में सभा का सदस्य बनाया गया। मास्टरजी का जन्म आषाढ़ कृष्णा प्रतिपदा १९२६ वि० को अमृतसर में हुआ। आप अपने विद्यार्थी काल में पं० गुरुदत्त विद्यार्थी के सम्पर्क में आये और आर्यसमाज के रंग में रंग गये। प्रारम्भ में आप डी० ए० वी० हाई स्कूल लाहौर के सहायक अध्यापक पद पर रहे। महात्मा मुन्शीरामजी की प्रेरणा से आपने पं० लेखराम द्वारा संगृहीत और लिखित ऋषि दयानन्द की जीवनी को व्यवस्थित रूप प्रदान कर उसे १८९७ में ग्रन्थाकार प्रकाशित किया। स्वामी नित्यानन्द जी की प्रेरणा से बड़ौदा के सुधारप्रिय नरेश सर सयाजी राव गायकवाड़ ने आपको अपने राज्य में बुला कर दलित वर्ग के लिये शिक्षण संस्थाओं के निरीक्षक पद पर नियुक्त किया। इस कार्य में तत्पर होकर पं० आत्मारामजी ने बड़ौदा राज्य में दलित वर्ग की उन्नति और उनके शिक्षण के के लिये अभूतपूर्व कार्य किया, जिससे प्रसन्न होकर गायकवाड़ नरेश ने आपको राज्य रत्न की उपाधि प्रदान की। आप एक उच्चकोटि के लेखक तथा शास्त्रार्थ कर्ता विद्वान् थे। संस्कार चन्द्रिका आपके द्वारा रचित एक प्रसिद्ध पुस्तक है जो पं० भीमसेन शास्त्री आगरा के सहयोग से लिखी गई। रा० सा० रामविलास शारदा रचित आर्य धर्मेन्द्र जीवन (महर्षि दयानन्द की हिन्दी जीवनी) की विद्वतापूर्ण भूमिका भी आपने लिखी। आपका निधन २५ जुलाई

१९३८ को हुआ। आपके निधन के कारण आपके सुयोग्य पुत्र पं० आनन्द-प्रियजी सभा के सदस्य बनाये गये।

६३—प्रो० घीसूलालजी एडवोकेट—

राजस्थान के प्रसिद्ध आर्यसमाजी कार्यकर्ता तथा नेता प्रो० घीसूलालजी ख्यातनामा विधिवेत्ता तथा न्यायाधीश थे। आप आर्य प्रतिनिधि सभा के विभिन्न पदों पर कार्य करते रहे। आप अत्यन्त मेधावी तथा अद्भुत प्रतिभा सम्पन्न पुरुष थे। आपका सभा में प्रवेश ठाकुर नरेन्द्रसिंहजी के तीन अधिवेशनों में निरन्तर अनुपस्थित रहने के कारण हुये रिक्त स्थान पर दि० २८ दिसम्बर १९३० के अधिवेशन के हुआ। प्रो० घीसूलालजी ने सभा के विभिन्न कार्यों में अपना पूर्ण योगदान दिया। वे सभा के उपप्रधान पद पर भी रहे। १९३३ में आयोजित ऋषि निर्वाण अर्द्ध शताब्दी के समारोह को सफल बनाने में भी आपका पूर्ण सहयोग रहा। आपका निधन १९५५ में हुआ।

६४—डा० मानकरणजी शारदा एम० बी० बी० एस०—

डा० मानकरण शारदा को सभा के २८ दिसम्बर १९३० के अधिवेशन में सभासद बनाया गया। यह स्थान सेठ घनश्यामदास बिड़ला के ३ अधिवेशनों में निरन्तर अनुपस्थित रहने के कारण रिक्त हुआ था। डा० मानकरणजी शारदा आर्यसमाज के मनीषी विद्वान् तथा नेता रा० सा० रामविलासजी शारदा के तृतीय पुत्र हैं। आपका जन्म मार्गशीर्ष कृ० ६ सं० १९४७ वि० (२२ नवम्बर १८९१ ई०) को हुआ। आपने एम० बी० बी० एस० की परीक्षा उत्तीर्ण कर चिकित्सा के व्यवसाय को अपनाया तथा आर्यसामाजिक गति-विधियों में प्रारम्भ से ही भाग लेते रहे। आर्य प्रतिनिधि सभा राजस्थान के मुख पत्र आर्यमार्तण्ड के वर्षों तक आप अधिष्ठाता तथा सम्पादक रहे। आप एक उच्चकोटि के लेखक तथा विचारक हैं। सभा के वयोवृद्ध मन्त्री दी० ब० हरविलास सारड़ा के त्यागपत्र देने पर आप २८ फरवरी १९५३ में मन्त्री चुने गये। १९६४ से अब तक आप सभा के उप प्रधान पद पर कार्य कर रहे हैं। डा० मानकरणजी शारदा के मंत्रित्व काल में सभा ने अभूतपूर्व उन्नति की। वैदिक यन्त्रालय का बहुमुखी विकास हुआ तथा सभा ने ऋषि निर्वाण दिवस के उपलक्ष्य में प्रति वर्ष ऋषि मेले का आयोजन किया जाने लगा। सभा के मुख पत्र परोपकारी का प्रकाशन भी लगभग अर्द्ध शताब्दी पश्चात् १९५९ में पुनः मासिक रूप में होने लगा। डा० मानकरणजी आत्म ख्याति और आत्म विज्ञापन से सर्वथा दूर रहकर आर्यसमाज की मौन भाव से सेवा करने में

विश्वास रखते हैं। अत्यन्त वृद्ध एवं शारीरिक रूप से अस्वस्थ रहने पर भी आप अपने जीवन व्यापी अनुभवों के द्वारा सभा के वर्तमान अधिकारियों का मार्ग दर्शन करते रहते हैं। सभा के विगत ६० वर्षीय इतिहास की अनेक स्मरणीय बातें आपकी सहायता से ही निबद्ध की गई हैं।

६५—रायसाहब मदनमोहन सेठ एम० ए० एल० एल० बी०—

सेठजी का जन्म श्रावण शुक्ला १४ सं० १९४१ में बुलन्द शहर में हुआ। एम० ए० और एल० एल० बी० की परीक्षायें उत्तीर्ण कर आपने बुलन्दशहर में वकालत प्रारम्भ की। जब अंग्रेजी राजत्वकाल में आर्यसमाज को विद्रोहात्मक संस्था माना जाने लगा, तथा उसके कार्यक्रम में बाधायें उपस्थित की जाने लगीं तो सेठजी ने Arya Samaj - a Political Body ? शीर्षक एक खुला पत्र तत्कालीन गवंनर संयुक्त प्रदेश लार्ड मौरले की सेवा में भेजा। कालान्तर में आप मुन्सिफ तथा न्यायाधीश जैसे पदों पर रहे। आर्य प्रतिनिधि सभा संयुक्त प्रदेश तथा सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान पद पर भी आप रहे। आप कुशल लेखक तथा प्रवुद्ध विचारक विद्वान् थे। आपका देहान्त १० मार्च १९५६ को हुआ। परोपकारिणी सभा में आपका प्रवेश दि० २८ दिसम्बर १९३० को श्री पुरुषोत्तमनारायणजी फर्रुखाबाद के लगातार तीन अधिवेशनों में अनुपस्थित रहने के कारण हुये रिक्त स्थान पर हुआ।

६६—देशभक्त कुंवर चांदकरणजी शारदा—

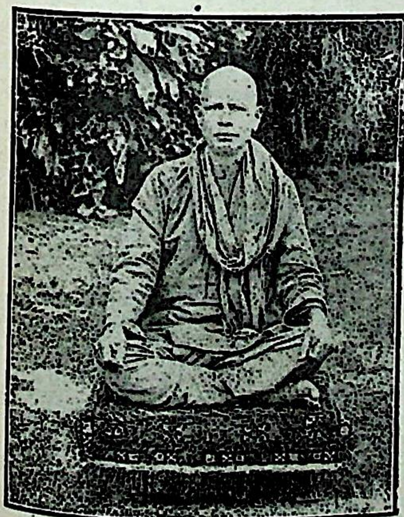
शारदाजी का सभा में प्रवेश २१ मार्च १९३० को रा० सा० रामविलासजी के निधन के कारण हुये रिक्त स्थान पर हुआ—अजमेर के प्रसिद्ध आर्यसमाजी कार्यकर्ता स्व० रावसाहब रामविलासजी शारदा के द्वितीय पुत्र चांदकरण शारदा का जन्म आषाढ़ कृष्णा २ सं० १९४५ वि० हुआ। आगरा से बी० ए० और एल० एल० बी० की परीक्षायें उत्तीर्ण करने के अनन्तर उन्होंने अजमेर में वकालत आरम्भ की। परन्तु अपने व्यवसाय की अपेक्षा आपने सार्वजनिक जीवन को ही अधिक महत्त्व दिया। आर्य प्रतिनिधि सभा राजस्थान के वर्षों तक मन्त्री एवं प्रधान के पदों पर रहे। राजस्थान में राजनैतिक चेतना का प्रारम्भ भी शारदाजी ने ही किया। शुद्धि के कार्य में स्वामी श्रद्धानन्दजी को पूर्ण योग दिया तथा हैदराबाद आर्य सत्याग्रह एवं सिन्ध में सत्याग्रह के अग्रगण्य नेता रहे। शारदाजी सशक्त लेखक, ओजस्वी वक्ता तथा निर्भीक जन सेवी थे। महर्षि दयानन्द स्मारक ट्रस्ट टंकारा का गठन करने में भी आपने महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। १४ नवम्बर १९५७ ई० को शारदाजी का निधन हो गया।



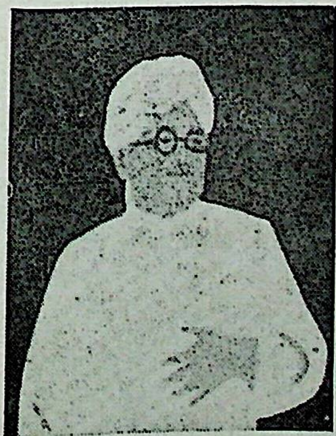
मास्टर कन्हैयालाल जी



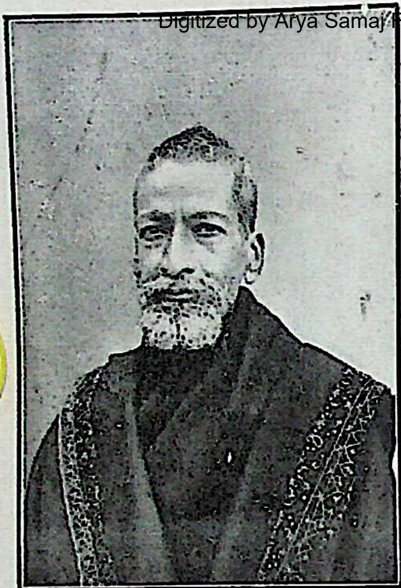
श्री घनश्यामदासजी बिड़ला



म. नारायण स्वामी



प्रो. सुधाकर एम. ए.



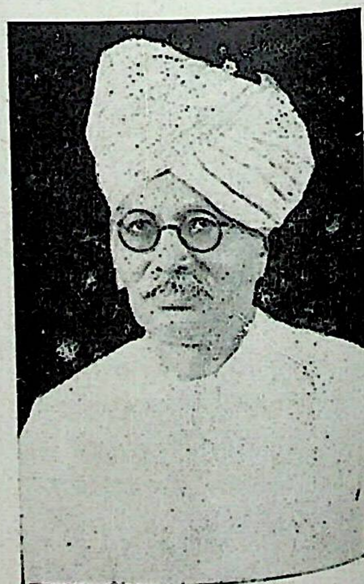
मास्टर आत्मारामजी



श्री घीसूलाल जी एडवोकेट



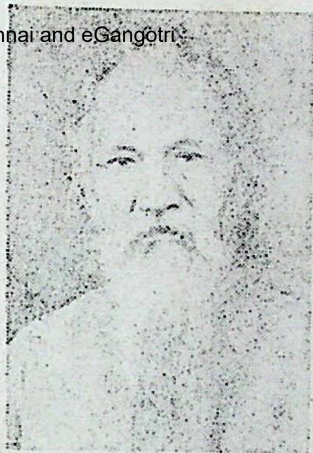
श्री मदनमोहन सेठ



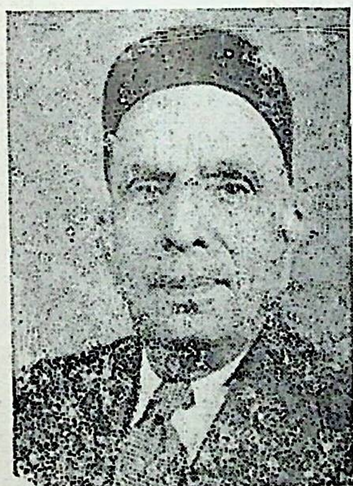
श्री चांदकरण जी शारदा



चुन्नीलाल जी गुप्त



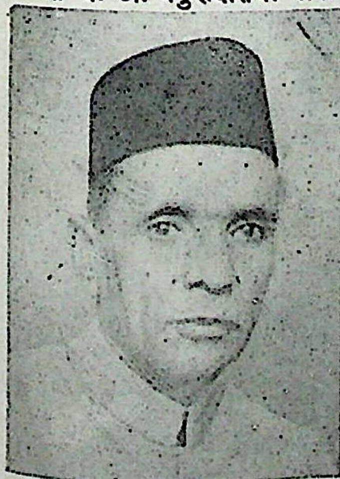
पं० ब्रह्मदत्त जिज्ञासु



रा. ब. डॉ. मथुरादासजी मोगा



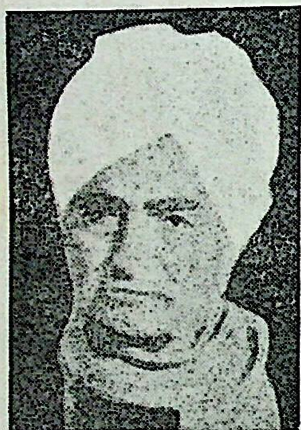
श्री झालावाड़ नरेश, सर राजेन्द्रसिंहजी



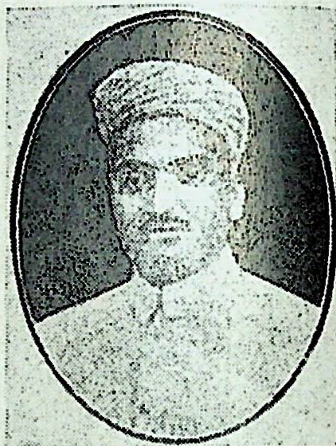
श्री धर्मचन्द जी सूद



महाशय कृष्ण जी



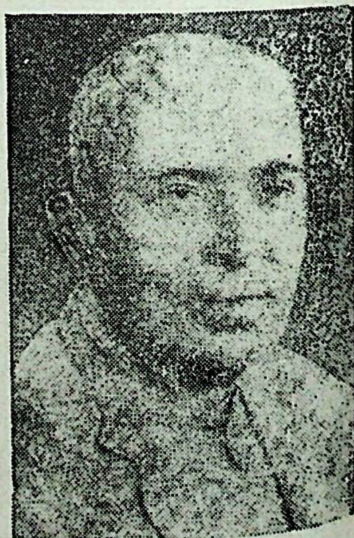
श्री नारायणदत्तजी ठेकेदार



राजा नारायणलाल पीती



स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी



सेठ नानजी भाई कालीदास मेहता

परोपकारिणी सभा की विभिन्न प्रवृत्तियों में शारदाजी का सर्वांगीण योगदान रहा। ऋषि निर्वाण अर्द्धशताब्दी के वृहद् आयोजन में आपने सर्वात्मना भाग लिया। जीवन के अन्तिम दिनों में आपने पंजाब के हिन्दी रक्षा आन्दोलन में सक्रिय भाग लेने के लिये उत्सुकता व्यक्त की परन्तु अस्वस्थता के कारण इस आन्दोलन को आपका मौन आशीर्वाद ही प्राप्त हुआ।

६७—राव साहब श्री विजयसिंह इस्तमरारदार, मसूदा—

शाहपुराधीश श्री सर नाहरसिंहजी के निधन के कारण हुये रिक्त स्थान पर मसूदा के ठाकुर रा० सा० विजयसिंह दि० २० मार्च १९३३ के अधिवेशन में सभा के सभासद बनाये गये। रा० सा० विजयसिंह स्वामी दयानन्द के परम-भक्त मसूदा के राव साहब श्री बहादुरसिंहजी के पुत्र थे। आपकी सभा के किसी अधिवेशन में उपस्थिति अंकित नहीं है।

६८—कैप्टिन राजा श्री दुर्गानारायणसिंह ताल्लुकेदार, तिरवा—

बैरिस्टर रोशनलाल के स्वर्गवास के कारण हुये रिक्त स्थान की पूर्ति श्री दुर्गानारायणसिंह के चुनाव द्वारा दि० २० मार्च १९३३ को सम्पन्न हुये सभा के अधिवेशन में हुई। आप आर्यसमाज के दृढ़ अनुयायी आर्य पुरुष थे।

६९—श्री चुन्नीलालजी गुप्त अजमेर—

पं० घासीरामजी के निधन के कारण हुये रिक्त स्थान की पूर्ति अजमेर के कार्यकर्ता श्री चुन्नीलालजी गुप्त को दि० १ सितम्बर १९३५ के अधिवेशन में चुन कर की गई। श्री गुप्त जी सभा के मौन कार्यकर्ता थे। उन्होंने वैदिक यन्त्रालय की प्रबन्ध कर्तृ सभा के सदस्य के रूप में वर्षों तक यन्त्रालय को उन्नत बनाने में अपना योगदान दिया। यन्त्रालय को बी० बी० एन्ड सी० आई० रेलवे से काम दिलाना तथा उसमें नवीन उपकरणों को स्थापित कर उसकी व्यावसायिक उन्नति करना श्री गुप्त जी का मुख्य कार्य था। रा० सा० रामविलासजी शारदा निर्दिष्ट नीतियों को गुप्तजी क्रियान्वित करते रहे।

७०—पं० ब्रह्मदत्त जिज्ञासु—

बैरिस्टर गौरीशंकरजी के निधन के कारण हुये रिक्त स्थान की पूर्ति पं० ब्रह्मदत्तजी जिज्ञासु को १४ नवम्बर १९३६ के अधिवेशन में सदस्य चुनकर की गई। पद वाक्य प्रमाणज्ञ, अपूर्व वैयाकरण तथा महाविद्वान् पं० ब्रह्मदत्त जिज्ञासु का जन्म १४ अक्टूबर १८९३ को जालंधर जिले के मल्लूपोता नामक ग्राम में हुआ। ये सारस्वत ब्राह्मण थे। जिज्ञासुजी ने संस्कृत का अध्ययन

स्वामी पूर्णानन्दजी से किया जो अष्टाध्यायी व्याकरण के अपूर्व विद्वान् थे। कालान्तर में आर्ष पाठ विधि से व्याकरण तथा अन्य शास्त्रों के अध्ययन अध्यापन के लिये जिज्ञासुजी ने अमृतसर, लाहौर तथा काशी में विरजानन्दाश्रम स्थापित कर कार्य किया। देश विभाजन के पश्चात् वे पुनः काशी आ गये तथा पाणिनि महाविद्यालय की स्थापना की। जिज्ञासुजी ने महर्षि दयानन्द रचित यजुर्वेद भाष्य के प्रथम १० अध्यायों पर विवरण लिखा जो श्री रामलाल कपूर ट्रस्ट ने २००३ वि० में प्रकाशित किया। भारत के राष्ट्रपतिजी ने जिज्ञासुजी को उनकी संस्कृत के प्रति की गई सेवाओं के कारण १९६३ ई० में राष्ट्रीय स्तर पर सम्मानित किया। २१ दिसम्वर १९६४ को जिज्ञासुजी का वाराणसी में निधन हुआ। परोपकारिणी सभा के साहित्यिक कार्यों में जिज्ञासुजी का पूर्ण सहयोग रहा। आपने ऋषि के हस्तलेखों का सूक्ष्म अवलोकन एवं निरीक्षण कर उन्हें व्यवस्थित किया। आपने अपने सुयोग्य शिष्य वर्ग—पं० युधिष्ठिर मीमांसक, पं० धर्मदेव निरुक्ताचार्य तथा पं० भद्रसेन को सभा की सेवा में रख कर महर्षि के ग्रन्थों के संशोधन एवं प्रकाशन में योग देने के लिये निर्देश दिया। समय समय पर विभिन्न शास्त्रीय उलझनें एवं समस्यायें सभा के समक्ष जब उपस्थित होती थीं तो जिज्ञासुजी अपनी अपूर्व विद्वता द्वारा उसका समाधान करने में तत्पर रहते थे। वे सभा द्वारा गठित विद्वत् समिति के सभासद भी रहे।

७१—पं० आनन्दप्रियजी बड़ौदा—

पं० आनन्दप्रियजी का सभा में प्रवेश दि० ३१ जुलाई १९३८ को पं० आत्मारामजी के निधन के कारण हुए रिक्त स्थान पर हुआ। आर्यसमाज के सुप्रसिद्ध विद्वान् तथा कार्यकर्ता राज्यरत्न पं० आत्मारामजी अमृतसरी के पुत्र पं० आनन्दप्रियजी का जन्म २८ मई १८९९ ई० में हुआ। उनकी प्रारम्भिक शिक्षा गुरुकुल गुजरांवाला में हुई। तत्पश्चात् आगरा और प्रयाग से उन्होंने क्रमशः बी० ए० और एल० एल० बी० की परीक्षायें उत्तीर्ण कीं। प्रारम्भ में वे बड़ौदा राज्य की सेवा में रहे, किन्तु शीघ्र ही सार्वजनिक क्षेत्र में प्रविष्ट हो गये। आर्यकुमार महासभा बड़ौदा के द्वारा संचालित आर्य कन्या महाविद्यालय बड़ौदा, गुरुकुल सोनगढ़ आदि के सुप्रबन्ध का बोझ उन्हीं के सुदृढ़ कंधों पर है। कन्या महाविद्यालय के शिक्षण क्रम में विविध धार्मिक, सांस्कृतिक तथा अन्य प्रवृत्तियों का समावेश कर आपने उसे नारी के सार्वत्रिक उत्कर्ष का सफल माध्यम बना दिया है। गुजरात आर्य प्रतिनिधि सभा के वे

प्रधान हैं तथा आर्यसमाज के प्रचार कार्यक्रम को युगानुसार परिवर्तित करने के प्रबल समर्थक हैं। सभा को पं० आनन्दप्रियजी का सक्रिय सहयोग प्राप्त रहा है।

७२—राय बहादुर डा० मथुरादास पहवा, मोगा—

महात्मा हंसराजजी के निधन के कारण हुये रिक्त स्थान पर डा० मथुरादासजी दि० १२ मार्च १९३९ को सदस्य चुने गये। सुप्रसिद्ध नेत्र चिकित्सक डा० मथुरादास पहवा आर्यसमाज के दृढ़ अनुयायी तथा महर्षि दयानन्द के परम भक्त थे। आपने अपने जीवन में लोकोपकार के अनेक उल्लेखनीय कार्य किये तथा आंखों के निःशुल्क आपरेशन किये। आपकी सार्वजनिक सेवाओं से प्रभावित होकर स्व० राष्ट्रपति डा० राजेन्द्रप्रसाद के कार्यकाल में आपको 'पद्म श्री' की उपाधि से विभूषित किया गया था। डा० मथुरादासजी का परोपकारिणी सभा के विभिन्न कार्यों में पूर्ण सहयोग रहा। आपका निधन १६–३–१९७२ को हुआ।

७३—राजा ज्वालाप्रसाद प्रोवाइस चान्सलर, बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय—

राव विजयसिंहजी मसूदा के निधन के कारण हुये रिक्त स्थान पर राजा ज्वालाप्रसाद दि० १२ मार्च १९३९ के अधिवेशन में सभासद बनाये गये। आपने थामसन इन्जीनियरिंग कालेज रुड़की से इन्जीनियरिंग परीक्षा उत्तीर्ण की। १९०७ में आप पटियाला राज्य में जन कार्य विभाग में इन्जीनियर पद पर नियुक्त हुये। पटियाला आर्यसमाज के आप प्रधान चुने गये। आर्यसमाज की प्रगतिशील एवं राष्ट्र हित की प्रवृत्तियों से रुष्ट होकर अंग्रेजी सरकार के इशारे पर ११ अक्टूबर १९०९ में आर्यसमाज पटियाला के प्रमुख पुरुषों पर राजद्रोह का अभियोग चलाया गया। आर्यसमाज के प्रधान होने के नाते श्री ज्वालाप्रसादजी भी गिरफ्तार कर लिये गये। महात्मा मुन्शीराम ने आर्य समाजियों को निरपराध सिद्ध करने के लिये वकील का चोगा एक बार पुनः पहना। अनन्तः सरकार द्वारा लगाये अभियोग सिद्ध नहीं हो सके और आर्यसमाज के नेताओं को मुक्त कर दिया गया। कालान्तर में श्री ज्वालाप्रसादजी ने काशी को अपना कार्यक्षेत्र बनाया। यहाँ डी० ए० वी० कालेज की स्थापना की। हिन्दू विश्वविद्यालय में आप पहले प्राध्यापक, पुनः प्रो० वाइस चान्सलर पद पर रहे। आपका निधन १३ सितम्बर १९४४ को हुआ।

७४—सर टेकचन्द बख्शी—

आचार्य रामदेवजी के निधन के कारण हुये रिक्त स्थान पर बख्शी

टेकचन्द दि० १४ अप्रेल १९४० को सभा के सभासद निर्वाचित हुये। सुप्रसिद्ध विधिवेत्ता बख्शी टेकचन्द पंजाब हाई कोर्ट के न्यायाधीश पद पर कार्य कर चुके थे। आर्यसमाज के विविध लोकोपकारी कार्यों के संचालन में बख्शीजी का महत्त्वपूर्ण योगदान रहा। सभा के किसी भी अधिवेशन में बख्शीजी उपस्थित नहीं हो सके।

७५—रा० ब० दीवान बद्रीदास—

बैरिस्टर रामगोपाल के त्यागपत्र देने के कारण हुये रिक्त स्थान पर दीवान बद्रीदास १४ अप्रैल १९४० को सदस्य चुने गये। पंजाब की पुरानी पीढ़ी के आर्यसमाजी नेताओं में बद्रीदास का उल्लेखनीय स्थान था। उन्होंने वर्षों तक आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का नेतृत्व किया। यद्यपि पंजाब में आर्यसमाज को सशक्त नेतृत्व प्रदान करने में दीवान बद्रीदास का बहुत बड़ा योगदान रहा परन्तु परोपकारिणी सभा को उनके अनुभव एवं योग्यता का विशेष लाभ प्राप्त नहीं हुआ। सभा के किसी भी अधिवेशन में वे सम्मिलित नहीं हो सके।

७६—महाराज राणा श्री राजेन्द्रसिंहजी झालावाड़—

कोल्हापुर नरेश सर राजाराम छत्रपति के निधन के कारण हुये रिक्त स्थान पर महाराणा राजेन्द्रसिंहजी दि० ६ अप्रैल १९४१ के अधिवेशन में सभासद चुने गये। अन्य नरेशों की भांति श्री राजेन्द्रसिंहजी भी सभा के अधिवेशनों में कभी सम्मिलित नहीं हुये।

७७—श्री धर्मचन्द्र गुप्त—

श्री गुलराजगोपाल गुप्त के निधन के कारण हुये रिक्त स्थान पर श्री धर्मचन्द गुप्त दि० २० अक्टूबर १९४१ को सभासद निर्वाचित हुये। श्री गुप्त अजमेर में आर्यसमाज के सुप्रसिद्ध कार्यकर्त्ता और लोकप्रिय सेवक मुन्शी पद्मचन्दजी के सुपुत्र थे। आप सभा के कोषाध्यक्ष पद पर १९५२ में निर्वाचित हुये और इस दायित्वपूर्ण पद का आपने लगभग १२ वर्षों तक निर्वाह किया। श्री गुप्त का निधन १८–१०–६७ में हुआ।

७८—राजाधिराज सुदर्शनदेवजी शाहपुरा—

रा० ब० मूलराज को तीन अधिवेशनों में निरन्तर अनुपस्थित रहने के कारण हुये रिक्त स्थान पर युवराज सुदर्शनदेवजी दि० ९ नवम्बर १९४२ के अधिवेशन में सभासद बनाये गये। शाहपुरा का राजघराना स्वामी दयानन्द के जीवन काल से ही वैदिक धर्म तथा आर्यसमाज के प्रति निष्ठावान रहा है।

इसी राज परिवार में श्री सुदर्शनदेवजी का जन्म हुआ। आपके पिता राजाधिराज श्री उम्मेदसिंहजी ने अपने जीवनकाल में ही अपने शासनाधिकार युवराज सुदर्शनदेवजी को प्रदान कर पुरातन आर्य राजाओं के आदर्श को स्थापित किया। राजाधिराज ने भी प्रजातन्त्र युग के महत्त्व को अनुभव करते हुये देश के स्वतन्त्र होने से पूर्व ही अपने राज्य में उत्तरदायी शासन की स्थापना की तथा प्रजा के प्रतिनिधियों को शासनाधिकार प्रदान कर दिये। अपने स्वर्गीय पिता तथा पितामह की ही भांति श्री सुदर्शनदेवजी भी आर्यसमाज एवं वैदिक धर्म के निष्ठावान् भक्त हैं। १९५९ में आपने ऋषि दयानन्द दीक्षा शताब्दी समारोह की मथुरा में अध्यक्षता की तथा अपने राजप्रासाद में प्रज्वलित यज्ञाग्नि को मथुरा के दीक्षा शताब्दी यज्ञ में स्थापित किया। श्री सुदर्शनदेवजी सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के आजीवन सदस्य हैं। आपने कविरत्न प्रकाशचन्द्रजी के अभिनन्दन समारोह की अध्यक्षता की तथा आर्यसमाज के इस वयोवृद्ध कवि को ५०० रु० की आर्थिक सहायता प्रदान की। १९७२ में आर्यसमाज दीवानहाल दिल्ली में राजाधिराज तथा महारानी श्रीमती हर्षवन्त कुमारीजी का सार्वदेशिक सभा तथा विभिन्न प्रान्तीय सभाओं एवं दिल्ली की प्रमुख आर्यसंस्थाओं की ओर से भव्य अभिनन्दन किया गया। इस समारोह की अध्यक्षता सार्वदेशिक सभा के भूतपूर्व प्रधान डा० दुखनराम ने की थी। राजाधिराज का सभा को सर्वदा सहयोग प्राप्त होता रहा है।

७६—महाशय कृष्ण—

सर सयाजी राव गायकवाड़ के निधन के कारण सभा के सभापति पद पर राजाधिराज श्री उम्मेदसिंहजी शाहपुराधीश का निर्वाचन ९ नवम्बर १९४२ को हुआ। फलतः एक स्थान रिक्त हुआ। इस पर महाशय कृष्ण दि० ९ नवम्बर १९४२ को परोपकारिणी सभा के सभासद निर्वाचित हुये। आर्य समाज के अद्वितीय नेता, लेखक, पत्रकार तथा प्रबुद्ध विचारक महाशय कृष्ण का जन्म वजीराबाद (पश्चिमी पाकिस्तान) में १८८१ ई० में हुआ। १९०२ में आपने बी० ए० की परीक्षा उत्तीर्ण की। इसी समय आप आर्यसमाज में प्रविष्ट हुये तथा महात्मा मुन्शीरामजी के सहयोगी बन कर गुरुकुल विभाग के प्रमुख कार्यकर्त्ता बन गये। १९०९ ई० में आपने उर्दू साप्ताहिक 'प्रकाश' का प्रकाशन प्रारम्भ किया। आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के मन्त्री तथा प्रधान पद पर वर्षों रहे। देश विभाजन के पश्चात् महाशयजी का कार्य क्षेत्र दिल्ली हो गया। यहाँ वीर अर्जुन दैनिक के माध्यम से महाशयजी राष्ट्रीय तथा आर्यसमाज विषयक समस्याओं पर अपनी लौह लेखनी द्वारा देश तथा आर्य

जगत् का मार्गदर्शन करते रहे। पंजाब के हिन्दी सत्याग्रह में आर्यसमाज को आपका अपूर्व पथ निर्देश प्राप्त हुआ। फाल्गुन अमावस्या २०१९ वि० (२४ फरवरी १९६३) को ८२ वर्ष की आयु में महाशयजी का स्वर्गवास हुआ। महाशयजी ने सभा को एक सक्रिय सदस्य तथा जागरूक नेता के रूप में नेतृत्व एवं मार्गदर्शन प्रदान किया। १९५३ में सभा के तत्कालीन प्रधान राजाधिराज उम्मेदसिंहजी के त्यागपत्र देने पर महाशयजी प्रधान निर्वाचित हुये तथा जीवन पर्यन्त इस पद पर रहे। महाशयजी स्वयं सभा के सभी अधिवेशनों में उपस्थित होते थे। जब १९५९ में ऋषि मेले का प्रथम बार आयोजन किया गया तो महाशयजी ने इस समारोह का उत्साहपूर्वक स्वागत किया और आगामी ऋषि मेलों में स्वयं सम्मिलित होकर व्याख्यानों द्वारा आर्य जनता को उद्बोधन देते रहे।

८०—लाला नारायणदत्त ठेकेदार, दिल्ली—

राजा ज्वालाप्रसाद के निधन के कारण हुये रिक्त स्थान पर दिल्ली के प्रसिद्ध आर्य नेता लाला नारायणदत्त ठेकेदार को सभा ने अपने दि० २५ सितम्बर १९४४ के अधिवेशन में सभासद चुना। लालाजी ने विभिन्न आर्यसामाजिक कार्यों का सफलतापूर्वक संचालन किया था। भारतीय शुद्धि सभा के कई वर्षों तक वे प्रमुख कार्यकर्ता रहे। सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के कोषाध्यक्ष पद पर भी उन्होंने कार्य किया।

८१—महाराज राणा श्री हरिश्चन्द्रजी झालावाड़—

महाराज राणा श्री राजेन्द्रसिंहजी के निधन के कारण हुये रिक्त स्थान पर राजराणा हरिश्चन्द्रजी को २ मार्च १९४६ को सभासद निर्वाचित किया। आप भी सभा के किसी अधिवेशन में सम्मिलित नहीं हुये।

८२—श्री विष्णुचन्द्रजी—

सभा के वर्तमान कोषाध्यक्ष श्री विष्णुचन्द्रजी का जन्म पौष कृष्णा तृतीया सं० १९६१ वि० तदनुसार ८ दिसम्बर १९०३ को अजमेर आर्यसमाज भवन के एक मकान में हुआ। पिता मास्टर कन्हैयालालजी बी० ए० एल० टी० उस समय डी० ए० वी० हाई स्कूल अजमेर के मुख्याध्यापक थे। श्री विष्णुचन्द्रजी की शिक्षा घर पर ही उत्तम रीति से हुई क्योंकि इनके पिता का यह संकल्प था कि वे परीक्षाओं में उत्तीर्ण होने वाली शिक्षा दिलाकर अपने बालकों को विदेशी सरकार की सेवा में जाने का अवसर नहीं देंगे। फलतः श्री विष्णुचन्द्र

जी ने किशोर अवस्था को पार करते ही व्यावसायिक क्षेत्र में प्रवेश किया। वर्तमान में वे के० जी० टैक्सटाइल्स के संचालक एवं स्वामी हैं।

मास्टर कन्हैयालालजी के निधन के कारण हुये रिक्त स्थान पर वे सभा के २ मार्च १९४६ के अधिवेशन में सभासद चुने गये। प्रारम्भ में वे वैदिक यन्त्रालय की प्रवन्ध कर्तृ समिति के मन्त्री पद पर रहे तथा यन्त्रालय के संचालन में अपना महत्त्वपूर्ण योगदान दिया। १९५२ में जब सभा के संशोधित नियमों के अनुसार कार्यकारिणी सभा का गठन हुआ तो वे २४-२-५२ को संयुक्त मन्त्री बने। २८ फरवरी १९५३ के अधिवेशन में आपका इस पद से त्यागपत्र खेद पूर्वक स्वीकार किया गया। तत्पश्चात् १९६४ में आप सभा के कोषाध्यक्ष पद पर चुने गये। तब से आप निरन्तर उसी पद पर चुने जाकर सभा की सेवा कर रहे हैं।

८३—प्रो० ठाकुर मदनसिंहजी—

श्री चुन्नीलालजी गुप्त के निधन के कारण हुये रिक्त स्थान की पूर्ति प्रो० मदनसिंहजी को सभा का सभासद निर्वाचित कर २ मार्च १९४६ को की गई। प्रोफेसर मदनसिंहजी मेयो कालिज अजमेर में वर्षों तक प्राध्यापक पद पर रहे। सभा को आपका सहयोग निरन्तर मिल रहा है। १९५५ तथा १९५८ में आप सभा के उपप्रधान पद पर निर्वाचित हुये। सभा की कार्यकारिणी समिति के भी आप वर्षों तक सदस्य रहे हैं।

८४—राजा नारायणलालजी पित्ती—

राजा दुर्गानारायणसिंह के निधन के कारण हुये रिक्त स्थान की पूर्ति राजा नायराणलाल पित्ती को दि० २ मार्च १९४६ के अधिवेशन में सभासद बनाकर की गई। आपकी सभा के किसी अधिवेशन में उपस्थिति अंकित नहीं है।

८५—स्वामी स्वतन्त्रानन्दजी—

महात्मा नारायण स्वामीजी के निधन के कारण हुये रिक्त स्थान पर स्वामी स्वतन्त्रानन्दजी को दि० ८ मार्च १९४८ के अधिवेशन में चुना गया। स्वर्गीय स्वामी स्वतन्त्रानन्दजी आर्यसमाज के तेजस्वी संन्यासी, नेता तथा विद्वान् थे। इनका जन्म पौष पूर्णिमा सं० १९३४ को लुधियाने के निकट मोही ग्राम में हुआ। ये जन्मना सिक्ख थे। आपका जन्म का नाम केहरसिंह था। किशोर अवस्था में ही उनमें वैराग्य के अंकुर उदय हुये। कालान्तर में

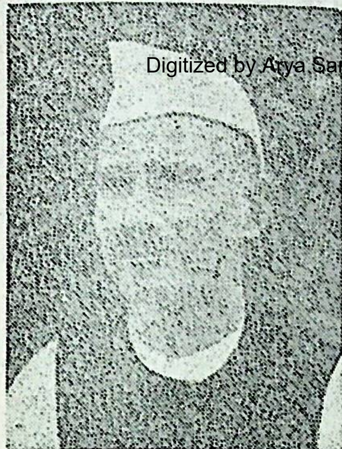
वे आर्यसमाज के सम्पर्क में आये और अपने गृह का त्याग कर अवधूत रूप में निकल गये। पौष पूर्णिमा सं० १९५७ को २३ वर्ष की अवस्था में इन्होंने संन्यास ग्रहण कर लिया। अब इनका नाम प्राणपुरी हुआ। साधु के रूप में देश विदेश में भ्रमण करने के उपरान्त आपने आर्यसमाज के कार्यों में विधिवत् रुचि लेना आरम्भ किया। इसी समय आपने मारिशस, ब्रह्मा तथा पूर्वी अफ्रीका में प्रचार यात्रायें कीं। पुनः उपदेशक विद्यालय लाहौर के आचार्य पद पर रहे। १९३९ में हैदराबाद आर्य सत्याग्रह का संचालन किया। स्वामीजी अब आर्यसमाज के सर्वोच्च नेता बन गये। १९५० में आपने पुनः मारिशस की यात्रा की तथा गोरक्षा आन्दोलन का संचालन किया। ११ चैत्र सं० २०१२ वि० में आपका बम्बई में स्वर्गवास हो गया। स्वामी स्वतन्त्रानन्दजी ने सभा के साहित्यिक कार्यों में पूर्ण रुचि पूर्वक भाग लिया। महर्षि के ग्रन्थों के संशोधन विषयक जो कार्यक्रम बनाये गये उनमें स्वामीजी ने अपना अपेक्षित सहयोग प्रदान किया। पं० गंगाप्रसाद उपाध्याय ने संस्कार विधि के कतिपय स्थलों पर शंकायें व्यक्त कीं, उनका प्रमाणपुरस्सर समाधान स्वामीजी ने किया।

८६—डा० गोकुलचन्द नारंग—

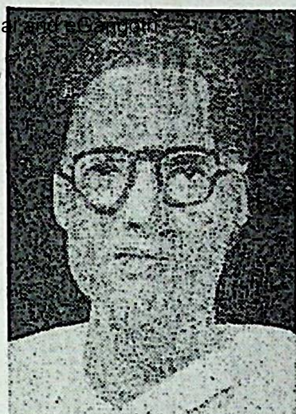
पंजाब के विख्यात आर्य नेता तथा लेखक डा० सर गोकुलचन्द नारंग प्रो० सुधाकरजी की मृत्यु के कारण हुये रिक्त स्थान पर २६ फरवरी १९४९ के अधिवेशन में सभासद बनाये गये। आपने 'Luther of India' शीर्षक स्वामीजी का एक जीवन चरित्र अंग्रेजी में लिखा है। डा० नारंग उच्चकोटि के लेखक, चिन्तक तथा विचारक थे। सभा के किसी भी अधिवेशन में वे उपस्थित नहीं हो सके।

८७—सेठ श्री नानजी कालिदास मेहता पोरबंदर—

सभा के अधिवेशनों में सेठ नारायणलाल पित्ती की लगातार अनुपस्थिति के कारण उनका स्थान रिक्त किया गया तथा उस पर सेठ नानजी को २६ फरवरी १९४९ की बैठक में सदस्य चुना गया। सुप्रसिद्ध उद्योगपति तथा दानी सेठ नानजी भाई कालिदास मेहता ने जहाँ अपने अद्वितीय पुरुषार्थ तथा व्यवसाय क्षमता से करोड़ों रुपये अर्जित किये वहाँ विभिन्न शिक्षण संस्थाओं तथा अन्य प्रवृत्तियों का प्रारम्भ कर अपनी दानशीलता का भी परिचय दिया। पोरबंदर में महिला गुरुकुल तथा महात्मा गांधी कीर्ति भवन (जन्म स्थान) सेठजी की दान प्रवृत्ति के परिचायक हैं। टंकारा में महर्षि महालय को क्रय करने में भी



श्री घनश्यामसिंहजी गुप्त



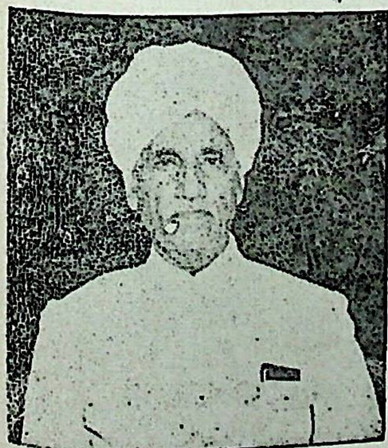
ला. देशबन्धुजी गुप्ता



श्री शिवचरणलाल गुप्ता



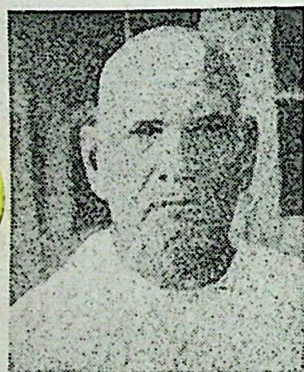
सेठ किशनलाल जी पोद्दार



श्री चरणदास जी पुरी



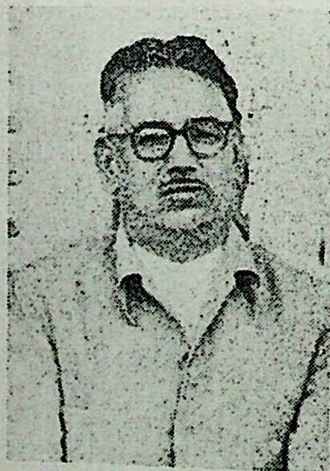
श्री इन्द्र विद्यावाचस्पति



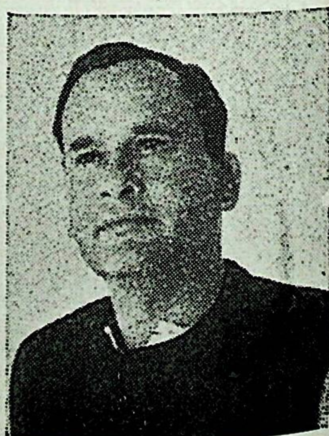
स्वामी आत्मानन्द जी सरस्वती



श्री गंगाप्रसाद जी उपाध्याय



श्री कंवरलालजी बाफना



श्री वीरेन्द्र जी

मेहताजी का आर्थिक योगदान महत्त्वपूर्ण था। दि० २५ अगस्त १९६९ को ८५ वर्ष की आयु में सेठजी का निधन हो गया।

८८—श्री देशबन्धुजी गुप्त दिल्ली—

लाला नारायणदत्तजी के निधन के कारण हुये रिक्त स्थान की पूर्ति श्री देशबन्धु गुप्त को ७ जनवरी १९५१ को सदस्य चुनकर दी गई। आप सुप्रसिद्ध उर्दू साप्ताहिक तेज के सम्पादक तथा दिल्ली कांग्रेस के प्रसिद्ध नेता थे। आगरा में शुद्धि सभा के कार्य में स्वामी श्रद्धानन्दजी को पूर्ण योग दिया। हैदराबाद सत्याग्रह में आपकी कूटनीतिक चातुरी के कारण ही सत्याग्रह आन्दोलन को महात्मा गांधी तथा अन्य राष्ट्रीय नेताओं का सहयोग तथा आशीर्वाद प्राप्त हुआ था। १९५१ ई० में एक विमान दुर्घटना में गुप्तजी का निधन हो गया। आप सभा के एक ही अधिवेशन में उपस्थित हो सके।

८९—श्री चित्तरंजन वर्मा एडवोकेट—

श्री देशबन्धु गुप्त के निधन के कारण हुये रिक्त स्थान पर प्रो० घीसूलालजी के पुत्र श्री चितरञ्जन वर्मा २४ फरवरी १९५२ के अधिवेशन में सभासद निर्वाचित हुये। वर्माजी का जन्म २३ फरवरी १९१७ को अजमेर में हुआ। पिता प्रो० घीसूलाल आर्यसमाज के लब्ध प्रतिष्ठ नेता तथा कार्यकर्त्ता थे। १९३८ में आपने आगरा विश्वविद्यालय से जीव-विज्ञान में एम० एस० सी० की परीक्षा उत्तीर्ण की। तत्पश्चात् १९४२ में प्रयाग विश्वविद्यालय से एल० एल० बी० की परीक्षा उत्तीर्ण की। श्री वर्मा अजमेर में वकालत करते हैं। आर्यसामाजिक कार्यों में आपकी प्रारम्भ से ही अभिरुचि रही है। आर्य प्रतिनिधि सभा राजस्थान के वर्षों तक आप सभासद रहे। १९५२ में सभा के पुस्तकाध्यक्ष, १९५५–५८, १९६४–६७–७० तक संयुक्त मन्त्री रहे तथा १९७३ में पुनः पुस्तकाध्यक्ष चुने गये। वे प्रारम्भ से ही सभा की कार्यकारिणी में हैं।

९०—श्री घनश्यामसिंह गुप्त—

मध्यप्रदेश धारा सभा के भूतपूर्व अध्यक्ष, भूतपूर्व संसद सदस्य तथा आर्यसमाज के विख्यात नेता श्री घनश्यामसिंह गुप्त दिनांक २४ फरवरी १९५२ के अधिवेशन में रा० ब० बद्रीदासजी के निरन्तर अनुपस्थित रहने के कारण हुये रिक्त स्थान पर सभासद बनाये गये। गुप्तजी वर्षों तक सार्वदेशिक सभा के प्रधान रह चुके हैं। १९३८–३९ में जब हैदराबाद में आर्यसमाज ने सत्याग्रह किया उस समय भी गुप्तजी की कूटनीतिज्ञता तथा नीति निपुणता के कारण

आर्यसमाज को विजय श्री प्राप्त हुई। १९५७ में पंजाब में चलाने गये हिन्दी रक्षा आन्दोलन में भी गुप्तजी ने आर्यसमाज का नेतृत्व किया था। श्री गुप्तजी सभा के तीन अधिवेशनों में निरन्तर उपस्थित नहीं हो सके अतः उनके स्थान पर दिनांक ३ दिसम्बर १९५५ को पं० गंगाप्रसादजी उपाध्याय सदस्य चुन लिये गये। परन्तु इसी अधिवेशन में श्री शिवचरणलालजी गुप्त के सदस्यता से त्यागपत्र दे देने के कारण इस रिक्त स्थान पर पुनः श्री घनश्याम सिंहजी गुप्त को सदस्य नियुक्त किया गया। परन्तु अन्ततः पुनः उनकी निरन्तर अनुपस्थिति को लक्षित कर सभा ने अपने २ अप्रैल १९६१ के अधिवेशन में उनके स्थान पर डा० परमात्मा शरण को सदस्य निर्वाचित किया।

९१—डा० मंगलदेव शास्त्री एम० ए०, डी० लिट०—

डा० मंगलदेव शास्त्री का निर्वाचन दिनांक २४ फरवरी १९५२ के अधिवेशन में डा० सर गोकुलचन्द नारंग की लगातार अनुपस्थिति के कारण हुये रिक्त स्थान पर हुआ। शास्त्रीजी बनारस संस्कृत कालेज के प्रिन्सिपल तथा वाराणसेय संस्कृत विश्वविद्यालय के उपकुलपति जैसे पदों को सुशोभित कर चुके हैं। आपने ऋग्वेद प्रातिशाख्य का सम्पादन किया तथा विभिन्न शास्त्रीय ग्रन्थों के आलोचनात्मक संस्करण सम्पादित किये। संस्कृत साहित्य को आपका योगदान सर्वथा प्रशंसनीय है। परोपकारिणी सभा द्वारा स्थापित विद्वत् समिति के आप सम्मान्य सदस्य हैं। आपने सभा के द्वारा प्रकाशित होने वाले महर्षि कृत ग्रन्थों के सुचारु रूप से सम्पादन एवं मुद्रण की आवश्यकता पर जोर दिया। सभा के द्वारा पौरोहित्य परीक्षायें चालू करने का भी प्रस्ताव रक्खा। ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका का एक आलोचनात्मक संस्करण प्रकाशित करने का प्रस्ताव जब सभा ने स्वीकार किया तो उसको सम्पादित करने का कार्य भी शास्त्रीजी के ही सुपुर्द किया गया। यद्यपि अपनी वृद्धावस्था एवं रुग्णता के कारण शास्त्रीजी सभा की साहित्यिक गतिविधियों में यथेच्छ योगदान नहीं कर सके हैं तथापि उनके उत्तमोत्तम परामर्श सभा को सदा प्राप्त होते रहते हैं।

९२—श्री हंसराजजी गुप्त—

बख्शी सर टेकचन्दजी के निरन्तर अनुपस्थित रहने के कारण दिनांक २४ फरवरी १९५२ के अधिवेशन में श्री हंसराजजी गुप्त सभासद निर्वाचित हुये। श्री हंसराजजी के पिता बाबू गुलराजगोपाल गुप्त भी सभा के सभासद थे। गुप्तजी ने सभा की विविध प्रवृत्तियों को उन्नत बनाने में अपना पूर्ण योगदान

दिया । वे १९५५ से १९६४ तक उपप्रधान रहे तथा महाशय कृष्ण के निधन के पश्चात् सभा के अध्यक्ष बने । उनका प्रधानत्व का काल १९७० तक रहा । वैदिक यन्त्रालय तथा पुस्तकालय की व्यावसायिक उन्नति की ओर गुप्तजी ने पूरा ध्यान दिया । उनके अध्यक्षता काल में वैदिक यन्त्रालय में ब्लाक निर्माण का कार्य प्रारम्भ हुआ, दयानन्द मार्केट बन कर तैयार हुआ । गुप्तजी ऋषि मेले के अवसर पर उपस्थित होकर सभा की समस्त कार्य प्रणालियों का निरीक्षण करते थे तथा उचित मार्गदर्शन दिया करते थे ।

९३—श्री शिवचरणलालजी गुप्त अजमेर—

राजाधिराज सुदर्शनदेवजी के त्याग पत्र देने के कारण रिक्त हुये स्थान पर अजमेर के प्रसिद्ध आर्य कार्यकर्ता श्री शिवचरणलालजी गुप्त दिनांक २८ फरवरी १९५३ के अधिवेशन में सभासद निर्वाचित हुये । श्री गुप्तजी ने हैदराबाद आर्य सत्याग्रह में महत्त्वपूर्ण कार्य किया । कालान्तर में वे आर्य प्रतिनिधि सभा राजस्थान के मन्त्री भी रहे । १९५५ में श्री गुप्तजी सभा के पुस्तकाध्यक्ष पद पर निर्वाचित हुये किन्तु किन्हीं कारणों से आपने सभा की सदस्यता से त्यागपत्र दे दिया जो ३–१२–५५ के अधिवेशन में स्वीकार कर लिया गया । १९६६ ई० में श्री गुप्तजी का निधन हो गया ।

९४—सेठ प्रतापसिंह शूरजी वल्लभदास बम्बई—

झालावाड़ नरेश श्री हरिश्चन्द्रजी के अनुपस्थित रहने के कारण हुये रिक्त स्थान पर सुप्रसिद्ध आर्य श्रेष्ठि श्री शूरजी वल्लभदास के पुत्र सेठ प्रतापसिंह दिनांक २७ फरवरी १९५४ को सदस्य चुने गये । प्रताप भाई का जन्म ११ जुलाई १९१८ को हुआ । आपने बी० काम० तक शिक्षा प्राप्त की । तत्पश्चात् अपने व्यावसायिक दायित्व को निभाने में तत्पर हुये । प्रताप भाई के पितामह ने कोई १०० वर्ष पूर्व स्वामी दयानन्द का साक्षात्कार किया था, तभी से उनका परिवार वैदिक धर्म में दीक्षित हुआ । बाल्यकाल से ही उन्हें वैदिक संस्कारों में विकसित होने का अवसर प्राप्त हुआ, श्री प्रतापसिंह आर्यसमाज की सर्वोच्च संस्था सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान रह चुके हैं तथा आपने अगस्त १९७३ में मॉरिशस में आयोजित आर्य महासम्मेलन की अध्यक्षता की । प्रताप भाई १९७० में सभा के प्रधान निर्वाचित हुये परन्तु कार्य व्यस्तता के कारण आपने एक वर्ष पश्चात् १९७१ में इस पद से त्यागपत्र दे दिया ।

६५—सेठ कृष्णलाल पोद्दार कलकत्ता—

श्री मदनमोहन सेठ के निधन के कारण हुये रिक्त स्थान पर दिनांक २७ फरवरी १९५४ के अधिवेशन में सेठ कृष्णलाल पोद्दार सभासद निर्वाचित हुये। सेठ कृष्णलाल पोद्दार सुप्रसिद्ध आर्यसमाजी श्रेष्ठि दीपचन्दजी पोद्दार के सुपुत्र हैं। सभा में आपकी उपस्थिति शून्य रही।

६६—महात्मा आनन्द स्वामीजी, वर्तमान प्रधान, परोपकारिणी सभा—

सभा के अर्द्ध शताब्दी से भी अधिक समय तक मन्त्री पद को सुशोभित करने वाले दी० ब० हरविलासजी शारदा के निधन के कारण हुये रिक्त स्थान की पूर्ति सभा के सदस्यों ने अपने ३ अप्रैल १९५५ के अधिवेशन में आर्यसमाज के तपस्वी संन्यासी और मूर्धन्य नेता महात्मा आनन्द स्वामीजी को सदस्य चुनकर की। महात्मा आनन्द स्वामी का जन्म १५ अक्टूबर १८८३ को अविभाजित पंजाब के एक ग्राम जलालपुर जट्टां में हुआ। वे १९०६ में आर्यसमाज के सभासद बने। महात्मा आनन्द स्वामीजी अपने पूर्वाश्रम में श्री खुशहालचन्द खुर्सन्द (आनन्द) के नाम से प्रसिद्ध थे। आप आर्य प्रादेशिक सभा के संस्थापक महात्मा हंसराजजी के दाहिने हाथ थे। आपने स्वतन्त्रता पूर्व के पंजाब में आर्यसमाज तथा वैदिक धर्म के प्रचार हेतु महत्त्वपूर्ण कार्य किया। 'मिलाप' के सम्पादक के रूप में आपको पर्याप्त ख्याति मिली। हैदराबाद सत्याग्रह में भी सर्वाधिकारी के रूप में आपने भाग लिया तथा सत्यार्थप्रकाश के चतुर्दश समुल्लास पर लगाये गये प्रतिबंध को तोड़ने के लिये किये गये सिंध के आर्य सत्याग्रह में भी भाग लिया। महात्माजी ने योग साधना के पथ के पथिक के रूप में जो गूढ़ अनुभव प्राप्त किये हैं वे इस बात को सिद्ध करने के लिये पर्याप्त हैं कि सच्चा लोक हितैषी संन्यासी आध्यात्मिक साधना के बल पर विश्व कल्याण के लक्ष्य को पूरा करने में सफल होता है। सम्प्रति महात्मा आनन्द स्वामी १९७१ से सभा के प्रधान पद को सुशोभित कर रहे हैं।

६७—श्री चरणदास पुरी वकील दिल्ली—

शाहपुराधीश श्री उम्मेदसिंहजी के निधन से रिक्त स्थान की पूर्ति दिनांक ३ अप्रैल १९५३ के अधिवेशन में प्रख्यात एडवोकेट बैरिस्टर चरणदासजी पुरी को चुन कर की गई। श्री पुरी १९६१ में सभा के उपप्रधान चुने गये। आप महाशय कृष्णजी के साथ सभा के अधिवेशनों में नियमित रूप से उपस्थित

होते थे तथा अपना अनुभव पूर्ण परामर्श सभा को सदा देते रहे। आपका निधन अप्रैल १९७० में हुआ।

९८—डा० मथुरालालजी शर्मा एम० ए० डी० लिट०—

राजस्थान के कार्य निवृत्त शिक्षा विभाग के निदेशक तथा ख्याति प्राप्त इतिहासज्ञ डा० मथुरालाल शर्मा को परोपकारिणी सभा का सभासद दिनांक ३ अप्रैल १९५५ के अधिवेशन में बनाया गया, जब स्वामी स्वतन्त्रानन्दजी के निधन के कारण एक स्थान रिक्त हुआ। डा० मथुरालाल शर्मा हरबर्ट-कालेज कोटा तथा महाराजा कालेज जयपुर के प्रिन्सिपल पद पर कार्य कर चुके थे। दिसम्बर १९५३ में वे आर्य प्रतिनिधि सभा राजस्थान के प्रधान चुने गये। डा० मथुरालाल शर्मा का जन्म आषाढ़ शुक्ला ३ सं० १९५३ वि० में कोटा राज्य के अन्तर्गत वारां कस्बे में हुआ। आपने इलाहाबाद विश्वविद्यालय से बी० ए० तथा बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय से इतिहास एवं भारतीय संस्कृति में एम० ए० की परीक्षा उत्तीर्ण की। पुनः उसी विश्वविद्यालय से डी० लिट० की उपाधि प्राप्त की। आर्यसमाज में आपका प्रवेश १९१२ ई० में हुआ। आप आर्यकुमार सभा कोटा के मन्त्री तथा आर्यसमाज कोटा के प्रधान रहे। हिन्दू विश्वविद्यालय बनारस स्थित आर्यसमाज के मन्त्री पद पर भी रहने का अवसर आपको प्राप्त हुआ। डा० शर्मा १९५५, १९६४, १९६७, १९७० तथा १९७३ में सभा की कार्यकारिणी समिति के सभासद निर्वाचित हुये। १९७३ में पं० भगवानस्वरूपजी न्यायभूषण के निधन के कारण सभा की विद्वत् समिति में हुये रिक्त स्थान पर भी आपको उक्त समिति का सभासद चुना गया।

९९—प्रो० इन्द्र विद्यावाचस्पति—

प्रो० घीसूलाल के २० अगस्त १९५५ को दिवंगत हो जाने के कारण हुये रिक्त स्थान की पूर्ति दिनांक ३ दिसम्बर १९५५ के असाधारण अधिवेशन में प्रसिद्ध साहित्यकार, पत्रकार तथा नेता प्रो० इन्द्रजी को चुन कर की गई। प्रो० इन्द्र स्वामी श्रद्धानन्दजी के कनिष्ठ पुत्र थे। ये वर्षों तक वीर अर्जुन के सम्पादक रहे। गुरुकुल कांगड़ी के मुख्याधिष्ठाता तथा कुलपति पद पर रह कर इन्द्रजी ने अपने पिता द्वारा स्थापित इस अद्वितीय शिक्षण संस्थान का वर्षों तक संचालन किया। वे सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के मन्त्री तथा प्रधान पदों पर भी रहे। ऋषि दयानन्द का जीवन चरित तथा आर्यसमाज का इतिहास (२ भाग) उनकी उल्लेखनीय कृतियाँ हैं।

१००—स्वामी आत्मानन्द सरस्वती—

प्रसिद्ध दार्शनिक विद्वान् तथा आर्यसमाज के मूर्धन्य संन्यासी स्वामी आत्मानन्द सरस्वती दिनांक ३ दिसम्बर १९५५ को सभा के असाधारण अधिवेशन में सेठ नानजी कालिदास मेहता के निरन्तर अनुपस्थित रहने के कारण हुये रिक्त पद पर सदस्य चुने गये। स्वामी आत्मानन्दजी (पूर्व नाम मुक्तिराम उपाध्याय) गुरुकुल पोठोहार (रावलपिण्डी) के संस्थापक तथा आचार्य थे। देश विभाजन के पश्चात् वैदिक साधन आश्रम यमुनानगर का संचालन किया। पंजाब के हिन्दी रक्षा आन्दोलन में आर्य जनता का नेतृत्व किया। वे एक सिद्ध हस्त लेखक थे। मनोविज्ञान और शिव संकल्प, वैदिक गीता आदि आपकी उल्लेखनीय कृतियाँ हैं। स्वामी आत्मानन्दजी न केवल उच्चकोटि के दार्शनिक विद्वान् एवं लेखक ही थे, अपितु कर्मठ नेता भी थे। १९५५ में वे आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के अध्यक्ष चुने गये। उस समय पंजाब में राष्ट्रभाषा हिन्दी की स्थिति अत्यन्त शोचनीय थी। सिक्ख राजनीति के प्रबल हो जाने के कारण पंजाबी के समक्ष हिन्दी का स्थान नीचा माना जाने लगा। उसके पठन पाठन में अनेक बाधायें उपस्थित की जाने लगीं। तब स्वामी आत्मानन्दजी के नेतृत्व में हिन्दी रक्षा आन्दोलन प्रारम्भ किया गया। स्वामी आत्मानन्दजी सर्वात्मना इस संघर्ष में कूद पड़े और उन्होंने इस आन्दोलन में आर्यसमाज को नेतृत्व प्रदान किया।

१०१—पं० गंगाप्रसाद उपाध्याय—

आर्यसमाज के प्रख्यात लेखक, साहित्यकार तथा दार्शनिक विद्वान् पं० गंगाप्रसाद उपाध्याय दिनांक ३ दिसम्बर १९५५ के असाधारण अधिवेशन में श्री घनश्यामसिंह गुप्त के निरन्तर अनुपस्थित रहने के कारण हुये रिक्त स्थान पर चुने गये। उपाध्यायजी ने आस्तिकवाद, अद्वैतवाद, जीवात्मा, शांकर भाष्यालोचन आदि उत्कृष्ट ग्रन्थ लिखकर दार्शनिक लेखन में एक नूतन मानदण्ड स्थापित किया था। उनके प्रसिद्ध ग्रन्थ आस्तिकवाद पर हिन्दी साहित्य सम्मेलन ने मंगलाप्रसाद पुरस्कार प्रदान किया था। यद्यपि उपाध्यायजी को सभा ने अपना सदस्य निर्वाचित किया, परन्तु उन्होंने थोड़े समय पश्चात् ही अपना त्याग पत्र प्रेषित कर दिया, फलतः २२ अप्रैल १९५६ के अधिवेशन में उनका त्यागपत्र स्वीकार कर लिया गया।

१०२—श्री घनश्यामसिंह गुप्त—

श्री शिवचरणलालजी गुप्त के त्यागपत्र दे देने पर श्री घनश्यामसिंहजी गुप्त

दिनांक ३-१२-५५ के अधिवेशन में सदस्य चुने गये। विशेष विवरण के लिये द्रष्टव्य संख्या ९०।

१०३—श्री श्रीकरण शारदा—वर्तमान मन्त्री, परोपकारिणी सभा—

पं० गंगाप्रसाद उपाध्याय के त्यागपत्र देने से हुये रिक्त स्थान पर दिनांक २२ अप्रैल १९५६ के साधारण अधिवेशन में श्री श्रीकरणजी शारदा को सदस्य निर्वाचित किया गया। इसी अधिवेशन में इन्हें पुस्तकाध्यक्ष पद भी दिया गया। श्री शारदाजी देशभक्त कुं० चांदकरणजी शारदा के सबसे बड़े पुत्र हैं। इनका जन्म १४ जून १९१९ को बड़ौदा में हुआ। अजमेर में प्रारम्भिक शिक्षा ग्रहण करने के अनन्तर उच्च शिक्षा हेतु ये आगरा गये। वहाँ से इन्होंने बी० ए०, एल० एल० बी० की परीक्षायें उत्तीर्ण कीं। १९४२ में 'भारत छोड़ो' आन्दोलन में भाग लेने के कारण इन्हें आगरा कालेज से निष्कासित कर दिया गया था। प्रारम्भ में श्री शारदाजी ने कांग्रेस में सक्रिय भाग लिया और १९४४ से १९५० तक नगर कांग्रेस के मन्त्री तथा १९५६ तक प्रदेश कांग्रेस के सदस्य रहे। आपने विभिन्न सामाजिक एवं राजनैतिक संस्थाओं की गतिविधियों में भाग लिया। आर्य प्रतिनिधि सभा राजस्थान के मन्त्री तथा उपप्रधान एवं सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के उपप्रधान रहे। अजमेर की अनेक आर्य शिक्षण संस्थाओं के संचालन में इनका प्रमुख योगदान है। १९५८ में आप सभा के संयुक्त मन्त्री पद पर निर्वाचित हुये। साथ ही आपने पुस्तकाध्यक्ष पद का कार्य भी सम्भाला। १९६१ में भी आप इन्हीं पदों पर निर्वाचित हुये तथा तत्कालीन सभा मन्त्री डा० मानकरणजी शारदा को सभा कार्यों में पूर्ण सहयोग देते रहे। तत्पश्चात् १९६४ में आप मन्त्री पद पर निर्वाचित हुये। तब से आप निरन्तर इसी पद पर रहते हुये सभा की विभिन्न प्रवृत्तियों का कुशलतापूर्वक संचालन कर रहे हैं।

१०४—श्री अमरचन्दजी ईनाणी—

देशभक्त कुंवर चांदकरणजी शारदा के निधन के कारण हुये रिक्त स्थान की पूर्ति श्री अमरचन्दजी ईनाणी एडवोकेट को दिनांक ११ नवम्बर १९५८ ई० के अधिवेशन में सभासद चुन कर की गई। इसी वर्ष इन्हें सभा की कार्यकारिणी का सभासद भी निर्वाचित किया गया। श्री ईनाणी का जन्म अजमेर में १० जनवरी १९१२ को हुआ। गवर्नमेंट कालेज अजमेर से बी० एस० सी० करने के पश्चात् होल्वर कालेज इन्दौर से आपने एम० एस० सी० तथा एल० एल० बी० की परीक्षायें उत्तीर्ण कीं। आर्यसमाज में प्रारम्भ से

ही आपकी रुचि थी। देशभक्त कुंवर चांदकरणजी शारदा के निकट सम्पर्क में आकर आपने समाज सेवा का पाठ पढ़ा। १९५७ में पंजाब हिन्दी रक्षा आन्दोलन में उत्साहपूर्वक भाग लिया तथा सत्याग्रह करते हुये कारावास की यातनाओं को सहन किया। सत्याग्रह समाप्त होने पर अजमेर लौटते समय मोहरी रेल दुर्घटना के शिकार हुये, जिससे आपको पर्याप्त शारीरिक कष्ट सहन करना पड़ा। सभा के कार्यों में आप सदा से रुचि लेते रहे हैं। आपने वैदिक यन्त्रालय की व्यावसायिक उन्नति एवं प्रगति में रुचि ली तथा दयानन्द मार्केट की निर्माण समिति के सदस्य के रूप में उक्त मार्केट की निर्माण प्रक्रिया में अपना योगदान किया। आप १९५८, १९६१ तथा १९७३ में सभा की कार्यकारिणी के सभासद निर्वाचिन हुये।

१०५—राजाधिराज श्री सुदर्शनदेवजी शाहपुरा—

स्वामी आत्मानन्दजी की निरन्तर अनुपस्थिति के कारण दिनांक ९ अप्रैल १९५९ के अधिवेशन में श्री सुदर्शनदेवजी सभासद चुने गये। विशेष विवरण के लिये द्रष्टव्य संख्या ७८।

१०६—श्री कंवरलालजी वाफना—

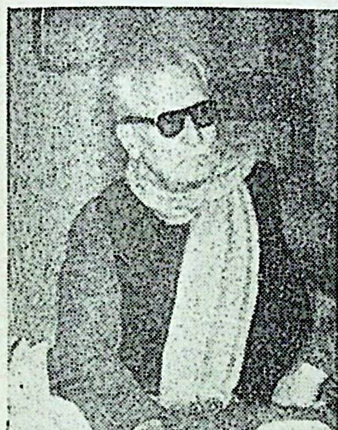
प्रो० इन्द्र विद्या वाचस्पति के निरन्तर तीन अधिवेशनों में अनुपस्थित रहने के कारण राजस्थान उच्च न्यायालय के अवकाश प्राप्त मुख्य न्यायाधीश श्री कंवरलाल वाफना को सभा के ९ अप्रैल १९५९ के अधिवेशन में सदस्य बनाया गया। इन्हें सभा के २७ मार्च १९६० के अधिवेशन में ठाकुर मदनसिंहजी के उपप्रधान पद से त्यागपत्र देने पर उपप्रधान पद प्रदान किया गया। श्री वाफना राजस्थान उच्चन्याय के मुख्य न्यायाधीश पद पर कार्य कर चुके थे। १३ मार्च १९६१ को श्री वाफना का निधन हो गया।

१०७—रावल नरेन्द्रसिंहजी जोबनेर—

श्री कंवरलालजी वाफना के निधन के कारण हुये रिक्त स्थान पर दिनांक २ अप्रैल १९६१ के अधिवेशन में रावल नरेन्द्रसिंहजी सदस्य चुने गये। विशेष द्रष्टव्य संख्या ५०।

१०८—डा० परमात्मा शरणजी एम० ए० पी० एच० डी०
(भूतपूर्व प्राध्यापक इतिहास दिल्ली विश्वविद्यालय)—

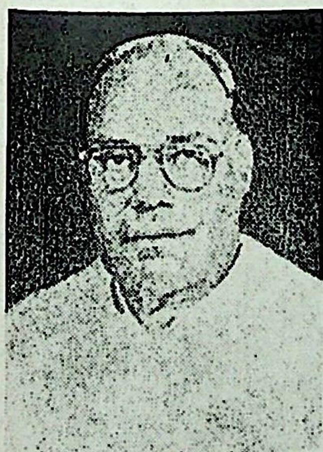
श्री घनश्यामसिंहजी गुप्त के निरन्तर तीन अधिवेशनों में उपस्थित न होने



पं. भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण



श्री विद्यारत्नजी भटनागर



श्री राजबहादुर जी कोटा



राव नारायणसिंहजी मसूदा

के कारण हुये उनके रिक्त स्थान पर डा० परमात्माशरणजी २ अप्रैल १९६१ के अधिवेशन में सभासद निर्वाचित किया। इतिहास के विद्वान् डा० शरण का जन्म १४ अगस्त १८९८ को गाजियाबाद (मेरठ) में हुआ। १९२३ में इन्होंने काशी हिन्दू विश्वविद्यालय से एम० ए० परीक्षा उत्तीर्ण की। आप जन्मना आर्यसमाजी हैं। हिन्दू विश्वविद्यालय के परिसर में आपने आर्यसमाज की स्थापना में विशिष्ट योग दिया। आर्य प्रतिनिधि सभा संयुक्त प्रान्त की स्वर्ण जयन्ती जब १९३८ में मेरठ में मनाई गई तो आप उसके संचालक मण्डल के सदस्य तथा शिक्षा सम्मेलन के संयोजक रहे। डा० युद्धवीरसिंह के सहयोग से आपने भारतवर्षीय आर्य कुमार सम्मेलन की स्थापना में भी योग दिया। १९४२ तक उक्त परिषद् के प्रधान रहे। सत्यार्थप्रकाश संशोधन समिति के डा० शरण संयोजक रहे तथा सभा के प्रकाशन एवं अनुसंधानात्मक प्रवृत्तियों के सम्बन्ध में उन्होंने सभा का मार्ग दर्शन किया है।

१०९—डा० राजबहादुरजी कोटा—

सेठ कृष्णलाल पोद्दार के तीन अधिवेशनों में निरन्तर अनुपस्थित रहने के कारण हुये रिक्त स्थान पर डा० राजबहादुरजी कोटा को दिनांक ३१ दिसम्बर १९६२ के दिन सभासद निर्वाचित किया गया। डा० राजबहादुर कोटा राज्य के शिक्षा विभाग में निरीक्षक पद पर रह कर अवकाश ग्रहण कर चुके थे। आर्य प्रतिनिधि सभा राजस्थान के आप प्रधान, उपप्रधान आदि पदों पर रहे तथा ईसाई प्रचारकों की राष्ट्र विरोधी गतिविधियों के विरोध में आर्यसमाज द्वारा संचालित कार्यक्रमों में पर्याप्त भाग लिया। आपने सभा की विभिन्न गतिविधियों में पूर्ण मनोयोग से भाग लिया। आप सभा की कार्यकारिणी के सभासद भी रहे तथा सभा द्वारा शतपथ ब्राह्मण आदि प्राचीन आर्ष ग्रन्थों को प्रकाशित कराने विषयक अनेक उपयोगी प्रस्ताव आपने सभा के समक्ष रक्खे। आपका यह भी यत्न था कि स्व० पं० क्षेमकरणदास त्रिवेदी कृत अथर्ववेद भाष्य भी सभा के द्वारा प्रकाशित हो। आपका निधन २२-४-७१ को हुआ।

११०—श्री वीरेन्द्र एम० ए०—

महाशय कृष्ण के निधन के कारण हुये रिक्त स्थान पर दिनांक १७ नवम्बर १९६३ की परोपकारिणी सभा की बैठक में श्री वीरेन्द्रजी को सदस्य निर्वाचित किया। श्री वीरेन्द्र महाशयजी के वरिष्ठ पुत्र तथा जालन्धर से

प्रकाशित होने वाले वीर प्रताप के सम्पादक हैं। वीरेन्द्रजी ने आर्यसमाज में अपनी बाल्यावस्था से ही कार्य किया है तथा आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के विभिन्न पदों पर रहे हैं। सम्प्रति श्री वीरेन्द्रजी आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के मन्त्री पद पर कार्य कर रहे हैं।

१११—पं० उदयवीर शास्त्री विद्याभास्कर—

पं० ब्रह्मदत्तजी जिज्ञासु के निधन के कारण हुये रिक्त स्थान पर दर्शनों के महान् विद्वान् पं० उदयवीरजी शास्त्री को दिनांक ३ अक्टूबर १९६५ के अधिवेशन में सभासद चुना। पं० उदयवीर शास्त्री का जन्म पौष शुक्ला १० सं० १९५१ तदनुसार ६ जनवरी १८९५ ई० को ग्राम बनैल (जिला बुलन्दशहर) में हुआ। आपने गुरुकुल सिकन्दराबाद तथा गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर में अध्ययन किया। न्याय, सांख्य-योगतीर्थ तथा वेदान्ताचार्य की परीक्षायें आपने क्रमशः कलकत्ता तथा काशी से उत्तीर्ण कीं। गुरुकुल महाविद्यालय से विद्याभास्कर की परीक्षा उत्तीर्ण की। विभिन्न स्थानों पर अध्यापन कार्य करने के साथ साथ आपने आर्यसमाजों में प्रचार, व्याख्यान, शास्त्रार्थ आदि का कार्य भी किया। सभा की विद्वत् समिति के आप सभासद हैं।

वे दर्शनों के अप्रतिम विद्वान् हैं। उन्होंने सांख्य, वेदान्त तथा वैशेषिक दर्शनों पर विद्योदय भाष्य लिखे हैं तथा सांख्य दर्शन का इतिहास, वेदान्त दर्शन का इतिहास, सांख्य सिद्धान्त आदि अन्य शोधपूर्ण ग्रन्थों की रचना की हैं। उन्हें सांख्य दर्शन के इतिहास पर सेठ हरजीमल डालमिया पुरस्कार प्राप्त हुआ।

११२—पं० भगवानस्वरूपजी न्यायभूषण—

पं० गंगाप्रसादजी के निरन्तर अस्वस्थ रहने, फलतः अनुपस्थित होने के कारण हुये रिक्त स्थान पर वैदिक यन्त्रालय, अजमेर के भूतपूर्व प्रबन्धकर्त्ता तथा राजस्थान के प्रख्यात आर्य नेता एवं कार्यकर्ता पं० भगवानस्वरूपजी न्यायभूषण को दिनांक ३ अक्टूबर १९६५ के अधिवेशन में सभा ने अपना सदस्य चुना। श्री न्यायभूषणजी को सभा का पुस्तकाध्यक्ष पद भी दिया गया। उन्होंने अपने कार्यकाल में महर्षि की पुस्तकों के मुद्रण एवं प्रकाशन की सुचारु व्यवस्था की। वे सभा की विद्वत् समिति के सभासद भी रहे। इस समिति के तत्त्वावधान में सत्यार्थप्रकाश के नवीन संस्करण का प्रकाशन ग्रन्थ की मूल पाण्डुलिपि से पूर्ण मिलान कर कराया गया। सभा के मुखपत्र

परोपकारी के प्रबन्ध सम्पादन का कार्य श्री पण्डितजी ने सफलतापूर्वक निर्वाह किया। उनके प्रयत्नों से इस पत्र की गणना आर्य जगत् के प्रमुख पत्रों में होने लगी। वैदिक यन्त्रालय से अवकाश ग्रहण कर लेने के अनन्तर वे सभा के कार्यालय को भी देखते थे तथा सभा के दैनन्दिन पत्र व्यवहार तथा अन्य कार्यों की देखरेख उनके जिम्मे थी। न्यायभूषणजी को सभा एवं राजस्थान प्रान्त में आर्यसमाज की गतिविधियों का विशद रूप से ऐतिहासिक ज्ञान था। वे सभा विषयक जानकारी के जीवित कोष थे। खेद है कि गत १२ दिसम्बर १९७३ को उनका निधन हो गया।

११३—श्री के० नरेन्द्र एम० ए०—

रावल नरेन्द्रसिंहजी जोबनेर के निधन के कारण हुये रिक्त स्थान की पूर्ति श्री के० नरेन्द्रजी को सभा के २२ अक्टूबर १९६७ के अधिवेशन में सभासद चुन कर की गई। आपका जन्म २४ अप्रैल १९१४ को लाहौर में हुआ। आप आर्यसमाज के यशस्वी नेता महाशय कृष्ण के कनिष्ठ पुत्र हैं। आपने स्वाधीनता संग्राम में भाग लिया तथा सविनय अवज्ञा भंग आन्दोलन में भाग लेकर कारागृह भी गये। आप उर्दू प्रताप तथा हिन्दी दैनिक अर्जुन के सम्पादक हैं तथा आपने पत्रकार के रूप में विभिन्न देशों की यात्रायें भी की हैं। भारतीय समाचार पत्र सोसाइटी के आप संचालक भी रह चुके हैं। श्री नरेन्द्र कुशल वक्ता, प्रगल्भ लेखक तथा आर्यसमाज के एक प्रबुद्ध नेता हैं।

११४—श्री विद्यारत्न भटनागर—

श्री धर्मचन्दजी के निधन के कारण हुये रिक्त स्थान पर श्री विद्यारत्न भटनागर को दिनांक २२ अक्टूबर १९६७ के अधिवेशन में सदस्य चुना गया। आपका मूल निवास कोटा है। श्री भटनागर के पिता श्री श्यामस्वरूपजी आर्यसमाज कोटा के कर्मठ कार्यकर्ता तथा स्तम्भवत् थे। श्री विद्यारत्नजी राजस्थान के जनकार्य विभाग में अतिरिक्त मुख्य अभियन्ता पद पर रहे। इस पद से अवकाश ग्रहण करने के अनन्तर आप जयपुर में रह कर आर्य-सामाजिक गतिविधियों में मुख्य रूप से भाग लेते रहे हैं।

११५—श्री हरिश्चन्द्र वर्मा कलकत्ता—

श्री वीरेन्द्रजी के निरन्तर तीन वर्ष तक सभा में अनुपस्थित रहने के कारण हुये रिक्त की पूर्ति दिनांक २२ अक्टूबर १९६७ के अधिवेशन में श्री हरिश्चन्द्र वर्मा को सभासद चुन कर की गई। श्री वर्मा कलकत्ता के प्रसिद्ध

उद्योगपति तथा प्रमुख आर्यसामाजिक कार्यकर्ता हैं। आपने आर्यसमाज विधान-सरणी कलकत्ता के प्रमुख पदों पर रह कर उल्लेखनीय कार्य किया है।

११६—प्रो० शेरसिंहजी भू० पू० केन्द्रीय राज्य संचार मन्त्री, नई दिल्ली—

हरियाणा के सुप्रसिद्ध आर्य नेता प्रो० शेरसिंह को दिनांक १६ नवम्बर १९६९ के अधिवेशन में पं० भगवद्दत्तजी के निधन के कारण हुये रिक्त स्थान पर सभा ने अपना सभासद बनाया। केन्द्रीय सरकार में संचार मन्त्री के पद पर रहते हुये प्रोफेसर साहब ने दण्डी गुरु विरजानन्द तथा स्वामी श्रद्धानन्द के डाक टिकट प्रकाशित कराने की व्यवस्था की। प्रो० शेरसिंह का जन्म १८ सितम्बर १९१७ को हरयाणा राज्य के एक ग्राम बाघपुर में हुआ। दिल्ली विश्वविद्यालय से एम० ए० (गणित) परीक्षा उत्तीर्ण करने के पश्चात् आप एम० एस० जे० कालेज भरतपुर तथा जाट कालेज रोहतक में प्राध्यापक रहे। १९४६ से ९९६७ तक आप पंजाब विधान सभा के सदस्य निर्वाचित होते रहे। इसी पंजाब सरकार में संसदीय सचिव तथा सिंचाई एवं बिजली मन्त्री भी रहे। १९६७ तथा १९७१ में आपने केन्द्रीय संसद (लोक सभा) के लिये चुनाव लड़ा और विजयी हुये। केन्द्र में शिक्षा, सूचना और प्रसारण, संचार तथा कृषि राज्य मन्त्री पद पर रहे। प्रो० शेरसिंहजी ने अपने शिक्षा राज्य मन्त्री के कार्यकाल में सभा को स्वामी दयानन्द के हस्तलेखों का माइक्रोफिल्मिंग कराने का परामर्श दिया तथा राष्ट्रीय अभिलेखागार द्वारा इस कार्य की सुचारु रूप से व्यवस्था की। हरयाणा और पंजाब की आर्यसामाजिक प्रवृत्तियों में प्रो० शेरसिंह की सदा से ही रुचि रही है।

११७—डा० भवानीलाल भारतीय—

बैरिस्टर चरणदासजी पुरी के निधन के कारण हुये रिक्त स्थान पर सभा ने अपने ८ नवम्बर १९७० के अधिवेशन में डा० भवानीलाल भारतीय को सदस्य निर्वाचित किया। डा० भारतीय का जन्म आषाढ़ कृष्णा ३ सं० १९८५ वि० को नागौर जिलान्तर्गत परबतसर ग्राम में हुआ। इनकी शिक्षा एम० ए० (हिन्दी) एम० ए० (संस्कृत) जोधपुर में हुई। १९६८ में आपने आर्यसमाज का संस्कृत भाषा और साहित्य को योगदान विषय पर राजस्थान विश्वविद्यालय से पी० एच० डी० उपाधि प्राप्त की। डा० भारतीय प्रारम्भ से ही आर्यसमाज के कार्यों में अभिरुचि लेते रहे हैं। वे केन्द्रीय आर्य समिति जोधपुर के मन्त्री तथा आर्य प्रतिनिधि सभा राजस्थान के मन्त्री (१९६९-

७२) तथा उपप्रधान (१९७२–७३) रह चुके हैं। वे एक कुशल लेखक, वक्ता तथा अनुसन्धान क्षेत्र में कार्य करने वाले विद्वान् हैं। उनके द्वारा रचित तथा सम्पादित कतिपय उल्लेखनीय ग्रन्थ निम्न हैं—राजा राम मोहनराय तथा महर्षि दयानन्द, ऋषि दयानन्द और आर्यसमाज की संस्कृत साहित्य को देन, श्रीकृष्ण चरित, आर्यसमाज के शास्त्रार्थ महारथी, शुद्ध गीता, दयानन्द शास्त्रार्थ संग्रह, महर्षि दयानन्द तथा स्वामी विवेकानन्द, आर्यसमाज के वेद सेवक विद्वान्। अन्तिम पुस्तक पर डा० भारतीय को चौ० प्रतापसिंह धर्मार्थ ट्रस्ट की ओर से एक सहस्र रुपये प्रदान कर पुरस्कृत किया गया है। डा० भारतीय १९७० से अब तक सभा के संयुक्तमन्त्री पद पर कार्य कर रहे हैं। पं० भगवानस्वरूपजी न्यायभूषण के निधन के पश्चात् वे सभा के मुखपत्र परोपकारी के प्रबन्ध सम्पादक का भी कार्य कर रहे हैं। उन्होंने आर्य प्रतिनिधि सभा राजस्थान के मुख पत्र आर्य मार्तण्ड का सम्पादन (१९७०–१९७३) भी किया।

११८—श्री नारायणसिंह मसूदा—

डा० राजबहादुरजी कोटा निवासी के निधन के कारण हुये रिक्त स्थान की पूर्ति श्री नारायणसिंहजी मसूदा को दिनांक २४ अक्टूबर १९७१ के अधिवेशन में सभासद चुन कर की गई। रावसाहब के पितामह स्व० बहादुरसिंहजी महर्षि के परम भक्त तथा सभा के आद्य सभासद थे। रावसाहब नारायणसिंहजी राजस्थान राज्य के मन्त्रिमण्डल में विभिन्न पदों पर रहे हैं। वे एक सुरुचि सम्पन्न लेखक, साहित्यकार तथा विचारक हैं। आपने गीता पर एक विचारपूर्ण व्याख्या लिखी है।

११९—डा० सुधीरकुमार गुप्त एम० ए० पी० एच० डी०—

डा० मथुरादासजी पहवा की मृत्यु के कारण जो स्थान रिक्त हुआ उस पर डा० सुधीरकुमार गुप्त को सभा के अधिवेशन संख्या ७७ में दिनांक १२ नवम्बर १९७२ को सभासद निर्वाचित किया। डा० गुप्त का जन्म अटाली (हरयाणा) में हुआ। आपने खुर्जा एवं गोरखपुर में संस्कृत प्राध्यापक पद पर कार्य किया। सम्प्रति आप राजस्थान विश्वविद्यालय में संस्कृत विभाग के अध्यक्ष पद पर कार्य कर रहे हैं। डा० गुप्त ने दयानन्द सरस्वती की वेदभाष्य प्रणाली को देन विषय पर राजस्थान विश्वविद्यालय से पी० एच० डी० की उपाधि १९५७ में प्राप्त की। आप सुप्रसिद्ध वैदिक विद्वान्, गवेषक तथा लेखक हैं। सभा की विद्वत् समिति के आप सभासद हैं।

१२०—डा० सत्यदेव आर्य—

श्री विद्या रतन भटनागर के तीन वर्षों तक निरन्तर अनुपस्थित रहने के कारण दिनांक ४ नवम्बर १९७३ के अधिवेशन में डा० सत्यदेव आर्य को सदस्य चुना गया। डा० आर्य का जन्म दिनांक २६. दिसम्बर को जोधपुर में प्रसिद्ध आर्य नेता एवं कार्यकर्ता श्री च्यवनजी आर्य वकील के यहाँ हुआ। आपने सीनियर केम्ब्रिज की परीक्षा उत्तीर्ण करने के अनन्तर एम० बी० बी० एस० (कलकत्ता) तथा डी० पी० एच० (इंगलैण्ड) एवं एफ० आर० आई० पी० एच० एच० (इंगलैण्ड) आदि की उपाधियाँ प्राप्त कीं। तत्पश्चात् जोधपुर राज्य के स्वास्थ्य विभाग में नियुक्त हुये एव राजस्थान की स्वास्थ्य सेवाओं के निदेशक पद से अवकाश ग्रहण किया। १९३१ में आपने आर्य-समाज में प्रवेश किया तथा मेडिकल छात्रावास में आर्यसमाज की स्थापना कर उसके मन्त्री पद पर रहे। सम्प्रति डा० आर्य राजस्थान आर्य प्रतिनिधि सभा के सदस्य तथा आर्य केन्द्रीय सभा जयपुर के प्रधान हैं। उपासना रहस्य शीर्षक एक उत्तम पुस्तक भी आपने लिखी है।

□□

परिशिष्ट १

परोपकारिणी सभा के सभासद—

क्रम संख्या	नाम	स्थान	नियुक्ति तिथि	स्थानापन्न	उपस्थिति
१	महाराणा सज्जनसिंहजी	उदयपुर	२७–२–१८८३		×
२	लाला मूलराज एम० ए०	लाहौर	,,		१०
३	कविराज श्यामलदास	उदयपुर	,,		३
४	लाला रामशरणदास	मेरठ	,,		×
५	पं० मोहनलाल वि० पण्ड्या	उदयपुर	,,		८
६	श्री नाहरसिंहजी वर्मा	शाहपुरा	,,		१०
७	राव तख्तसिंह वर्मा	बेदला (उदयपुर)	,,		×
८	राणा फतहसिंह वर्मा	देलवाड़ा (उदयपुर)	,,		१
९	रावत अर्जुनसिंहजी वर्मा	आसींद (उदयपुर)	,,		२

क्रम संख्या	नाम	स्थान	नियुक्ति तिथि	स्थानापन्न	उपस्थिति
१०	महाराज गर्जसिंह वर्मा	उदयपुर	२७-२-१८८३		×
११	राव बहादुरसिंह वर्मा	मसूदा	"		२
१२	पं० सुन्दरलाल	आगरा	"		२
१३	राजा जयकृष्णदास	मुरादाबाद	"		३
१४	बाबू दुर्गाप्रसाद	फर्रुखाबाद	"		४
१५	लाला जगन्नाथ प्रसाद	"	"		२
१६	सेठ निर्भयराम	"	"		१
१७	लाला कालीचरण रामचरण	"	"		३
१८	बाबू छेदीलाल	मुरार	"		×
१९	लाला सांईदास	लाहौर	"		४
२०	बाबू माधवदास	दानापुर	"		१
२१	पं० गोपालराव हरि देशमुख	बम्बई	"		१
२२	रा० ब० महादेव गोविन्द रानडे	पूना	"		१
२३	पं० श्यामजी कृष्ण वर्मा	आक्सफोर्ड	"		७
२४	कर्नल प्रतापसिंह	जोधपुर	२८-१२-८३	लाला रामशरणदास	×
२५	लाला लालचन्द एम० ए०	लाहौर	२८-१२-८८	कर्नल प्रतापसिंह	१
२६	लाला ईश्वरदास एम० ए०	"	२८-१२-९०	राणा फतहसिंह वर्मा	५

क्रम संख्या	नाम	स्थान	नियुक्ति तिथि	स्थानापन्न	उपस्थिति
२७	लाला हंसराज बी० ए०	लाहौर	२८-१२-९०	सेठ निर्भयराम	५
२८	लाला हरविलास बी० ए०	अजमेर	"	लाला सांईदास	४५
२९	लाल लाजपतराय	हिसार	६-९-९१		२
३०	पं रामदुलारे वाजपेयी	लखनऊ	"		४
३१	ठाकुर मुकुन्दसिंह छलेसर	छलेसर (उ० प्र०)	२८-१२-९३	राव तख्तसिंह बेदला	१
३२	बैरिस्टर रामगोपाल	अजमेर	"	रा० ब० गोपालराव हरि देशमुख	८
३३	लाला पुरुषोत्तम नारायण	फर्रुखाबाद	"	लाला जगन्नाथप्रसाद	२
३४	मुन्शी पद्मचन्द	अजमेर	२८-१२-९६		३
३५	मुन्शी रोशनलाल	प्रयाग	"		७
३६	राव कर्णसिंह बेदला	बेदला (उदयपुर)	"		×
३७	राव विजयसिंह कुनाड़ी	कुनाड़ी (कोटा)	"		×
३८	लाला गौरीशंकर	अजमेर	२८-१२-९६	राव बहादुरसिंह (त्याग पत्र)	१३
३९	म० कु० उम्मेदसिंह	शाहपुरा	२७-११-०६		१८
४०	ठा० कर्णसिंह जोबनेर	जोबनेर	"		१
४१	श्री रामभजदत्त बी० ए०	लाहौर	"		२
४२	श्री मुन्शीराम गुरुकुल (कांगड़ी) (स्वामी श्रद्धानन्दजी)	कांगड़ी	"		८

क्रम संख्या	नाम	स्थान	नियुक्ति तिथि	स्थानापन्न	उपस्थिति
४३	श्री गंगाप्रसाद	मेरठ	२७ -११-०६		१८
४४	श्री भगवानदीन	हरदोई	"		३
४५	लाला रामविलास शारदा	अजमेर	"		९
४६	पं० वंशीधर शर्मा	अजमेर	"		४
४७	पं० विष्णुलाल शर्मा	मेरठ	१२-११-०९	बाबू दुर्गाप्रसाद	१
४८	श्री रणछोड़ दास भवान	बम्बई	२७-१०-१६		१
४९	पं० घासीराम	मेरठ	"		२
५०	ठा० नरेन्द्रसिंह	जोबनेर	"		×
५१	प्रो० रामदेव	कांगड़ी	"		६
५२	श्री साहू छत्रपति	कोल्हापुर	२९-१२-१८	पं० वंशीधर शर्मा	×
५३	श्री गुलराज गोपाल गुप्त	अजमेर	"	पं० विष्णुलाल शर्मा (त्यागपत्र)	८
५४	श्री सयाजीराव गायकवाड़	बड़ौदा	४-३-२३	सर प्रतापसिंह	×
५५	सर राजाराम छत्रपति	कोल्हापुर	"	साहू छत्रपति	×
५६	पं० भगवद्दत्त बी० ए०	लाहौर	"	राव विजयसिंह कुनाड़ी (त्यागपत्र)	८
५७	स्वामी विश्वेश्वरानन्दजी	शिमला	२७-१२-२३	पं० रामभजदत्त	३

क्रम संख्या	नाम	स्थान	नियुक्ति तिथि	स्थानापन्न	उपस्थिति
५८	मास्टर कन्हैयालाल बी० ए०	अजमेर	२४–१२-२५	स्वामी विश्वेश्वरानन्दजी	१६
५९	कुं० घनश्यामदास बिड़ला	कलकत्ता	१४–२–२७	स्वामी श्रद्धानन्दजी	×
६०	म० नारायण स्वामी	दिल्ली	३१–३–२९	लाला लाजपतराय	४
६१	प्रो० सुधाकर एम० ए०	"	२८–१२–३०	श्री ईश्वरदास	३
				३ अनुपस्थिति	
६२	मास्टर आत्माराम	बड़ौदा	"	श्री रणछोड़दास भवान	×
				३ अनुपस्थिति	
६३	श्री घीसूलाल	अजमेर	"	ठा० नरेन्द्रसिंह	२३
				३ अनुपस्थिति	
६४	डा० मानकरण शारदा	"	"	श्री घनश्यामदास बिड़ला	४७
				३ अनुपस्थिति	
६५	श्री मदनमोहन सेठ	बुलन्द शहर	"	लाला पुरुषोत्तम नारायण	२
				३ अनुपस्थिति	
६६	श्री चांदकरण शारदा	अजमेर	२१–३–३२	श्री रामविलास शारदा	२८
६७	राव विजयसिंह मसूदा	मसूदा	२०–३–३३	श्री नाहरसिंह वर्मा	×
६८	राजा दुर्गानारायणसिंह	तिरवाँ	"	श्री रोशनलाल	×
६९	बाबू चुन्नीलाल गुप्त	अजमेर	१–९–३५	पं० घासीराम मेरठ	१०

क्रम संख्या	नाम	स्थान	नियुक्ति तिथि	स्थानापन्न	उपस्थिति
७०	पं० ब्रह्मदत्त जिज्ञासु	लाहौर, वाराणसी	१४–११–३६	श्री गौरीशंकर	२३
७१	पं० आनन्दप्रिय	बड़ौदा	३१–७–३८	मा० आत्मारामजी	२७
७२	रा० ब० डा० मथुरादास मोगा	मोगा	१२–३–३९	महात्मा हंसराजजी	१२
७३	राजा ज्वालाप्रसाद	काशी	"	ठा० विजयसिंह मसूदा	१
७४	बख्शी टेकचन्द	लाहौर	१४–४–४०	आचार्य रामदेव	×
७५	रा० ब० बद्रीदास	जालन्धर	"	बैरिस्टर रामगोपाल	×
				(त्यागपत्र)	
७६	सर राजेन्द्रसिंह	झालावाड़	६–४–४१	राजाराम छत्रपति	×
७७	श्री धर्मचन्द गुप्त	अजमेर	२०–१०–४१	श्री गुलराज गोपाल गुप्त	२७
७८	श्री सुदर्शनदेव शाहपुरा	शाहपुरा	९–११–४२	रा० ब० मूलराज	४
				३ अनुपस्थिति	
७९	महाशय कृष्ण	लाहौर	६–११–४२	श्री सयाजीराव गायकवाड़	१९
८०	लाला नारायणदत्त	दिल्ली	२५–९–४४	राजा ज्वालाप्रसाद	२
८१	महाराज राणा हरिश्चन्द्रजी	झालावाड़	२–३–४६	महाराज राणा राजेन्द्रसिंह	×
८२	श्री विष्णुचन्द्र	अजमेर	"	मा० कन्हैयालालजी	३४

क्रम संख्या	नाम	स्थान	नियुक्ति तिथि	स्थानापन्न	उपस्थिति
८३	प्रो० (ठाकुर) मदनसिंह	अजमेर	"	बाबू चुन्नीलालजी	३४
८४	राजा नारायणलाल पीती	बम्बई	"	राजा दुर्गानारायणसिंह	×
८५	स्वामी स्वतन्त्रानन्दजी	दिल्ली	८-३-४८	म० नारायण स्वामी	३
८६	सर गोकुलचन्द नारंग	दिल्ली	२६-२-४९	प्रो० सुधाकर	×
८७	सेठ नानजी कालिदास मेहता	पोरबन्दर	"	राजा नारायणलाल	×
८८	श्री देशबंधु गुप्त	दिल्ली	७-१-५१	लाला नारायणदत्त	१
८९	श्री चित्तरंजन वर्मा	अजमेर	२४-२-५२	श्री देशबंधु गुप्त	२६
९०	श्री घनश्यामसिंह गुप्त	दुर्ग (म० प्र०)	"	रा० ब० बद्रीदास ३ (अनुपस्थिति)	×
९१	डा० मंगलदेव शास्त्री	वाराणसी	"	सर गोकुलचन्द नारंग ३ अनुपस्थिति	१३
९२	लाला हंसराज गुप्त	दिल्ली	"	बख्शी टेकचन्द ३ अनुपस्थिति	१८
९३	श्री शिवचरणलाल गुप्त	अजमेर	२८-२-५३	श्री सुदर्शनदेवजी (त्यागपत्र)	३

क्रम संख्या	नाम	स्थान	नियुक्ति थिति	स्थानापन्न	उपस्थिति
९४	सेठ प्रतापसिंह शूरजी	बम्बई	२७–२–५४	महाराज राणा हरिश्चन्द्रजी ३ अनुपस्थिति	५
९५	सेठ कृष्णलाल पोद्दार	कलकत्ता	"	श्री मदनमोहन सेठ ३ अनुपस्थिति	×
९६	महात्मा आनन्द स्वामी	दिल्ली	३–४–५५	दी० ब० हरविलास शारदा	६
९७	श्री चरणदास पुरी	दिल्ली	"	श्री उम्मेदसिंहजी	१०
९८	डा० मथुरालाल शर्मा	जयपुर	"	स्वामी स्वतंत्रानन्दजी	६
९९	श्री इन्द्र विद्यावाचस्पति	दिल्ली	३–१२–५५	प्रो० घीसूलालजी	१
१००	स्वामी आत्मानन्द सरस्वती	यमुना नगर	"	सेठ नानजी कालिदास ३ अनुपस्थिति	×
१०१	पं० गंगाप्रसाद उपाध्याय	प्रयाग	"	श्री घनश्यामसिंह गुप्त ३ अनुपस्थिति	×
१०२	श्री घनश्यामसिंह गुप्त	दुर्ग (म० प्र०)	"	श्री शिवचरणलाल गुप्त (त्यागपत्र)	×
१०३	श्री श्रीकरण शारदा	अजमेर	२२–४–५६	श्री गंगाप्रसाद उपाध्याय (त्यागपत्र)	२२
१०४	श्री अमरचन्द ईनाणी	अजमेर	११–११–५८	श्री चांदकरण शारदा	१७

क्रम संख्या	नाम	स्थान	नियुक्ति तिथि	स्थानापन्न	उपस्थिति
१०५	राजाधिराज सुदर्शनदेवजी	शाहपुरा	९–४–५९	स्वामी आत्मानन्दजी	×
				३ अनुपस्थिति	
१०६	श्री कंवरलाल बाफना	जयपुर	९–४–५९	प्रो० इन्द्र विद्या वाचस्पति	१
				३ अनुपस्थिति	
१०७	रावल नरेन्द्रसिंह	जोबनेर	२–४–६१	श्री कंवरलाल बाफना	१
१०८	डा० परमात्मा शरण	दिल्ली	„	श्री घनश्यामसिंह गुप्त	४
				३ अनुपस्थिति	
१०९	डा० राजबहादुर	कोटा	३१–१०–६२	सेठ कृष्णलाल पोद्दार	८
				३ अनुपस्थिति	
११०	श्री वीरेन्द्र एम० ए०	जालन्धर	१७–११–६३	म० कृष्ण	×
१११	पं० उदयवीर शास्त्री	गाजियाबाद	३–१०–६५	पं० ब्रह्मदत्त जिज्ञासु	५
११२	पं० भगवानस्वरूप न्यायभूषण	अजमेर	„	पं० गंगाप्रसादजी	८
				३ अनुपस्थिति	
११३	श्री कें० नरेन्द्र	दिल्ली	२२–१०–६७	रावल नरेन्द्रसिंहजी	१
११४	श्री विद्यारत्न भटनागर	जयपुर	„	श्री धर्मचन्दजी	२
११५	श्री हरिश्चन्द्र वर्मा	कलकत्ता	„	श्री वीरेन्द्रजी	१
				३ अनुपस्थिति	

क्रम संख्या	नाम	स्थान	नियुक्त तिथि	स्थानापन्न	उपस्थिति
११६	प्रो० शेरसिंहजी	दिल्ली	१६–११–६९	पं० भगवद्दत्तजी	१
११७	डा० भवानीलाल भारतीय	अजमेर	८–११–७०	लाला चरणदास पुरी	४
११८	राव नारायणसिंह मसूदा	मसूदा	२४–१०–७१	डा० राजवहादुरजी	×
११९	डा० सुधीरकुमार गुप्त:	जयपुर	१२–११–७२	डा० मथुरालाल मोगा	१
१२०	डा० सत्यदेव आर्य	जयपुर	४–११–७३	श्री विद्यारत्न भटनागर	×

३ अनुपस्थिति

□□

परिशिष्ट २

सभा के अधिवेशनों का विवरण

अधिवेशन संख्या	तिथि	स्थान	उपस्थित सभासदों की संख्या	विशेष
१	२८, २९ दिसम्बर १८८३	मेवाड़ दरबार की कोठी मेयो कालेज, अजमेर	सदस्य-१३ प्रतिनिधि-७	
२	२८, २९ दिसम्बर १८८५	"	सदस्य ५ प्रतिनिधि १४	२० आर्यसमाजों के ३३ प्रतिनिधि भी उपस्थित थे।
३	२८, २९ दिसम्बर १८८७	आर्यसमाज अजमेर	सदस्य ८ प्रतिनिधि ११	४५ आर्यसमाजों के ७९ प्रतिनिधि
४	२८, २९ दिसम्बर १८८८	"	प्रथम दिन ३ सदस्य द्वितीय दिन ५ सदस्य प्रतिनिधि ८	१९ आर्यसमाजों के ३३ प्रतिनिधि

अधिवेशन संख्या	तिथि	स्थान	उपस्थित सभासदों की संख्या	विशेष
५	२८, २९ दिसम्बर १८९०	दयानन्द आश्रम (महाविद्यालय) अजमेर	सदस्य ७ प्रतिनिधि १	३२ आर्यसमाजों के ६५ प्रतिनिधि
६	६, ७, ८ सितम्बर १८९१	”	प्रथम दिन १२ सदस्य द्वितीय दिन १३ ” तृतीय दिन १३ ”	
नैमित्तिक अधिवेशन—				
७	२८, २९ दिसम्बर १८९३	दयानन्द आश्रम अजमेर आर्यसमाज अजमेर	सदस्य ७	
८	२, ६ जनवरी १८९५	अजमेर	प्रथम दिन ३ सदस्य शेष दिनों में ४ ”	
९	२८, २९ दिसम्बर १८९६	वैदिक यंत्रालय अजमेर	सदस्य ९	
१०	२७, २८, २९ दिसम्बर १९०६	श्री मद्दयानन्द आश्रम अजमेर	प्रथम दिन ६ सदस्य द्वितीय दिन ११ सदस्य तृतीय दिन ११ सदस्य	
११	२७, २८ दिसम्बर १९०७	”	प्रथम दिन ४ सदस्य द्वितीय दिन ३ सदस्य	
१२	विवरण उपलब्ध नहीं			

अधिवेशन संख्या	तिथि	स्थान	उपस्थित सभासदों की संख्या	विशेष
१३	विवरण उपलब्ध नहीं			
१४	,,			
१५	१२, १३ नवम्बर १९०९	दिल्ली	सदस्य ७	
१६	२९, ३०, ३१ दिसम्बर १९१०	राजाधिराज शाहपुरे का तम्बू प्रयाग तथा आर्य कैम्प प्रयाग	सदस्य १५	
१७	२७, अक्टूबर १९१६	अजमेर	सदस्य ६	
१८	१५, नवम्बर १९१७	,,	सदस्य ५	
१९	२९, दिसम्बर १९१८	दिल्ली	सदस्य ८	
२०	११, १२ नवम्बर १९२०	दयानन्द आश्रम अजमेर	सदस्य ५	
२१	२५, दिसम्बर १९२१	,,	सदस्य ६	
२२	४ मार्च १९२३	,,	सदस्य ४	
२३	२७, २८, २९ दिसम्बर १९२३	गुरुदत्त भवन लाहौर	प्रथम व द्वितीय दिन सदस्य ७ तृतीय दिन १०	
२४	१, २ अगस्त १९२४	दयानन्द आश्रम, अजमेर	प्रथम दिन ८ द्वितीय दिन ७	

अधिवेशन संख्या	तिथि	स्थान	उपस्थित सभासदों की संख्या	विशेष
२५	६ दिसम्बर १९२४	आर्य समाज चावड़ी बाजार दिल्ली	सदस्य ७	
२६	२४, २५ दिसम्बर १९२५	दयानन्द आश्रम, अजमेर	प्रथम दिन सदस्य ६ द्वितीय दिन ७	
२७	१४, १५ फरवरी १९२७	दीवान निवास दिल्ली	सदस्य ७	
२८	२९, ३० दिसम्बर १९२७	दयानन्द आश्रम, अजमेर	सदस्य ६	
२९	३१ मार्च १९२९	गुरुकुल कांगड़ी	सदस्य ७	
३०	२८, २९ दिसम्बर १९३०	दयानन्द आश्रम, अजमेर	प्रथम दिन ५ द्वितीय दिन ६	
३१	२१, मार्च १९३२	आर्य समाज चावड़ी बाजार दिल्ली	सदस्य ९	
३२	२०, मार्च १९३३	दी० ब० हरविलास शारदा की कोठी नई दिल्ली	सदस्य ८	
३३	विवरण उपलब्ध नहीं			
३४	२९, ३० अप्रैल १९३४	दी० ब० हरविलास शारदा की कोठी अजमेर	सदस्य ५	
३५	१ सितम्बर १९३५	"	सदस्य ४	

अधिवेशन संख्या	तिथि	स्थान	उपस्थित सभासदों की संख्या	विशेष
३६	१४, १५ नवम्बर १९३६	दयानन्द आश्रम, अजमेर	प्रथम दिन सदस्य ७ द्वितीय दिन ८	
विशेष अधिवेशन— (सं. ३६)	१५ दिसम्बर १९३५	अजमेर	सदस्य ७	
विशेष अधिवेशन—				
३७	३१ जुलाई १९३८	दयानन्द अश्रम, अजमेर	सदस्य ८	
३८	विवरण उपलब्ध नहीं			
३९	१२, मार्च १९३९	"	सदस्य ५	
४०	१४, अप्रैल १९४०	"	सदस्य १०	
४१	६ अप्रैल १९४१	हरनिवास अजमेर	सदस्य १०	
४२	२०, अक्टूबर १९४१	दयानन्द आश्रम अजमेर	सदस्य ९	
४३	९, १० नवम्बर १९४२	"	सदस्य ११ द्वितीय दिन १०	
४४	४ मार्च १९४३	प्रो० घीसूलालजी की कोठी अजमेर	सदस्य ६	
४५	२६ जनवरी १९४४	हरनिवास अजमेर	सदस्य ७	
४६	२५, २६, २७ दिसम्बर १९४४	दयानन्द आश्रम अजमेर	सदस्य १६	

अधिवेशन संख्या	तिथि	स्थान	उपस्थित सभासदों की संख्या	विशेष
४७	१ फरवरी १९४५	पीली कोठी अजमेर	सदस्य ६	
४८	२३, मार्च १९४६	हरनिवास अजमेर	सदस्य ७	
४९	१९, २० फरवरी १९४७	"	सदस्य ९ द्वितीय दिन ७	
५०	८, ९ मार्च १९४८	"	सदस्य ११	
५१	२६, २७ फरवरी १९४९	"	सदस्य १२	
५२	२५, २६ फरवरी १९५०	"	सदस्य ९ द्वितीय दिन १०	
विशेष अधिवेशन	९, १० जुलाई १९५०	"	सदस्य ९ द्वितीय दिन ८	
विशेष अधिवेशन	७, ८ जनवरी १९५१	दयानन्द आश्रम अजमेर	सदस्य १३ द्वितीय दिन १२	
५३	३१ मार्च १ अप्रैल १९५१	"	सदस्य ११	
५४	२४, २५ फरवरी १९५२	हरनिवास अजमेर	सदस्य १४ द्वितीय दिन १३	
५५	२८, फरवरी १९५३	दयानन्द आश्रम, अजमेर	सदस्य १३	
५६	२७, २८ फरवरी १९५४	"	सदस्य १२	

अधिवेशन संख्या	तिथि	स्थान	उपस्थित सभासदों की संख्या	विशेष
(असाधारण अधिवेशन)				
५७	१८ दिसम्बर १९५४	दयानन्द आश्रम अजमेर	सदस्य १२	
५८	३ अप्रैल १९५५	"	सदस्य १२	
५९	३, ४ दिसम्बर १९५५	श्री हंसराज गुप्त की कोठी दिल्ली	सदस्य १५	
६०	२२ अप्रैल १९५६	दयानन्द आश्रम अजमेर	सदस्य १२	
६१	२४ मार्च १९५७	"	सदस्य ७	
६२	११ नवम्बर १९५८	सरस्वती भवन अजमेर	सदस्य १२	
६३	९ अप्रैल १९५९	दयानन्द आश्रम अजमेर	सदस्य १२	
६४	२७ मार्च १९६०	दयानन्द आश्रम अजमेर	सदस्य १४	
विशेष अधिवेशन	२३ अक्तूबर १९६१	ऋषि उद्यान अजमेर	सदस्य ११ अन्य आमन्त्रित ४	
६५	२ अप्रैल १९६१	दयानन्द आश्रम अजमेर	सदस्य १०	
६६	१२ नवम्बर १९६१	ऋषि उद्यान अजमेर	सदस्य १०	
६७	३१ नवम्बर १९६२	"	सदस्य ९	
विशेष अधिवेशन	७ अप्रैल १९६३	ला० हंसराज गुप्त की कोठी दिल्ली	सदस्य १६	

अधिवेशन संख्या	तिथि	स्थान	उपस्थित सभासदों की संख्या	विशेष
६८	१७ नवम्बर १९६३	ऋषि उद्यान अजमेर	सदस्य १०	
६९	८ नवम्बर १९६४	"	सदस्य ११	
७०	३ अक्टूबर १९६५	"	सदस्य ८	
७१	२० नवम्बर १९६६	"	सदस्य १३	
७२	२२ अक्टूबर १९६७	ऋषि उद्यान अजमेर	सदस्य १२	
७३	२७ अक्टूबर १९६८	"	सदस्य १५	
नैमित्तिक अधिवेशन				
	२३ मार्च १९६९	दयानन्द आश्रम अजमेर	सदस्य ११	
७४	१६ नवम्बर १९६९	ऋषि उद्यान अजमेर	सदस्य १२	
७५	८ नवम्बर १९७०	"	सदस्य १०	
७६	२४ अक्टूबर १९७१	"	सदस्य ११	
७७	१२ नवम्बर १९७२	"	सदस्य १३	
७८	४ नवम्बर १९७३	"	सदस्य १०	



परिशिष्ट ३

वैदिक यन्त्रालय के प्रबन्धकर्त्ता

(१८८० ई०–१९७४ ई०)

१. मुन्शी बख्तावरसिंह
२. मुन्शी शादीराम
३. पं० दयाराम
४. मुन्शी समर्थदान
५. पं० भीमसेन शर्मा
६. मुन्शी शिवदयालसिंह
७. मुन्शी दरयावसिंह
८. पं० ज्वालादत्त शर्मा (स्थानापन्न)
९. भक्त रैमलदास
१०. पं० यज्ञदत्त शास्त्री
११. पं० भीमसेन शर्मा (द्वितीय बार)
१२. पं० ज्वालादत्त शर्मा (द्वितीय बार)
१३. पं० देवीशंकर नागर
१४. पं० मोतीलाल दलाल
१५. डा० केशवदेव शास्त्री
१६. बाबू ब्रह्मानन्द
१७. पं० भक्तराम
१८. पं० हरिश्चन्द्र त्रिवेदी

१९. श्री मथुराप्रसाद शिवहरे
२०. श्री चांदमल चण्डक
२१. पं० भगवानस्वरूप न्यायभूषण
२२. श्री विश्वदेव शर्मा
२३. पं० भगवानस्वरूप न्यायभूषण (द्वितीय बार)
२४. श्री यतीशचन्द्र मित्तल
२५. श्री जवाहरलालसिंह (कार्यवाहक)
२६. श्री सुरेन्द्रप्रकाश शर्मा
२७. श्री सतीशचन्द्र शुक्ल

□□



परिशिष्ट ४

वैदिक पुस्तकालय से प्रकाशित वेद, वेदांग तथा ऋषि दयानन्द कृत ग्रन्थों के अद्यतन प्रकाशित संस्करण

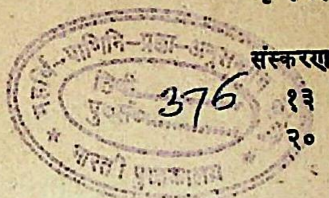
चतुर्वेद संहिता

	संस्करण
१. ऋग्वेद संहिता—	५
२. यजुर्वेद संहिता—	८
३. यजुर्वेद संहिता (गुटका)—	२
४. सामवेद संहिता—	७
५. सामवेद संहिता (गुटका)—	१
६. अथर्ववेद संहिता—	७
ऋषि दयानन्द कृत वेदभाष्य	
७. चतुर्वेद विषय सूची	१
८. ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका	१०
९. ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका (संस्कृत मात्र)	१
१०. ऋग्वेद भाष्य भाग १	४
११. ऋग्वेद भाष्य भाग २	३
१२. ऋग्वेद भाष्य भाग ३	३

		संस्करण
१३.	ऋग्वेद भाष्य भाग ४	३
१४.	ऋग्वेद भाष्य भाग ५	३
१५.	ऋग्वेद भाष्य भाग ६	३
१६.	ऋग्वेद भाष्य भाग ७	३
१७.	ऋग्वेद भाष्य भाग ८	३
१८.	ऋग्वेद भाष्य भाग ९	३
१९.	यजुर्वेद भाष्य भाग १	४
२०.	यजुर्वेद भाष्य भाग २	३
२१.	यजुर्वेद भाष्य भाग ३	३
२२.	यजुर्वेद भाष्य भाग ४	३
२३.	यजुर्वेद भाषाभाष्य भाग १	६
२४.	यजुर्वेद भाषाभाष्य भाग २	५

ऋषि दयानन्द कृत अन्य ग्रन्थ

२५.	सत्यार्थप्रकाश	३५
२६.	संस्कारविधि	२५
२७	पञ्चमहायज्ञ विधि	१६
२८.	गोकरुणानिधि	१७
२९.	स्वमन्तव्यामन्तव्य प्रकाश	१२
३०.	स्वीकार पत्र	६
३१.	आर्य्योद्देश्यरत्नमाला	२०
३२.	आर्य्योद्देश्यरत्नमाला मराठी	२
३३.	आर्य्याभिविनय	१५
३४.	विवाह पद्धति	८
३५.	भ्रमोच्छेदन	६
३६.	भ्रान्तिनिवारण	७
३७.	सत्वधर्म विचार (मेला चाँदापुर)	१३
३८.	शास्त्रार्थ काशी	१३
३९.	शास्त्रार्थ फिरोजाबाद	६
४०.	शिक्षापत्री ध्वान्तनिवारण (स्वामी नारायण मतखण्डन)	५
४१.	वेदविरुद्धमत खण्डन	११
४२.	वेदान्त-ध्वान्तिनिवारण	११



		संस्करण
४३.	संस्कृत वाक्य प्रबोध	१३
४४.	व्यवहारभानु	२०
	वेदांग प्रकाश	
४५.	वर्णोच्चारण शिक्षा	१३
४६.	सन्धिविषय	१०
४७.	नामिक	९
४८.	कारकीय	६
४९.	सामासिक	७
५०.	स्त्रैणताद्धित	६
५१.	अव्ययार्थ	६
५२.	आख्यातिक	६
५३.	सौवर	५
५४.	पारिभाषिक	४
५५.	धातुपाठ	६
५६.	गणपाठ	६
५७.	उणादिकोष	६
५८.	निघण्टु	७
५९.	निरुक्त मूल	६
६०.	अष्टाध्यायी मूल	८
६१.	अष्टाध्यायी भाष्य भाग १	२
६२.	अष्टाध्यायी भाष्य भाग २	१
	ऋषि दयानन्द कृत ग्रन्थों के अनुवाद	
63.	Aryoddeshya Ratna Mala	2
64.	The Beliefs of Swami Dayanand Saraswati	3
65.	Vedant Dhwanti Niwaran	2
66.	Chandapur Fair	1
67.	Vyavahar Bhanu	1
68.	Kashi Shashtrartha	1
69.	Bhramochhedan	1
७०.	उपदेश मंजरी (मराठी)	१

संस्करण

ग्रन्थ लेखकों के ग्रन्थ

दीवान बहादुर हरविलास शारदा कृत

71. Life of Dayanand Saraswati
72. Dayanand Commemoration Volume (edited) 1
73. Swami Dayanand Saraswati and Satyarth Prakash 1
74. Works of Maharishi Dayanand and Paropkarini Sabha 1

डा० भवानीलाल भारतीय कृत

७५. आर्यसमाज के शास्त्रार्थ महारथी १
७६. दयानन्द उवाच १

□□

परिशिष्ट ५



सभा के नवनिर्वाचित सभासद्

१२१. पण्डित प्रकाशवीर शास्त्री, संसद् सदस्य

आर्यसमाज के प्रसिद्ध नेता, विद्वान् एवं विचक्षण राजनैतिज्ञ पण्डित प्रकाशवीरजी शास्त्री की शिक्षा गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर में हुई। वहाँ से आपने शास्त्री तथा विद्याभास्कर की परीक्षायें प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण कीं। आपने संस्कृत विषय लेकर आगरा विश्वविद्यालय से एम. ए. की परीक्षा भी प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की है। आर्य सामाजिक क्षेत्र में शास्त्रीजी अपने छात्र जीवन से ही क्रियाशील रहे हैं। वे सम्प्रति आर्य प्रतिनिधि सभा, उत्तर प्रदेश के प्रधान हैं। गुरुकुल विश्वविद्यालय कांगड़ी के कुलपति, गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर के भूतपूर्व अध्यक्ष, मेरठ विश्वविद्यालय की कार्यकारिणी समिति के भूतपूर्व सदस्य हैं। १९५८ में आप भारतीय संसद् (लोकसभा) के प्रथम बार सदस्य चुने गये। उसके पश्चात् १९६१ व १९६७ में भी निर्दलीय सदस्य के रूप में भारी बहुमत से लोकसभा के सदस्य निर्वाचित हुये। राष्ट्रीय एकता परिषद् के सदस्य पद पर भी आपने कार्य किया। आप निम्न संसदीय समितियों के सदस्य भी रहे। केन्द्रीय हिन्दी परामर्शदात्री समिति, गृह, विधि तथा सूचना एवं प्रसार मंत्रालयों की हिन्दी सलाहकार समिति 'लोक लेखा समिति'। शास्त्रीजी ने यूरोप के जर्मनी, फ्रांस, ग्रेट ब्रिटेन, हालैण्ड, स्विट्जरलैण्ड, नोर्वे, स्वेडन, यूनान, तुर्की, तथा ईरान, अफगानिस्तान, थाइलैण्ड, कम्बोडिया, सिंगापुर, मलयेशिया, ताइवान, इस्राइल, हांगकांग तथा दक्षिण वियतनाम आदि देशों का विस्तृत भ्रमण किया है। आपकी गणना देश के चोटी के प्रभावशाली वक्ताओं में होती है। पं० भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण के निधन के कारण हुये रिक्त स्थान पर आप दि० २०-११-७४ के अधिवेशन में सभासद निर्वाचित हुये।

१२२. लाला रामगोपाल शालवाले

जन्म—अनन्तनाग (काश्मीर), १९०९ ई०

मूल निवासी—अमृतसर, शिक्षा-अनन्तनाग और अमृतसर

१९२७ में दिल्ली आने पर सर्वप्रथम आर्यसमाज फव्वारा के सदस्य बने। उसके मन्त्री और प्रधान पद पर कार्य किया। समाज में सेवक न रखकर सदस्यों द्वारा ही समस्त कार्य किए जाने की परम्परा डाली। स्वयं हैण्डबिल बांटने, पोस्टर चिपकाने और चन्दा आदि लाने का कार्य किया। स्वर्गीय श्री पं० रामचन्द्रजी देहलवी और उनके व्याख्यान मुख्यतम प्रेरणास्रोत थे।

कार्य क्षेत्र विस्तृत हो जाने पर आर्यसमाज दीवान हाल में आए। वर्षों तक इस समाज के मन्त्री व प्रधान रहे। इस समाज को चमकाने और शक्तिशाली बनाने में लाला जी का विशेष योगदान रहा। अब भी उसकी प्रगतियों के मुख्यतम कर्णाधार बने हुए हैं। आर्य समाज दीवान हाल से आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब और सार्वदेशिक सभा में गए। आर्यप्रतिनिधि सभा पंजाब के कई वर्ष तक सदस्य तथा अन्तरंग सदस्य रहे। सार्वदेशिक सभा के सन् १९६३ से अब तक निरन्तर मन्त्री पद पर कार्य करते आ रहे हैं। इससे पूर्व ४ वर्ष तक मन्त्री और ३ वर्ष तक उपमन्त्री रहे। इसके अतिरिक्त दिल्ली की लगभग १५० समाजों से बनी आर्य केन्द्रीय सभा के जन्मदाताओं और संचालकों में उनका अग्रणी स्थान रहा और है।

श्री लाला जी सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधि सभा के अनेक पदों पर लगभग १८ वर्षों से सुशोभित होते आ रहे हैं। आप सन् १९५६ से १९५९ तथा १९६३ से १९७१ तक सार्वदेशिक सभा के मन्त्री पद पर आरूढ़ रहे। सन् १९७१ से १९७४ तक सभा के उप-प्रधान रहे और सन् १९७४ से सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधि सभा के प्रधान पद पर सुशोभित हुए हैं। आर्य जनता ने उनके कन्धों पर जो गुरुत्तर भार डाला है, उसे वहन करने तथा एक नई दिशा देने में वे सतत प्रयत्नशील हैं।

दिनांक २०-११-७४ के अधिवेशन में श्री नारायणसिंहजी मसूदा के निरन्तर तीन वर्ष तक अनुपस्थित रहने के कारण हुये रिक्त स्थान पर आप सभासद् चुने गए।

□□

विशेष निवेदन

376

'परोपकारी' आर्य समाज के प्रवर्त्तक महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा स्थापित परोपकारिणी सभा का मासिक पत्र है। विगत १७ वर्षों से यह आपकी सेवा में निरन्तर प्रकाशित किया जा रहा है। परोपकारिणी सभा को इस पत्र के प्रकाशन में काफी रुपया लगाना पड़ रहा है क्योंकि इसका प्रकाशन व्यावसायिक दृष्टिकोण अपनाकर नहीं किया जा रहा है वरन् इसके प्रकाशन का प्रमुख उद्देश्य वैदिक विचार धारा का प्रचार एवम् प्रसार है। परोपकारी का प्रत्येक अंक आपको लागत से आधे मूल्य पर दिया जा रहा है। इसे आप भी महसूस करते होंगे।

परोपकारी का वार्षिक शुल्क मात्र आठ रुपये है। यदि आप इसके अभी तक ग्राहक न बने हैं तो शीघ्र ग्राहक बनिए। यदि आप इसके ग्राहक हैं, तो अपना बकाया शुल्क शीघ्र ही निम्नलिखित पते पर भिजवाइये ताकि आपको परोपकारी के अंक नियमित रूप से मिलते रहें। इसके अलावा आप परोपकारी में अपने विज्ञापन देकर भी इसे सक्षम बना सकते हैं।

जो महानुभाव अपना बकाया शुल्क एवम् नये ग्राहक अपना शुल्क अप्रेल मास तक भिजवा देंगे उन्हें परोपकारी के आर्य समाज स्थापना शताब्दी के वर्ष में प्रकाशित तीनों विशेषांक भी तुरन्त भिजवा दिये जाएंगे। ये विशेषांक हैं—

१. ऋषि मेला विशेषांक
२. महर्षि दयानन्द आत्मकथा विशेषांक
३. परोपकारिणी सभा का इतिहास

आपसे निवेदन है कि शीघ्र ही आठ रुपये मनिआर्डर द्वारा भिजवा कर इन विशेषांकों को प्राप्त करने में शीघ्रता कीजिये। सीमित प्रतियां ही शेष हैं, इतने कम मूल्य में उत्तम साहित्य प्राप्त करने का यह अवसर मत खोइये।

सम्पर्क:—**परोपकारी**

दयानन्द आश्रम, आर्य समाज मार्ग
अजमेर—305001

ओ३म्

आर्य समाज स्थापना शताब्दी के शुभ

परोपकारिणी सभा के महत्त्वपू

प्रत्येक आर्य के घर में रखने योग्य पुस्तक—

☐ **महर्षि दयानन्द का स्वरचित जीवन चरित्र**

मूल्य लागत मात्र दो रुपया पचास पैसा.

☐ **ऋग्वेद भाष्य दशम मण्डल (प्रथम खण्ड)**

स्वामी ब्रह्ममुनि जी द्वारा दशम मण्डल के १ से ८० सूक्त तक का भाष्य. बढ़िया सुपर कलैण्डर पेपर पर छपे लगभग ७०० पृष्ठों के इस अनुपम ग्रन्थ का मूल्य लागत मात्र ३०) रुपया.

☐ **ऋग्वेद भाषाभाष्य दशम मण्डल (प्रथम खण्ड)**

स्वामी ब्रह्ममुनि जी कृत ऋग्वेद के दशम मण्डल के १ से ८० सूक्तों का हिन्दी भाष्य. सुपर कलैण्डर पेपर पर छपे लगभग ३६० पृष्ठों के इस ग्रन्थ का मूल्य मात्र १५) रुपया.

☐ **परोपकारिणी सभा का इतिहास :**

डॉ० भवानीलाल जी भारतीय कृत. मूल्य चार रुपया मात्र.

३० अप्रेल १९७५ तक अपने आदेश प्रेषित करने वाले आर्य बन्धुओं को इस मूल्य पर १५ प्रतिशत की विशेष छूट एवम् स्वामी ब्रह्ममुनि जी कृत 'अथर्ववेद मुनि भाष्य' की एक प्रति एक रुपये में भेंट की जाएगी. शीघ्र ही अपने आदेश प्रेषित कर लाभ उठाइये.

डाक व्यय पृथक.

सम्पर्क : वैदिक पुस्तकालय, आर्य समाज मार्ग, अजमेर
प्रकाशन विभाग, वैदिक यन्त्रालय, अजमेर

प्रकाशक एवम् संपादक श्री श्रीकरण जी शारदा, मन्त्री, परोपकारिणी सभा, अजमेर एवम् मुद्रक : सतीश चन्द्र शुक्ल, व्यवस्थापक, वैदिक यन्त्रालय अजमेर—३०५००१.